CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

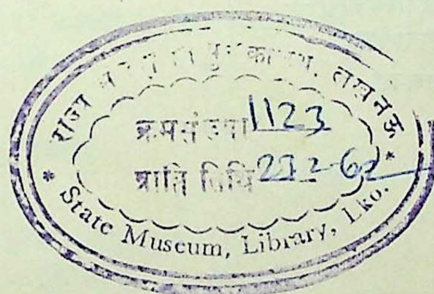
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरब

एक संक्षिप्त इतिहास

फिलिप के. हिट्टी



प्रकाशक

श्री प्रभाकर साहित्यालोक

रानीकटरा — लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रथम संस्करण—दिसंबर, १९६१

मूल्य—आठ रुपया

अनुवादक—
वी० नारायण, एम० ए०
एन० शिकेब नदवी, एम० ए०
मुंशीफ़ाज़िल (पञ्जाब), फाजिलेअदब (लखनऊ)

आवरण-चित्रकार—
आर० के० सैगल

हिन्दी संस्करण के स्वत्वाधिकारी—
श्री प्रभाकर साहित्यालोक,
रानीकटरा, लखनऊ

कम्पोज़—
वर्णमाला टाइप फ़ाउण्ड्री
रानीकटरा, लखनऊ

मुद्रक—
अधिकार प्रेस, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय-सूची

——):*:(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मानचित्रों की सूची



CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशकीय

आज के विज्ञानप्रधान आणविक युग की तुलना में, विगत आरम्भिक और मध्ययुगीन इतिहास का स्वरूप भिन्न था। वह अन्धकार और पराक्रम के युग थे। पृथ्वी छोटे-छोटे भागों में प्रायः भौगोलिक आधार पर बँटी और जब-तब बदलते पराक्रमी पुरुषों द्वारा शासित होती रहती थी। जनता इन निरंकुश शासकों के अधीन, कहीं विवशता के कारण और कहीं उनको ईश्वर का प्रतिनिधि मानकर, नाना सुख-दुःखों को ईश्वर की ही देन समझकर उपभोग करती थी। उन छोटी भूखण्ड-इकाइयों के शासकों का इतिहास उनकी समृद्धि, उन्नति और पतन—यही उस देश का इतिहास माना जाता था।

कभी-कभी इन्हीं भूखण्डों से दुर्दमनीय कोई प्रचण्ड पराक्रमी भी उठता था। वह भयंकर आँधी-तूफान के सदृश, इन दूसरी इकाइयों—देशों, और कभी तो बहुत दूर तक, रौंदता-संहार करता चला जाता था। उस प्रलय में शासक और वहाँ की जनता, उनकी कला और संस्कृति की सारी निधि, सभी कुछ मटियामेट हो जाती थी। इसी प्रकार के घटना-तारतम्य में, शान्तिकाल में सृजन, और प्रलय अर्थात् दूसरों द्वारा आक्रमण के काल में विनाश, इन दोनों के उपरांत एक दूसरे के सम्पर्क से धर्म, भाषा, जाति, रस्म-रेवाज, पहनाव, कला, और साहित्य आदि में परिवर्तन—यह मिलकर उस देश की संस्कृति और सभ्यता का इतिहास होता था।

देश के इतिहास को देशवासी सँजोते और पढ़ते थे; विदेशी भी उसमें रुचि लेते थे। देश की संस्कृति और सभ्यता के इतिहास की सृष्टि तो होती रहती थी, किन्तु उसका अध्ययन यदा-कदा ही होता था। क्यों? इसलिये कि यातायात के साधनों के अभाव के फलस्वरूप प्रत्येक देश दूसरे से प्रथक् और असंबद्ध सा रहता था। अपने क्षेत्र की परिधि में ही सुख-शान्ति काल में उसकी सभ्यता और संस्कृति विकसित होती थी और भले ही उसमें अन्य सभ्यताओं एवं संस्कृतियों का प्रभाव भी मौजूद हो, वे लोग उसे जातीयाभिमान में अपनी ही सृष्टि और बपौती समझते थे। फिर भला एक दूसरे के सांस्कृतिक इतिहास को क्योंकर जानें और कैसे उसमें रुचि लें!

उनकी समुन्नत दशा ही धीरे-धीरे उनमें यह अहम्-भावना उत्पन्न करती थी कि उनकी वह समृद्धि और चमक उनके पूर्वजों के पुरुषार्थ और श्रम की बदौलत नहीं वरन् उनके विशिष्ट रक्त और नस्ल का सुपरिणाम है। इस भावना के आते ही शिथिलता और अनेक नैतिक दुर्बलताओं द्वारा दबोची गई वे ऐश्वर्यवान जातियाँ किसी दूसरी नई, असभ्य और असंस्कृत, अभावग्रस्त, परिश्रमी और प्रचण्ड जाति के हाथों अपने स्वाभाविक परिणाम 'विनाश' को प्राप्त होती थीं। फिर ये नवागत, विजित जाति के कला-साहित्य और सम्पत्ति से चकित तथा प्रलुब्ध होकर, उनको अपना जामा पहना कर, अपनी चीज

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समझ कर स्वयं भी समुन्नत होने लगते थे। इसी प्रकार से संस्कृति एवं सभ्यताओं के उदय-अस्त का क्रम अज्ञात काल से चला आ रहा है। अनेक के नाम और विवरण ज्ञात हैं। अनेक का इतिहास भूगर्भ में छिपा है। सुतरां 'इतिहास' के अर्थ नरेशों के जीवन-मरण और उनकी कीर्ति-अपकीर्ति में ही सीमित था।

किन्तु आज वह बात नहीं। सारी दुनिया का चित्र हस्तामलक है। यातायात और विविध वैज्ञानिक आविष्कारों ने प्रत्येक जल-स्थल को संयुक्त सा कर दिया है। एक सम्पन्न राष्ट्र की उदारता से अनेक पिछड़े हुये सुदूर देश भी समृद्धि को प्राप्त कर रहे हैं। एक स्थल पर लगी चिनगारी भी सारे विश्व के संहार का कारण बन सकती है। पृथ्वी को छोड़, दूसरे ग्रहों पर अभियान हो रहे हैं। व्यक्तियों के इतिहास भूल रहे हैं; जातियों—जनसमूहों के इतिहास की चरचा है। एक विश्व-सरकार की योजना को सफल बनाने में लोग लगे हैं। और इस लिये अब विविध नई और पुरानी सभ्यताओं का अध्ययन जोरों पर है। पश्चिम में पूर्व और पूर्व में पश्चिम सर्वत्र घुला-मिला दिखाई दे रहा है।

ऐसी स्थिति में, अरब का इतिहास, जिसका अतीत और वर्तमान दोनो ही गौरव-मय हैं, प्रमुख अध्ययन की वस्तु है। उस प्रदेश में बाबुली-सुमेरी सभ्यताएँ और आद, समूद, फिर्औन जैसी महान ऐश्वर्यवान जातियों की संस्कृतियाँ फली-फूली हैं। पश्चात् आर्यों की पूर्वी और पश्चिमी दोनो ही धाराओं से उनके परस्पर आदान-प्रदान होते रहे हैं। आज भी अरब के तेल के विपुल भण्डार, पूर्व-पश्चिम के मध्य-मार्ग में उसकी स्थिति, तथा उसके राजनीतिक और सामरिक महत्व ने उसकी ओर सबकी निगाहों को आकर्षित कर दिया है।

फलतः प्रोफ़ेसर पी० के० हिट्टी का "अरब—एक संक्षिप्त इतिहास" नामक यह अनुवाद हिन्दी-जगत के सम्मुख प्रस्तुत है। प्रोफेसर हिट्टी का जन्मस्थान लेबनान, और अध्ययन-क्षेत्र बेरूत (ईराक) तथा कोलम्बिया विश्वविद्यालय रहा है। अब ये अमेरिका के नागरिक हैं, और वहाँ के प्रमुख विश्वविद्यालयों तथा शिक्षण-केन्द्रों में सामी भाषा एवं सभ्यता के ख्यातिवान प्रोफेसर रहे हैं। 'सीरिया और लेबनान का इतिहास', 'लेबनान और फिलिस्तीन का इतिहास' और 'सीरिया का संक्षिप्त इतिहास', प्रस्तुत पुस्तक के अलावा, उनके प्रमुख ग्रंथ हैं। हिट्टी महोदय ने एक सच्चे इतिहासकार की भाँति निरपेक्ष भाव से अरब भूखण्ड की, इस्लाम से पूर्व और पश्चात् की झाँकी खींची है। उनका वर्णन तर्कपूर्ण, विवेचन और विश्लेषणयुक्त है। अरब-इतिहास पर उनकी सर्वाधिक मान्य इस पुस्तक के अनुवाद से न केवल हम, वरन् हिन्दी-जगत हिट्टी महोदय का आभारी है। विश्व के यशस्वी प्रकाशक श्री मैक्मिलन एण्ड कम्पनी, लन्दन से हिन्दी अनुवाद की स्वीकृति-प्राप्ति के हेतु हम उनके भी अति कृतज्ञ हैं।

——:※:——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ चुने हुये प्रश्न

[अध्ययन के समय, विद्यार्थी इन प्रश्नों को ध्यान में रखें]

१—बद्दू अरबों की उन मुख्य विशेषताओं तथा सामाजिक संगठन का वर्णन कीजिए जो उनके निवास-स्थान की भौगोलिक-व प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण उत्पन्न हुई थीं। २—अरबों को सामियों (Semites) का मुख्य प्रतिनिधि और अरब देश को सामी (Semitic) जाति का केन्द्र क्यों माना जाता है, स्पष्ट कीजिये। ३—सातवीं तथा आठवीं शताब्दी ईस्वी में अरबों के अन्य देशों में शीघ्रता से फैल जाने के कौन-कौन से मुख्य कारण थे ? ४—उमैय्यद (अमवी वंश के लोग) अरब पहले थे, मुसलमान बाद में, सम्राट् पहले थे खलीफा बाद में, इस कथन की पुष्टि शुरू के उमय्यदं सम्राटों के चरित्र के अध्ययन से किस प्रकार होती है; सिद्ध कीजिये। ५—"जो सभ्यता 'अरब सभ्यता' कहलाती है वह केवल अरब देश की नहीं है" इस कथन की व्याख्या और पुष्टि कीजिये। ६—"इस्लामी राज्य की नींव हजरत मुहम्मद ने डाली, हजरत अबूबक्र ने उसका संगठन किया और हजरत उमर ने उसका विस्तार कर उसकीउन्नति की" इस कथन को घटनाक्रम से सिद्ध कीजिये। ७—"शुरू में इस्लाम एक साधारण धर्म था, फिर वह एक साम्राज्य के रूप में समुन्नत हुआ तथा अंत में वह एक संस्कृति के रूप में फैला।" इस कथन की पुष्टि स्पेन में प्रसारित मुस्लिम संस्कृति के आधार पर कीजिये। ८—विभिन्न केन्द्रों में, इस्लामी कला एवं विज्ञान की जो उन्नति हुई थी, उसकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिऐ। ९—"अरब देश को, सारी दुनिया को जीतने से पहले, अपने आपको जीतना पड़ा।" कब और कैसे ? १०—इस्लाम के प्रसार के पूर्व, अरबों के धार्मिक आचार का संक्षिप्त रूप से वर्णन कीजिए। ११— इस्लाम के प्रभाव से अरब-समाज में जो परिवर्तन आये, उनका वर्णन कीजिये। १२—इस्लाम धर्म के उदय तथा इसके प्रवर्तक (Prophet) की शिक्षाओं का संक्षिप्त रूप से वर्णन कीजिए। १३—प्रमुख खलीफाओं के समय में इस्लाम का जो विकास हुआ, उसका विस्तृत रूपसे वर्णन कीजिए। १४—उमैयद-काल में ललित कला तथा स्थापत्य कला Architechture का जो विकास हुआ, उसका विशद विवेचन कीजिए। १५—अब्बासी काल में विज्ञान और साहित्य की जो उन्नति हुई उसका संक्षिप्त वर्णन कीजिए। इस उन्नति में अरबों के अतिरिक्त और किन-किन जातियों का योग था ? १६—संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :—(क)उमर का विधान, (ख) बगदाद—अब्बासियों की राजधानी, (ग) फातिमी-काल का काहिरा, (घ) क्रूसेड्स (धर्म-युद्ध-सलीबी युद्ध), (च) सिसिली की अरब-नार्मन संस्कृति, (छ) स्पेन पर अरबों की विजय,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ज) सलाहुद्दीन, (झ) बेबर्स, (ट) ममलूकवंश, (ठ) उमर की राजनीति, (ड) उमर बिन आस, (ढ) हारूँ-अल-रशीद तथा बरमकी (Bermecids) वंश, (ण) कर्त्तबा (Cordova) के अब्दुर्रहमान तृतीय (अल-नासिर), (त) काहिरा (Cairo) के फातिमी (Fatimids), (थ) अमीर मुआविया, एक अरब-सम्राट् की हैसियत से, (द) हज्जाज बिन यूसुफ, (ध) खालिद बिन वलीद, (न) तारिक, (प) अरब-असबियत की भावना (अरब होने का अहंभाव), (फ) मक्का, (ब) दमिश्क, (भ) शेख, (म) इस्लाम के प्रवर्त्तक की हिजरत (Migration), (य) मिराज, (र) काबा, (ल) दमिश्क में वलीद की मस्जिद, (व) काहिरा का अलअजहर विश्वविद्यालय, (श) बर्मकी वंश, (ष) अल्फलैला(The Arabian Nights)। १७—खिलाफत से आप क्या समझते हैं ? इस्लाम के उदय-काल में खलीफा के महत्व तथा अधिकारों का वर्णन कीजिये १८—उमय्यद (अमवी) शासकों की राजनीति का विवरण दीजिये, विशेषतः गैर-मुसलमानों तथा गैर-अरबों के प्रति इन के व्यवहार का वर्णन कीजिये। १९—अब्बासी खिलाफत की स्थापना के फलस्वरूप कौन-कौन से सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्त्तन हुये ? और इन परिवर्त्तनों के क्या कारण थे, स्पष्ट रूप से उल्लेख कीजिये। २०—हारूँ-अल-रशीद और उसके उत्तराधिकारियों के समय बगदाद की सांस्कृतिक उन्नति पर टिप्पणी लिखिये। २१—इस्लामी-काल में मुस्लिम कला तथा विज्ञान के विकास का वर्णन कीजिये। २२—खगोल-विज्ञान (Astronomy) तथा स्थापत्य (Architecture) के क्षेत्र में अरबों की देन का विवेचन कीजिये। २३—योरप की संस्कृति व सभ्यता के अभ्युदय में मुस्लिम स्पेन का क्या हाथ है ? उल्लेख कीजिये। २४—इस्लाम के पैगम्बर का एक शासक व राजनीतिज्ञ के रूप में विवेचन कीजिये। २५—'जिम्मी' से आप क्या अर्थ समझते हैं। रूढ़िवादी खलीफाओं (Orthodox Caliphs) के काल में जिम्मियों को क्या अधिकार प्राप्त थे। २६—प्रारंभिक अब्बासी-काल को इस्लाम का स्वर्णकाल क्यों कहा जाता है ? २७—योरप में इस्लामी संस्कृति के केन्द्र के रूप में कार्डोवा (कर्त्तबा) के महत्व का भली-भाँति विवेचन कीजिये। २८—अब्बासी-काल में संस्कृत तथा अन्य भाषाओं के कुछ मुख्य ग्रंथों के नाम बताइये जो अरबी में अनूदित हुये। उनका तथा उनके अनुवादकों का संक्षिप्त विवरण दीजिये। २९—मुसलमानों के इबादत या धार्मिक आचार के आधार, तथाकथित पाँच अनिवार्य स्तम्भों का उल्लेख कीजिये और यह भी स्पष्ट कीजिये कि बाद के इस्लामी समाज में किस स्तंभ पर कितना अमल किया जाता रहा। ३०—अरबी सभ्यता को सीधे अथवा किन माध्यमों के द्वारा साहित्य, कला और विज्ञान के क्षेत्र में भारत की देन रही है ? वर्णन कीजिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरब

(एक संक्षिप्त इतिहास)

१—अरब और मुसलमान

हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु को १०० वर्ष भी न होने पाये थे कि उनके अनुयायी एक इतने लम्बे चौड़े साम्राज्य के स्वामी बन गये जो रूम-निवासियों को उनकी चरम सीमा के समय भी उपलब्ध न था। इस साम्राज्य की सीमा एक ओर बिस्के की खाड़ी से लेकर सिन्ध नदी और चीन की सीमाओं तक फैली हुई थी तो दूसरी ओर अरल सागर तथा नीलनदी के उत्तरी झरने उसकी सीमा में सम्मिलित थे। पैगम्बर-पद पर आसीन अरब-सन्तान मुहम्मद का नाम, सर्वशक्तिमान् ईश्वर (अल्लाह) के नाम के साथ प्रति दिन पाँच बार उन सैकड़ों-हजारों मस्जिदों की ऊँची मीनारों से पुकारा जा रहा था जो दक्षिणी यूरोप और उत्तरी अफ्रीका से लेकर पश्चिमी और मध्यएशिया तक फैली हुई थीं। अपने इस अद्वितीय विस्तार के समय अरब के मुसलमानों ने अपने धार्मिक विश्वास, बात-चीत के ढंग, और शारीरिक आकार की ओर दूसरी जातियों के लोगों को जितना आकर्षित कर लिया था, उतना संसार की कोई अन्य जाति चाहे वह यूनानी हो या रूमी, ऐंग्लो-सैक्सन हों या रूसी, नहीं कर सकी थी।

बेबीलोन, असीरिया, कलदान, अरमानिया, फोनेशीया इन सभी के पूर्वज अरब प्रायद्वीप में ही जन्मे और वहीं बढ़े तथा पले थे किन्तु आज उनका कहीं पता नहीं है। लेकिन अरब पहले भी मौजूद थे और अब भी शेष हैं। पूर्व की भाँति आज भी व्यापारिक ससार के सब से बड़े विस्तृत मार्ग के आस-पास अरबों का अस्तित्व शेष है। प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अरबों को अपनी वंश-परम्परा का अधिक आभास हुआ। मिस्र एक सार्वभौम, स्वतंत्र राज्य बन चुका है। ईराक ने सन् १९५८ ई० में अपनी पुरानी राजधानी बगदाद में एक बादशाह को गद्दी पर बैठा दिया है। आधुनिक अरब के बलवान अमीर इब्न-सऊद ने स्वयं एक सुदृढ़ राज्य की स्थापना कर ली है, जिसमें अरब के मध्य और उत्तरी-पश्चिमी भाग सम्मिलित हैं। लिबनान प्रथम अरबी बोलनेवाली रियासत है जिसने अपने को गणतंत्र घोषित कर दिया है। लीबिया उत्तरी अफ्रीका का वह प्रथम देश है जिसने अपने आप को लैटिन शासन से स्वतंत्र कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिया। 'उन्क़ा' नाम की अरब की राष्ट्रीय चिड़िया फिर उड़ रही है। इसके पंखों की शक्ति पुनः प्रकट हो रही है।

इस्लाम धर्म जिसकी नींव मुहम्मद साहब ने डाली थी, उसमें आज ४२ करोड़ से अधिक लोग सम्मिलित हैं जिनमें सभी जातियों का प्रतिनिधित्व है। ये लोग मुसलमान हैं और 'मुहमडन' की अपेक्षा अपने को मुसलमान ही कहलाना पसन्द करते हैं। संसार के प्रत्येक सात आदमियों में से एक आदमी मुहम्मद साहब का अनुयायी अर्थात् मुसलमान है। और दिन के चौबीस घंटों में से कोई घड़ी ऐसी नहीं बीतती जब कि संसार के ग्लोब के किसी न किसी कोने में मुसलमानों की अजान की आवाज न गूँज रही हो।

अरबों ने एक बहुत बड़े साम्राज्य की ही स्थापना नहीं की थी, अपितु एक बहुत बड़ी सभ्यता की भी नींव डाली थी। इस सभ्यता के निर्माण में उन्होंने अपनी उस प्राचीन पैतृक सभ्यता से ही लाभ नहीं उठाया था जो किसी समय दजला और फरात नदियों के तटों, नील नदी के मैदानों और रूमसागर के पूर्वी तटों पर विकसित हुई थी; अपितु उन्होंने यूनान एवं रोम की सभ्यता की अच्छी बातों को भी अपनी सभ्यता में मिला लिया था। आगे चल कर ये ही मुसलमान मध्ययुगीन यूरोप में अपने उन बौद्धिक प्रभावों का प्रसार करने का माध्यम बने जिसने पश्चिमी जगत् को जाग्रत कर आधुनिक पुनरुत्थान के मार्ग पर अग्रसारित कर दिया।

मध्ययुग के आरम्भ में किसी जाति ने मानवता की अच्छाई और भलाई के लिए वैसे कार्य नहीं किये जैसा कि अरबों ने किया। यहाँ पर अरबों से हमारा तात्पर्य संसार की समस्त अरबी बोलने वाली जनता से है। इसमें अरब प्रायद्वीप के निवासी भी सम्मिलित हैं। जिस समय अरब-विद्वान, अरस्तू का अध्ययन कर रहे थे, उस समय शार्लेमैन * और उसके दरबारी अमीर अपना नाम लिखना सीख रहे थे। केवल एक शहर कर्त्तबा † में ही सत्रह बड़े-बड़े पुस्तकालय थे। उनमें से केवल एक ही पुस्तकालय में चार लाख से अधिक पुस्तकें थीं। उस समय जब आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के विद्वान नहाने को एक बहुत बुरी प्रथा समझते थे, कर्त्तबा के मुसलमान वैज्ञानिक सुखद स्नानागारों के आनन्द का अनुभव कर रहे थे।

अरबों की कहानी हमारे लिए, और भी महत्त्वपूर्ण है कि इसके गर्भ में संसार के तीसरे और सबसे नये एकेश्वरवाद धर्म की गाथा छिपी हुई है। यहूदी और ईसाई धर्म का इससे घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इस्लाम इन्हीं दोनो से अंकुरित हुआ है और संसार के समस्त धर्मों में यही धर्म उनका सबसे अधिक नजदीकी है। ये तीनो धर्म एक ही आध्यात्मिक अर्थात सामी जीवन ‡ के स्रोत हैं।

* Charlemagne † Cordova ‡ Semitic life

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

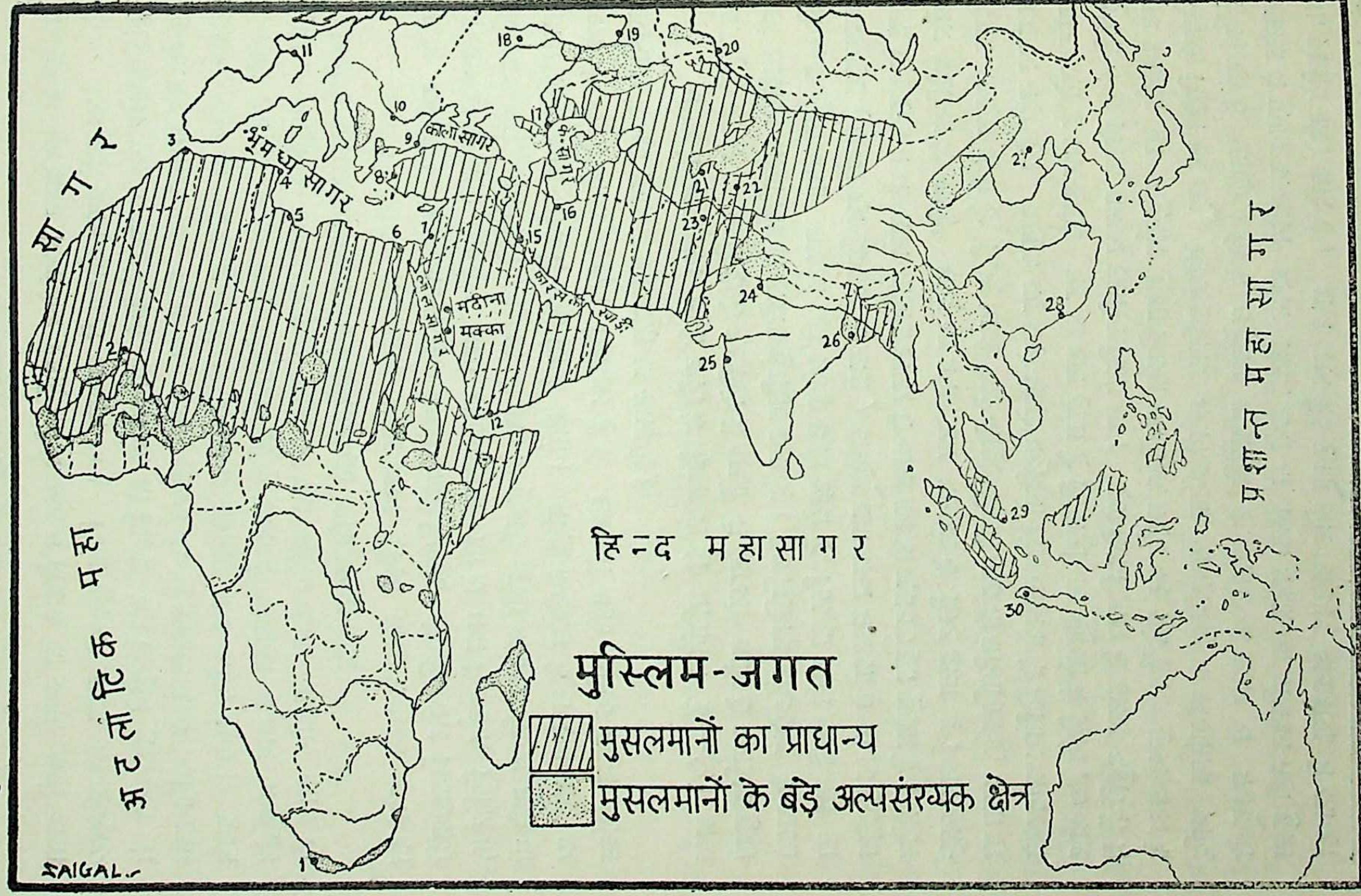
एक सच्चा मुसलमान निस्संकोच ईसाई धर्म के बहुत से नियमों का पालन करने वाला है। अरब कहीं सफल और कहीं असफल रहे। किन्तु मुहम्मद साहब की एकेश्वर-वादिता सदैव उन मुगल-तुर्क जैसी जातियों पर भी विजयी रही जिन्होंने युद्ध-स्थल में अरबों को पराजित कर दिया था। सन् १९४७ ई० में पाकिस्तान के शक्तिशाली मुस्लिम राज्य का उदय हुआ जिसकी जनसंख्या लगभग सात करोड़ होगी। इसके अनन्तर सन् १९४९ ई० में इण्डोनेशिया का भी इतनी ही जनसंख्या के साथ प्रादुर्भाव हुआ। आधुनिक जगत में इस्लाम पहले भी एक जीवित शक्ति था और आज भी मोरक्को से लेकर इण्डोनेशिया तक करोड़ों आदमी उसके अनुयायी हैं।

आज भी लगभग आठ करोड़ व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अरबी भाषा का प्रयोग करते हैं। कई शतियों तक अरबी पढ़ने-लिखने, संस्कृति और विकासवादी विचाराधारा की भाषा रही है। नवीं और बारहवीं शती के मध्य में दर्शन, चिकित्सा, इतिहास, धर्म, ज्योतिष और भूगोल की जितनी पुस्तकें अरबी भाषा में लिखी गयी थीं उतनी किसी अन्य भाषा में नहीं लिखी गयीं। पश्चिमी योरोप के शब्द-भण्डार पर आज भी अरबी भाषा की छाप विद्यमान है। संसार में सबसे अधिक प्रयुक्त लैटिन वर्णमाला के बाद इसी की वर्णमाला का स्थान है।

संसार में इस समय सामी जाति के केवल दो ही प्रतिनिधि हैं—(१) अरब और (२) यहूदी। यहूदियों के मुकाबिले में अरबों ने अपनी जाति के मानसिक गुणों एवं शारीरिक आकृतियों को अधिक सुरक्षित रखा है। साहित्यिक दृष्टिकोण से अरबों की भाषा दूसरी सामी भाषाओं की अपेक्षा सबसे छोटी है, फिर भी उसने अपने मूल की अच्छाइयों (शब्दों एवं क्रियाओं के रूपों) को हेब्रू तथा अन्य भाषाओं से अधिक सुरक्षित रखा है। इस्लाम भी अपने मौलिक स्वरूप में सामी धर्म की एक तर्कयुक्त पूर्णता है। योरोप और अमेरिका में 'सामी' शब्द का प्रयोग उन वस्तुओं के लिए होता है जिनपर यहूदियत की छाप होती है, किन्तु 'सामी चेहरे-मोहरे' जिसमें नाक भी सम्मिलित है, इतना ही सामीपन नहीं है। वस्तुतः यह चेहरे-मोहरे यहूदियों और सामियों के मौलिक अन्तर को प्रकट करते हैं और इसीसे यह भी ज्ञात होता है कि प्रारम्भिक हेब्रुओं ने हित्तियों* और हूरियों † से विवाह सम्बन्ध स्थापित किया था। इसी मेल-मिलाप के कारण यहूदियों में उस आकृति का प्रादुर्भाव हुआ जिसका हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। मुख्य अरब के निवासी विशेष कर बद्दू, जीववैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, भाषावैज्ञानिक आदि दृष्टिकोणों से 'सामी' जाति के सर्वोत्तम प्रतिनिधि हैं क्योंकि वे संसार से पृथक् हो एकान्त में एक मरुस्थलीय जीवन, जिसमें कभी भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ था, व्यतीत करते आये हैं। मध्य अरब जैसे पृथक् और कष्टप्रद वातावरण में रक्त की

* hittite—† hurrians

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.



CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सामने पृष्ठ पर मानचित्र में दिये हुए अंकों के अनुसार नगरों की सूची:—

१ केपटाउन	[Cape Town]
२ टिम्बक्टू	[Timbektu]
३ टेंजियर	[Tangier]
४ ट्यूनिस	[Tunis]
५ त्रिपोली	[Tripoli]
६ कैरो	[Cairo]
७ जेरुसलम	[Jerushlem]
८ स्मैर्ना	[Smyrna]
९ इस्तंबूल	[Istambool]
१० बेलग्रेड	[Belgrad]
११ टूर्स	[Towrs]
१२ अदन	[Aden]
१३ मदीना	[Medina]
१४ मक्का	[Mekka]
१५ बगदाद	[Baghdad]
१६ तेहरान	[Tehran]
१७ अस्ट्राखान	[Astrakhan]
१८ मास्को	[Mascow]
१९ पेरम	[Perm]
२० ओमस्क	[Omsk]
२१ ताशकंद	[Tashkent]
२२ काशगर	[Kashghar]
२३ काबुल	[Kabul]
२४ दिल्ली	[Delhi]
२५ बम्बई	[Bombay]
२६ कलकत्ता	[Calcutta]
२७ पेकिंग	[Peking]
२८ कैण्टन	[Canton]
२९ सिंगापुर	[Singapore]
३० बटाविया	[Batavia]

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विशुद्धता ही प्रकृति की सबसे बड़ी देन है। अरब का प्रायद्वीप, भूमि और आबादी के मध्य एक ऐसे अटूट सम्बन्ध की स्थापना करता है जिसका उदाहरण संसार के इतिहास में अप्राप्य है। इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है कि अरब भूमि पर बाहरी लोग बार-बार आक्रमण कर वहाँ बस गये हों और लड़-भिड़ कर एक दूसरे को निकाल दिये हों, जैसा कि भारत, यूनान, इटली, इंगलैण्ड और अमेरिका में हो चुका है। संसार किसी ऐसे आक्रमणकारी के नाम को नहीं जानता जो अरब देश में घुस आया हो और वहाँ अपना अधिकार जमाने में सफल रहा हो। लगभग समस्त ऐतिहासिक काल में अरबों और विशेष कर बद्दुओं का रहन-सहन एक ही सा रहा है। उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन कभी भी नहीं हुआ है। वह देश केवल अरब ही है जहाँ सामियों के पूर्वज—बेबीलोन, असीरिया, कलदान, अरमानिया, फोनेशिया, अरब और हबश के निवासी—पैदा हुए थे और किसी समय इसी देश में उन्होंने एक जाति की भाँति जीवन व्यतीत किया था।

यदि अरब, सामी लोगों का मूल निवास-स्थान था तो द्वितीया के चन्द्रमा के आकार की उर्वर भूमि जो फारस की खाड़ी से सनाई तक फैली हुई है, और जिसमें ईराक़, सीरिया, लिबनान और पैलस्टाइन भी सम्मिलित हैं, उनकी प्रारम्भिक सभ्यता का क्षेत्र रही होगी। ३५०० ई० पू० सामी लोग अपना देश छोड़ कर फ़रात नदी की घाटी में जा बसे। वहाँ पर बेबीलोन की सभ्यता का विकास हुआ। इसी सभ्यता से हमको नाप-तौल की एक पद्धति प्राप्त हुई और इसी से हमको समय-मापक-पद्धति* भी मिली। २५०० ई० पू० के लगभग अमूरी † लोग उत्तरी सीरिया गये। उनमें से कन-आनियों का एक दल जिसे यूनानी, फोनेशिन कहते थे, लिबनान के तट पर जा बसा। यही लोग सबसे पहले के नई बस्ती बसाने वाले और विश्व में व्यापार करने वाले थे। वर्णमाला उनकी देन है जिससे यह बात भली-भाँति सिद्ध हो जाती है कि उनकी गणना उन महान् व्यक्तियों में है जिन्होंने मानवता को सबसे अधिक लाभान्वित किया है।

मुसलमान अरब, द्वितीया के चन्द्रमा के आकार की उर्वर भूमि को जीत कर पूर्ववर्ती सामियों के उत्तराधिकारी बन गये। उन्होंने दक्षिणी-अरब-सभ्यता को भी उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त किया जो इस्लाम से १००० वर्ष पूर्व विकसित थी। सबा की महारानी जिसका वर्णन बाइबिल में हुआ है, दक्षिणी-अरब जाति की है।

---

*Sexagesimal System समय के साठवें भाग को साठवें भाग में नापने की पद्धति † Amorites

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२—मूल अरब (बद्दू)

यद्यपि इस पुस्तक में, हमारा सम्बन्ध उन समस्त अरबी भाषा-भाषी जातियों से है जो केवल अरब में ही नहीं, अपितु अन्य देशों— सीरिया, लेबनान, फिलिस्तीन, जार्डन, ईराक, ईरान, मिश्र, उत्तरी अफ्रीका, मध्यकालीन सिसिली और स्पेन—में भी निवास करती हैं, फिर भी यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सर्वप्रथम मूल अरबों अर्थात् बद्दुओं के जीवन पर प्रकाश डाला जाय। बद्दू उन हब्शियों की तरह नहीं होते जो निरुद्देश्य इधर-उधर मारे-मारे फिरा करते हैं। ये लोग मरुस्थलीय जीवन को मानवीय जीवन के अनुकूल बनाने में सर्वाधिक सफल हुए हैं। जहाँ कहीं भी घास उगती है, वहाँ बद्दू चरागाह की खोज में पहुँच जाते हैं। नुफ़ूद में खानाबदोशी वैसा ही वैज्ञानिक जीवन है जैसा कि डेट्रियाट (अमेरिका) अथवा मानचेस्टर में व्यावसायिक जीवन है। एक अमैत्रीपूर्ण वातावरण के साथ यह उनका उचित एवं निस्पृह अभियोजन (Adjustment) है, क्योंकि निवास करने के योग्य एक भूखण्ड के अतिरिक्त जो समुद्र-के किनारे-किनारे चला गया है; अरब का सम्पूर्ण देश मरुस्थल है। अरब अपने देश को द्वीप कहते हैं। किन्तु तथ्य तो यह है कि अरब एक ऐसा द्वीप है जिसके तीन ओर जल और एक ओर रेत है।

अरब देश संसार का सबसे बड़ा प्रायद्वीप है, किन्तु इतना विस्तृत देश होने पर भी इसकी कुल जनसंख्या सत्तर और अस्सी लाख से अधिक नहीं है। भूगर्भ-शास्त्र-वेत्ताओं का यह कथन है कि किसी समय अरब की भूमि, सहारा (जिसे अब नील नदी की घाटी और लालसागर ने प्रथक कर दिया है) और उस मरुस्थलीय उजाड़-खण्ड का एक प्राकृतिक भाग थी, जो एशिया में मध्य ईरान से लेकर गोबी के रेगिस्तान तक फैला हुआ था। अरब संसार का सबसे उष्ण और शुष्क देश है। यद्यपि यह पूर्व और पश्चिम में दो समुद्रों से घिरा हुआ है, किन्तु जल के ये भाग इतने छोटे और संकुचित हैं कि ये अफ्रीका और एशिया की निर्जल भूमि की एकसी शुष्क जलवायु को किसी प्रकार प्रभावित नहीं करते हैं। इसके दक्षिण में जो समुद्र है उससे वर्षा अवश्य हो जाती है किन्तु इस मानसून (जो एक अरबी शब्द है) से देश के भीतरी भाग में बहुत कम वर्षा होती है। अब यह बात सुविधापूर्वक समझ में आ जायगी कि सुखद एवं आनन्दप्रद पूर्वी हवाएँ क्यों अरब कवियों की कविता का प्रिय विषय बनी रही हैं।

बद्दू लोग अब भी अपने पूर्वजों की भाँति भेड़ों और ऊँटों के बालों से बने हुए खेमों में रहते हैं। अपने जानवरों को इन्हीं पुरानी चरागाहों मे चराते हैं। ऊँटों और भेड़ों को पालने के अतिरिक्त बद्दुओं के प्रिय पेशों में घोड़ों का पालन-पोषण, शिकार और लूट-मार भी सम्मिलित है। वे खेती और हर तरह के व्यापार एवं हस्तकला को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझते हैं। वास्तविकता तो यह है कि अरब में कृषि-योग्य भूमि बहुत ही कम है। यहाँ गेहूँ भी बहुत कम पैदा होता है। इसीलिए 'रोटी' अरबों के लिए एक ऐश्वर्य की वस्तु है। वहाँ वृक्ष बहुत कम होते हैं। केवल खजूर और वह झाड़ी जिससे दक्षिणी अरब की प्रसिद्ध 'काफी' प्राप्त होती है (जिसका प्रचलन केवल चौदहवीं शती से आरम्भ हुआ), अंगूर की लताएँ और नखलिस्तानों में कुछ तरह के मेवे, बादाम, गन्ना, और तरबूज भी पैदा होते हैं। लोबान (धूप) जिसको दक्षिणी अरब के प्रारम्भिक व्यापारिक जीवन में बड़ा महत्व प्राप्त था, अब भी फूलता-फलता दृष्टिगोचर होता है।

अरब देश का जीवन कष्टप्रद है, क्योंकि वहाँ की वायु शुष्क और भूमि लवण-युक्त है। सम्पूर्ण देश में कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण नदी नहीं है जो प्रत्येक ऋतु में बहती और समुद्र में जा कर गिरती हो। इस देश की किसी भी नदी में जहाज नहीं चल सकते हैं। नदियों के स्थान पर यहाँ पर कुछ ऐसे नाले हैं जो बाढ़ के पानी को बहा ले जाते हैं। इन नालों से एक अन्य उद्देश्य की भी पूर्ति होती है। ये नाले हाजियों और दूसरे काफिलों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस्लाम के विकास के पश्चात् हज की ये यात्राएँ अरब देश और बाह्य संसार से सम्बन्ध स्थापित करती रही हैं।

द्वितीया के चन्द्र जैसे आकार वाले इस उर्वर प्रदेश में कई साम्राज्यों की स्थापना हुई और उनका अन्त हुआ किन्तु ऊसर भूमि पर रहने वाले बदुओं के जीवन में किसी प्रकार का परिवर्तन न हुआ। यहाँ की मरुभूमि पर बद्दू, ऊँट और खजूर का राज्य है। यदि इनके साथ रेत को भी सम्मिलित कर लिया जाय तो इस मरुस्थलीय नाटक के चार महान पात्रों की सूची तैयार हो जाती है।

दृढ़ प्रयत्न एवं सहनशीलता के कारण ये खानाबदोश बद्दू ऐसे मरुस्थलीय स्थान पर जीवित हैं जहाँ कोई दूसरा जीवित नहीं रह सकता है। व्यक्तिवाद का उसके रक्त में इस प्रकार संचार हुआ है कि वह कभी भी एक सामाजिक प्राणी न बन सका। वह अपने कबीले के अलावा जनसाधारण के लाभ की बात हृदय से सोच ही नहीं सकता। अनुशासन, शान्ति एवं व्यवस्था के महत्त्व का उसके आदर्शों में किसी प्रकार का स्थान नहीं है।

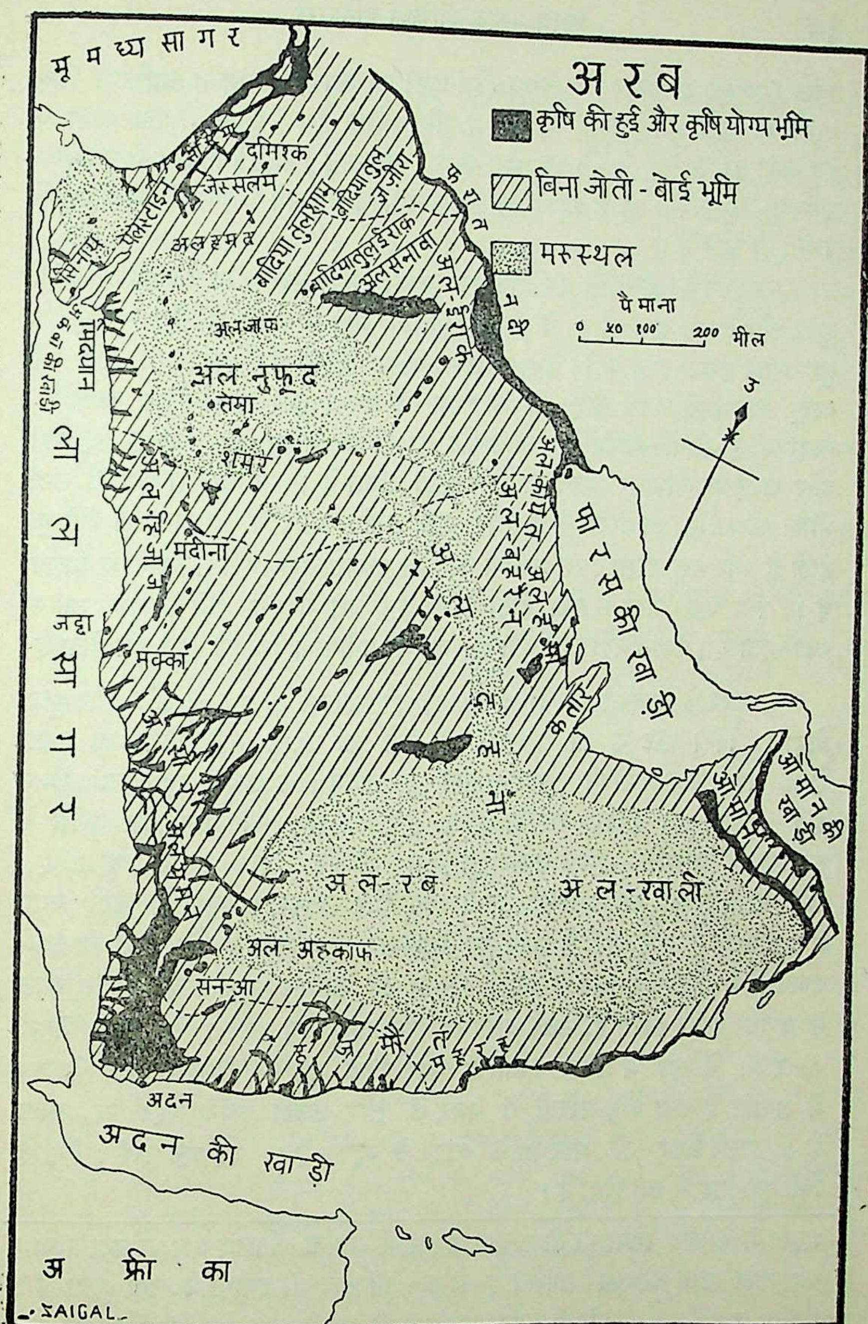
सामी धर्म की प्रारम्भिक बातों की, रेगिस्तान की अपेक्षा, नखलिस्तान में अधिक उन्नति हुई और पत्थरों एवं स्रोतों को इनमें केन्द्रिय स्थान प्राप्त हुआ। इन पत्थरों और स्रोतों को, इस्लाम के ज़मज़म (चाहे ज़मज़म)*, काले पत्थर (हजरे अस्वद) † और

---

* यह वह पवित्र कुआँ है जो मक्का में अब स हजारों वर्ष पूर्व हजरत इब्राहीम के पुत्र हजरत इस्माइल के पाँव रगड़ने से बन गया था। इसी घटना से सम्बन्धित होने के कारण आज भी यह बहुत ही पवित्र माना जाता है और गंगा जल के समान हाजी लोग इसे मक्के से लाकर प्रसाद के रूप में स्वयं भी ग्रहण करते हैं और दूसरों को भी देते हैं।

† हजरत इब्राहीम ने जब अपने पुत्र इस्माइल और अपनी पत्नी हाजरा को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.



CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तवरेत (ओल्ड टेस्टामेण्ट) के बेथल (बैत-एल) का अग्रवर्त्ती समझना चाहिए। किन्तु बद्दुओं का हृदय धर्म से बहुत ही कम प्रभावित होता है। क़ुरान में एक स्थान पर इस बात का उल्लेख है कि बद्दू लोग कुफ़्र (कृतघ्नता) और निफ़ाक़ (हिपाक्रैसी—पाखण्ड) पर अत्यन्त दृढ़ हैं और आधुनिक काल में भी वे अपने पैग़म्बर की केवल मौखिक प्रशंसा ही करते हैं।

बद्दुओं की शारीरिक एवं मानसिक रचना उनकी मरुस्थलीय जन्मभूमि की भाँति शुष्क और एकसी रहती है। वे लोग हड्डियों एवं नसों की गठरी होते हैं। खजूर और दूध उसके मुख्य खाद्य पदार्थ हैं तथा उसके गरिष्ठ भोजन में केवल ऊँट का मांस और खजूर सम्मिलित हैं। खजूर को सड़ा कर वह अपनी प्रिय शराब तैयार करता है। खजूर की गुठलियों की रोटियाँ उसके ऊँट का दैनिक भोजन है। प्रत्येक बद्दू पानी और खजूर पर अधिकार करने का स्वप्न देखा करता है। उसकी वेश-भूषा भी उसके भोजन की भाँति साधारण होती है। एक लम्बी कमीज जो कमरबन्द से बँधी हुई होती है और एक ढीला-ढाला उत्तरीय वस्त्र जो साधारणतया चित्रों में देखने को मिलता है। सिर एक शाल से ढका होता है जो एक डोरी से बंधा होने के कारण उस पर रुका रहता है। पैजामे नहीं पहने जाते हैं। जूते का प्रयोग भी सम्भवतः बहुत कम होता है।

अरब के जानवरों में दो जानवर बड़े ही महत्व के हैं, एक तो ऊँट और दूसरा घोड़ा। बिना ऊँट के तो रेगिस्तान में बसने का ख्याल नहीं किया जा सकता है। यही उसका भोजन, सामान ढोने का साधन और आदान-प्रदान का माध्यम है। लड़की का दहेज, रक्त का मूल्य, जुए की जीत का माल और कबीले के सरदार की सम्पत्ति—इन सबका अनुमान ऊँट से ही लगाया जाता है। ऊँट ही बद्दू का जीवन-साथी, उसकी धाय और उसका पालन-पोषण करने वाला माता-पिता है। बद्दू पानी के स्थान पर ऊँटनी का दूध पीता है और पानी को अपने जानवरों के लिए सुरक्षित रखता है। वह ऊँट का मांस खाता है, उसकी खाल से अपना शरीर ढकता है, उसके बालों से अपना तम्बू तैयार करता है, उसकी मेंगनी को ईंधन के रूप में प्रयोग करता है और उसके मूत्र को केशवर्द्धन-तत्त्व के रूप में लगाता है तथा कीड़े-मकोड़ों से बचने के लिए उसको अपने चेहरे पर मलता है। उसके लिए ऊँट मरुस्थल के जहाज से बढ़कर है। यह एक विशेष देन है जिसे अल्लाह ने उसे दिया है।

मक्का में आबाद किया था तो उन्होंने ईश्वर की प्रार्थना के लिए एक घर बनाया था। यह पत्थर उसी घर का अवशेष है जो अब भी काबे की इमारत में लगा हुआ है। हजरत इब्राहीम की स्मृति में मुसलमान अब भी इसकी याद करते हैं और जब हज करने जाते हैं तो उसका चूमना प्रार्थना का एक अंग समझते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आजकल के बद्दुओं को भी यदि ऊँटवालों के नाम से पुकारा जाय तो ये अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। म्युसिल (Musil) ने अपनी पुस्तक में, जो उसने रुवाला (Ruwalah) के बद्दुओं के सम्बन्ध में लिखी है, बताया है कि इस कबीले का बिरला ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसने कभी-न-कभी ऊँट के पेट का पानी न पिया हो। अचानक आवश्यकता पड़ने पर किसी बूढ़े ऊँट को मार कर या उसके गले में एक लकड़ी ठूँस कर पानी निकाल लिया जाता है। अगर ऊँट को पानी पिये हुए दो एक दिन बीत भी गये हैं तो भी वह पानी आदमी के पीने योग्य रहता है।

चूँकि अरब-संसार में ऊँट उत्पादन का मुख्य केन्द्र है इसलिए ऊट-व्यवसाय वहाँ की आय का एक बहुत बड़ा साधन है। ऊँट वहाँ के आर्थिक जीवन में एक विशेष महत्व रखता है, इसलिए अरबी भाषा में, कहा जाता है, कि ऊँट की विभिन्न जातियों और उसके पालन-पोषण के विभिन्न ढँगों के लिए नाना प्रकार के शब्दों का प्रयोग होता है। केवल तलवार ही एक ऐसी वस्तु है जो अपने अगण्य नामों के कारण ऊँट की समता रखती है।

इसके विपरीत, घोड़ा एक ऐसा जानवर है जिसकी गणना ऐश्वर्य में की जाती है। इसका रखना और पालना रेगिस्तान के निवासी के लिए एक समस्या बन जाती है। घोड़े का रखना धनवान होने का द्योतक है। घोड़े ने इस्लामी साहित्य में बहुत ही ख्याति प्राप्त कर ली है, किन्तु प्राचीन अरब में यह बहुत बाद को बाहर से लाया गया था। एक बार वहाँ पर पहुँच जाने के पश्चात् वर्तमान काल से पहले तक उसको अपने रक्त को शुद्ध रखने का पूर्ण अवसर प्राप्त रहा है। अरब का घोड़ा अपनी शारीरिक सुन्दरता, सहनशक्ति, बुद्धिमत्ता और स्वामिभक्ति के लिए बड़ा ही प्रसिद्ध है। अरबी घोड़े को ही मापदण्ड मान कर यूरोप के लोगों ने घोड़ों की विशेषताओं का स्तर निश्चित किया है। आठवीं शती में अरबों ने असली अरबी घोड़े को स्पेन के द्वारा योरोप में परिचित कराया। इस घोड़े ने बर्बरी और अण्डलूसियन (Andalusian Spainish) जाति के घोड़ों पर अपनी अमिट छाप लगायी है। अंग्रेजी घोड़ों ने 'धर्मयुद्ध' (Crusades) के समय अरबी घोड़ों का शुद्ध रक्त प्राप्त किया था।

अरबों के लिए घोड़ों का तीव्र वेग उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। छापा मारने के लिए घोड़ों का तीव्र वेग अत्यन्त आवश्यक है। इसका प्रयोग खेल के लिए भी किया जाता है, जैसे घुड़दौड़, आखेट आदि। आज भी किसी अरब के खेमे में पानी के अभाव में जिस समय उसके बच्चे पानी के लिए बिलख रहे हों, उस समय भी गृहस्वामी, इस दृश्य से विचलित हुए बिना, पानी के अन्तिम बूँद को भी घोड़े की बाल्टी में ही डालता हुआ दृष्टिगोचर होगा। लूट-मार या गज़्वा जिसका रूप बिगड़ कर रज़िया (Razzia) होगया है प्रायः डकैती का ही एक रूप है। लेकिन अरब की आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं में इसे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राष्ट्रीय- संस्थान' का पद प्राप्त है। यह लूट-मार बद्दुओं के खानाबदोशी जीवन की आर्थिक नींव है। रेगिस्तान में, जहाँ के निवासियों की युद्धालु प्रवृत्ति है, लूट-मार को वीरता का व्यवसाय समझा जाता है। अरब के ईसाई कबीलों का भी यही ढंग रहा है। प्राचीन काल के किसी कवि ने दो पदों में ऐसे जीवन के सिद्धान्तों का इस प्रकार उल्लेख किया है—

"शत्रु पर छापा मारना हमारा कर्तव्य है। हम अपने पड़ोसी पर भी छापा मारते हैं और जब कोई दूसरा हाथ नहीं आता तो अपने भाई को भी नहीं छोड़ते हैं।"

खेल के नियमों के अनुसार, और जब कि गज़वा एक प्रकार का राष्ट्रीय खेल ही है, अनावश्यक रक्तपात करना निषिद्ध है। गज़वे से इतना लाभ तो हो ही जाता है कि भोजन करने वालों की संख्या कम हो जाती है, यद्यपि इससे खाद्य सामग्री के वर्तमान परिमाण में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं होती है। एक निर्बल कबीला या सीमावर्त्ती शहरी आबादी किसी सबल कबीले को कर देकर अपने लिए उसका संरक्षणत्व प्राप्त कर लेता था।

आतिथ्य-भाव का सिद्धान्त 'गज़वे' के दोषों की अधिकता को एक सीमा तक कम कर देता है, बद्दू शत्रु के रूप में कितना ही भयंकर क्यों न हो किन्तु मैत्री-बन्धन की सीमा के भीतर वह बड़ा ही उदार और उसका निर्वाह करने वाला है। इस्लाम के पूर्व के कवि जो उस समय के पत्रकार भी होते थे आतिथ्य-भाव का गुणगान करने में कभी भी नहीं अघाते थे, जो सहनशीलता एवं वीरता के साथ-साथ अरब जाति की बहुत बड़ी विशेषता समझी जाती है। जल तथा गोचर भूमि के लिए बद्दुओं का पारस्परिक घोर संघर्ष ही उनके समस्त विरोध का कारण होता है। और रेगिस्तान की आबादी को अनेक लड़ाकू कबीलों में विभक्त कर देता है, लेकिन दुराशयी एवं हठी प्रकृति के स्थान पर असहाया-वस्था का पूर्ण अनुभव एक विशुद्ध आतिथ्य भाव को जन्म देता है, एक ऐसी भूमि पर जहाँ यात्रियों के लिए न सरायें हैं और न धर्मशालाएँ, किसी अतिथि को स्थान देने से इन्कार करना या स्थान देकर उसे कष्ट देना, सज्जनता के मान्य सिद्धान्तों का उल्लंघन करना ही नहीं है अपितु स्वयं उस परब्रह्म परमात्मा की आज्ञा का उल्लंघन करना है जो सब का रक्षक है।

पारिवारिक संगठन ही बद्दू समाज की आधारशिला है। प्रत्येक खेमा एक परिवार है और प्रत्येक पड़ाव एक वंश है। एक वंश के समस्त सदस्यों से मिलकर एक जाति और कई सम्बन्धित जातियों के मिलने से एक कबीला बन जाता है। एक जाति के सभी सदस्य परस्पर एक दूसरे के वंशज माने जाते हैं जो एक ही मुखिया—जाति के वयोवृद्ध सदस्य—के अनुशासन में रहते हैं और युद्ध का एक ही नारा लगाते हैं। रक्त-सम्बन्ध चाहे वह असली हो चाहे नकली (क्योंकि पारिवारिक सम्बन्ध किसी बच्चे के किसी औरत का दूध पी लेने से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहे वह एक या दो बूंद से अधिक न हो, स्थापित हो जाता है) यह एक ऐसा तत्व है जो विभिन्न लोगों को परस्पर संगठित रखता है।

खेमा और उसकी छोटी-मोटी वस्तुएँ व्यक्तिगत सम्पत्ति होती हैं लेकिन चरागाह, जल और कृषि-योग्य-भूमि कबीले की सम्पत्ति होती है।

यदि जाति का कोई सदस्य उसी जाति के दूसरे सदस्य की हत्या कर डालता है तो हत्या करने वाले को कोई शरण नहीं देता है। यदि वह भाग जाता है तो उसे कानून के द्वारा अरक्षित समझा जाता है। यदि हत्या किसी अन्य ने की है तो हत्या किये गये व्यक्ति के रक्त का बदला लेना जाति का कर्तव्य हो जाता है और हत्यारे की जाति के किसी न किसी व्यक्ति को अपने रक्त से उस रक्त का मूल्य अदा करना पड़ता है।

रेगिस्तान की प्राचीन प्रथा के अनुसार रक्त का बदला रक्त ही है। इसके लिये, बदले के अतिरिक्त और कोई अन्य दण्ड मान्य नहीं होता। बदला लेने का दायित्व हत्या किये गये व्यक्ति के सबसे घनिष्ठ सम्बन्धी पर होता है। रक्त का झगड़ा चालीस वर्ष तक भी चलता रहता है। कबीलों के उन समस्त युद्धों में जो इस्लाम के पूर्व हुए थे, ऐतिहासिकों को रक्त के झगड़े ही सबसे अधिक महत्त्व के जान पड़ते थे, यद्यपि आन्तरिक आर्थिक बातें भी इन युद्धों में से अधिकांश को भड़काने का कारण हुई होंगी।

किसी बद्दू के लिए इससे बढ़कर कोई कष्टप्रद बात नहीं हो सकती है कि उसे उसके कबीले से निकाल दिया जाय क्योंकि ऐसा व्यक्ति जिसका कोई कबीला न हो बिलकुल असहाय होता है। उसका स्थान कानून के द्वारा अरक्षित होने वाले व्यक्ति जैसा होता है, जिसको न तो कहीं शरण मिलती है और न जिसकी कोई रक्षा करता है।

कबीलादारी कबीले के प्रत्येक व्यक्ति से असीमित एवं पूर्ण श्रद्धा की माँग करती है। यह भावना अपने देश से उत्कट प्रेम करने के सिद्धान्त से ओतप्रोत * है। उसकी भक्ति जिसमें उसका व्यक्तित्व भली भाँति प्रकट होता है इस बात का द्योतक है कि उसका कबीला अपने स्थान पर एक स्थायी इकाई है जो आत्मनिर्भर एवं निरंकुश है और जिसको यह अधिकार प्राप्त है कि वह दूसरे कबीलों को अपनी लूट-मार का लक्ष्य बनाये। इस्लाम ने अपने सैनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कबीला-पद्धति से पूरा-पूरा लाभ उठाया है। उसने अपनी सेना को इन इकाईयों में विभक्त किया जिन की नींव पृथक्-पृथक् कबीलों पर पड़ी थी। उसने अपनी जीती हुई भूमि पर कबीलों को अलग-अलग बसाया और विजित जातियों के उन लोगों को जिन्होंने मुस्लिम धर्म स्वीकार कर लिया था मवाली (उपजीवित) घोषित किया। अरबों की दृष्टि में उपजीवी का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो स्वेच्छा से किसी कबीले का सदस्य बन जाता है। इस्लाम के उत्थान के पश्चात् भी अरबों के चरित्र से व्यक्तिवाद के असामाजिक तत्वों को दूर नहीं किया जा सका और उनमें कबीलादारी की भावना सदैव बनी रही जो आगे चलकर एक ऐसी बात सिद्ध हुई जिसने विभिन्न इस्लामी रियासतों को छिन्न-भिन्न कर उन्हें पतन के गर्त में गिरा दिया।

* Chauvinism—अपने देश से उत्कट प्रेम करने का सिद्धान्त।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कबीले का प्रतिनिधित्व उसका नाममात्र का मुखिया करता है जिसे शेख कहते हैं। हालीउड की फिल्मों में जिस तरह शेख को प्रदर्शित किया जाता है उसके बिलकुल विपरीत शेख कबीले का एक वयोवृद्ध सदस्य होता है और जब तक वह परामर्श, उदारता एवं साहस से कार्य करता है तब तक उसका नेतृत्व बना रहता है। लेकिन न्याय तथा सेना सम्बन्धी और अन्य सार्वजनिक कार्यों में शेख को निरंकुश नहीं माना जाता है। उसको इन बातों में कबीले की सभा से सलाह करनी पड़ती है। हर परिवार का एक व्यक्ति इस सभा का सदस्य होता है। उसका कार्य-काल उस समय तक रहता है जब तक कि उसके निर्वाचन-क्षेत्र के लोग उससे प्रसन्न रहते हैं।

साधारणतया अरब और विशेषतया बद्दू जन्मजात प्रजातंत्रवादी होते हैं। वे अपने शेख से समानता के साथ मिलते हैं। उस समाज के सब लोग जिसमें वे रहते हैं बराबर समझे जाते हैं। इब्न सऊद के उत्थान के पूर्व विदेशी शासकों के अतिरिक्त अरब किसी के लिए भी बादशाह (मालिक) की उपाधि का प्रयोग नहीं करते थे। किन्तु अरब जिस प्रकार प्रजातंत्रवादी होते हैं उसी प्रकार वे सामन्तवादी भी होते हैं। प्रत्येक अरब अपने आप को सृष्टि की हर दृष्टि से पूर्ण सर्वोत्तम रचना समझता है। उसके लिए अरब राष्ट्र संसार का सबसे अधिक सभ्य राष्ट्र है। बद्दुओं के उच्च दृष्टिकोण से दूसरे सभ्य राष्ट्र अपेक्षाकृत असन्तुष्ट और अत्यधिक पतित हैं। अरब अपने विशुद्ध रक्त, अपनी वक्तृत्व-शक्ति एवं कविता, अपनी तलवार और घोड़ा तथा सबसे अधिक अपने सभ्य पूर्वजों पर अत्यन्त गर्व करता है। वह वंश-परम्परा का बड़ा ही प्रेमी होता है और अपने वंश के क्रम का सम्बन्ध हजरत आदम से जोड़ता है।

बद्दू-स्त्री चाहे वह इस्लाम के पूर्व की हो अथवा उसके समय की हो, घर में बैठने वाली अपनी शहरी बहिनों से अधिक स्वतंत्रता का आनन्द लूटती आयी है। वह एक बहु-पत्नी वाले परिवार में जीवन व्यतीत करती थी जिसमें पति को पूर्ण अधिकार प्राप्त था; लेकिन वह अपना पति चुनने के सम्बन्ध में पूर्ण स्वतंत्र थी और यदि उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता तो वह उसे छोड़ देने का भी अधिकार रखती थी।

रेगिस्तान के इन निवासियों में अवसर आ जाने पर दूसरी सभ्यताओं को आत्मसात् कर लेने की भी अत्यधिक क्षमता पायी जाती है। ऐसा जान पड़ता है कि उनकी वे शक्तियाँ जो युगों से सुषुप्तावस्था में थीं उचित उत्तेजक के मिल जाने पर अचानक जाग्रत हो जाती हैं और एक संचालक-शक्ति का रूप ग्रहण कर लेती हैं। द्वितीया के चन्द्रमा की आकृति वाली अरब भूमि में उन्नति के अनेक क्षेत्र बिखरे पड़े हैं। इसी के प्रभाव से बाबुल में हैमुराबी, सिनाई में मूसा, पामेरा में जोनेबिया, रूम में अरब-फिलिप और बगदाद में हारूँरशीद का जन्म हुआ था। इसी भूमि में पेटरा जैसे स्मारक हैं जिन्हें देख कर संसार आज भी चकित हो जाता है। इस्लाम की अद्भुत एवं अद्वितीय उन्नति में बद्दुओं की इन सुषुप्त शक्तियों का कम हाथ न था। इस्लाम के दूसरे खलीफा हजरत उमर ने सच कहा था कि बद्दू इस्लाम का कच्चा माल है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—इस्लाम के विकास से पूर्व

'द्वीप' होने पर भी अरब प्रायद्वीप संसार की दृष्टि से ओझल न रह सका। अरबों का सर्वप्रथम स्पष्ट उल्लेख असीरिया के बादशाह शालमानेसर तृतीय के शिलालेखों में किया गया है। इसने ८५४ ई० पू० में दमिश्क के राजा और उसके मित्र-राष्ट्रों के विरुद्ध एक साहसिक अभियान का नेतृत्व किया था। उन मित्रों में एक अरब शेख भी था। उस समय की घटनाओं के अनुसार इस अभियान का अत्यधिक महत्व था। इस शिला-लेख में यह लिखा हुआ है कि "मैंने इसकी राजधानी 'कर्कर' को नष्ट कर दिया, उसकी ईंट से ईंट बजा दी तथा उसे भस्म कर डाला। इसमें दमिश्क के बारह सौ रथ, बारह सौ सवार, बीस हजार सिपाही और अरब जिन्दुब के एक हज़ार ऊँट सम्मिलित थे।" यह बात भी महत्व की है कि इतिहास में अरबों का सर्वप्रथम वर्णन ऊँटों के साथ किया गया है।

हमने अभी तक 'अरब' शब्द का प्रयोग भौगोलिक स्थिति पर ध्यान दिये बिना ही प्रायद्वीप अरब के समस्त निवासियों के लिए किया है। किन्तु अब यह आवश्यक प्रतीत होता है कि दक्षिणी और उत्तरी अरब के निवासियों में (जिनमें मध्य अरब के निवासी 'नजदी' भी सम्मिलित हैं) अन्तर किया जाय। इस मार्ग-रहित मरुस्थल ने यहाँ की भूमि को उत्तरी और दक्षिणी भागों में विभक्त कर दिया है और इस प्रकार इस भौगोलिक विभाजन के कारण यहाँ के निवासियों के स्वभाव में भी अन्तर आ गया है।

उत्तरी अरब के निवासियों की नस्ल भूमध्यसागर के निवासियों की नस्ल से मिलती-जुलती है और दक्षिणी अरब के निवासियों की नस्ल का क्रम अल्पाइन नस्ल, अर्मनी Armanoid, हित्ती Hittite या हेब्रू से मिलता-जुलता है। चौड़े जबड़े, सुडौल नासिका, चिपटे गाल और घने बाल इनकी विशेषताएँ हैं। सर्वप्रथम दक्षिणी अरब के निवासियों ने उन्नति कर अपनी सभ्यता की नींव डाली और उसका विकास किया। उत्तरी अरब के निवासी तो मध्ययुग में इस्लाम के विकास तक अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक नहीं पहुँचे थे। अरब के इन दोनो क्षेत्रों के निवासियों के बीच अन्तर करना इसलिए भी आवश्यक है कि यद्यपि इस्लाम ने प्रत्यक्ष रूप से एकता स्थापित कर दी थी किन्तु इनके पारस्परिक विरोध की खाई कभी भी भरी न जा सकी। आगे चल कर इस विरोध के बहुत बुरे परिणाम हुए और अरब साम्राज्य निर्बल होगया।

अरब प्रायद्वीप प्राचीन काल की दो सभ्यताओं के केन्द्रों—मिस्र और बेबीलोनिया के मध्य स्थित था। इसलिए वह अपने आप को उन दोनो के प्रभावों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से वंचित न कर सका। अफ्रीका उत्तर में प्रायद्वीप 'सिनाय' के निकट अरब भूमि को स्पर्श करता है। यह वह स्थान है जहाँ पर बाइबिल में वर्णित सुप्रसिद्ध पर्वत सिनाय स्थित है। यहाँ से एक थल मार्ग निकलता था। दूसरा प्रमुख मार्ग नील नदी के किनारे-किनारे चलता हुआ 'थेब्स' के निकट लालसागर से मिल जाता था। मिस्र के बारहवें वंश के समय २००० ई० पू० में एक नहर, जिसे स्वेज नहर का पूर्ववर्ती समझना चाहिए, नील नदी की पूर्वी शाखा को लालसागर से मिला देती थी। सर्वप्रथम बतलीमूस * राजाओं और फिर खलीफाओं ने उसे फिर से ठीक-ठाक कराया और यह नहर १४९८ ई० तक प्रयोग में आती रही जबकि भारत के लिए आशा अन्तरीप का मार्ग ढूँढ़ निकाला गया। दक्षिण में केवल पन्द्रह मील चौड़ा समुद्र अरब प्रायद्वीप को अफ्रीका से पृथक करता है।

इस्लाम के पूर्व, अरबों में किसी प्रकार का फौजी संगठन न था। उस समय वे केवल व्यापारी थे। दक्षिण में उनकी समुद्रतटीय उच्च कोटि की सभ्यता व व्यापार था जिसने भारत को अफ्रीका से मिला दिया था। इसी सभ्यता के कारण उत्तर में पेटरा † और पालमिरा × नामक दो नगरों को व्यापारिक मार्गों पर उन्नत करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। किन्तु दोनो समय के थपेड़ों में आकर नष्ट हो गये। आज भी इनके भग्नावशेषों से वैभव टपकता है। पेटरा जिसने रूमियों की छत्रछाया में अधिक सम्पत्ति एवं वैभव प्राप्त कर लिया था, ठोस चट्टानों को काट कर बनाया गया था। पालमिरा सीरिया के मरुस्थल में दो परस्पर विरोधी साम्राज्यों—रोमन एवं पार्थियन—के मध्य स्थित था। इसकी सुन्दर एवं महत्वाकांक्षी रानी ज़ेनोबिया की रोचक कहानी हम तक पहुँची है। पूर्व की उस अद्वितीय रानी ने अपने राज्य में मिस्र और एशियामाइनर के बड़े भागों को सम्मिलित कर लिया था। २७२ ई० में जब उसके सरदार, सम्राट् औरेलियान ÷ से पराजित हुए तो वह पालमिरा से एक द्रुतगामिनी ऊँटनी पर चढ़कर रेगिस्तान में भाग गयी; किन्तु अन्त में रूम की लम्बी भुजाएँ उसके गले में पड़ ही गयीं। समय की गति के अनुसार स्वर्ण-जंजीरों में उसे जकड़ कर उसकी प्रतिष्ठा की गयी और जब विजेता का रथ जलूस के साथ रूम में प्रवेश कर रहा था तो वह उसके आगे-आगे चल रही थी।

अरब के प्रारंभिक इतिहास की एक और घटना है जो यद्यपि इतनी महत्वपूर्ण नहीं है, फिर भी इसमें बहुत बड़े तत्व निहित हैं। १२२५ ई० पू० में मिस्र से फिलिस्तीन की ओर जाते हुए हेब्रू कबीलों ने सनाई और नुफूद में चालीस वर्ष तक निवास किया था। सनाई के दक्षिणी भाग, मिदियान में एक ईश्वरीय प्रतिज्ञा‡

---

* Ptolemies † Petra × Palmyra ÷ Aurelian
‡ Divine Covenant ‡ (मीसाके बनी इसराइल)—यह वह कौल व करार है जो खुदा ने हजरत मूसा से कराया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करायी गयी थी। कबीले के सरदार हजरत मूसा ने वहाँ एक अरबी स्त्री से विवाह कर लिया था जो वहाँ के एक पुरोहित की लड़की थी (इक्सोडस ३ : १ ; १८ : १०—१२) इस विवाह-सम्बन्ध के कारण एक बहुत बड़ी घटना घटी। हजरत मूसा की पत्नी याहू नामक देवता की उपासक थी। यह नाम बिगड़ कर "यहवह" ‡ अथवा "जेहोवह" * हो गया। यह एक मरुस्थलीय सरल-साध्य एवं निष्ठुर देवता था। वह एक खेमे में निवास करता था और इसकी उपासना की पद्धति बड़ी साधारण थी। यह अधिकतर मरुस्थलीय दावतों, बलिदानों और भुने हुए चौपायों के चढ़ावों तक सीमित थी। मिदियान के पुरोहित की पुत्री ने हजरत मूसा को अपने धर्म के सिद्धांतों से अवगत कराया। अब बड़ी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटने वाली थीं।

हेब्रू वस्तुतः रेगिस्तानी थे—इस कथन से ओल्ड टेस्टामेण्ट भरा पड़ा है। अधिक सम्भव है कि जर्मिया के बादशाह उत्तरी अरब और सीरिया के रेगिस्तान के शेख ही हों। कुमारी "शुनामाइत (Shunamite) जिसकी सुन्दरता को उस गीत में अमर कर दिया गया है जिसे हजरत सुलेमान की रचना कही जाती है, अरब के कबीले 'केदार' की लड़की थी। हजरत अयूब, जो प्राचीन 'सामी' कविता के रचयिता समझे जाते हैं, अपने वंश के कारण यहूदी नहीं बल्कि अरब थे। पूर्व के वे बुद्धिमान लोग जो तारे के पीछे जेरुसलम पहुँचे थे, उत्तरी अरब मरुस्थल के बद्दू थे, ईरान के पुरोहित न थे। यहूदी, भौगोलिक दृष्टिकोण से अरबों के अतिनिकटस्थ पड़ोसी हैं और 'नस्ल' के दृष्टिकोण से उनके अति निकट के सम्बन्धी हैं। बाइबिल के विवरणों की तालिका अत्यधिक लम्बी हो सकती है।

किन्तु यह इस्लाम का उत्थान है जो अल्लाह के सम्मुख नतमस्तक हो जाने वाला धर्म है। यहाँ पर इसी का वर्णन अपेक्षित है। यह साधारण बात है कि दक्षिणी अरब में जिस राष्ट्रीय जीवन का विकास हुआ था उसका सातवीं शती में पतन हो चुका था। वहाँ अराजकता फैल चुकी थी। सारे अरब प्रायद्वीप में अरबों की प्राचीन मूर्ति-पूजा, जो बद्दुओं के लिए केवल चन्द्रपूजा तक ही सीमित थी [साधारणतया गर्म देशों में घुमन्तू-जीवन व्यतीत करने वाली जातियों की यही दशा है कि वह रात्रि की शीतलता को अपना मित्र और दिन की उष्णता को अपना शत्रु समझते हैं], ऐसे स्थान पर पहुँच गयी थी, जहाँ वह अपने अनुयायियों की आत्मा की पुकार को सन्तुष्ट नहीं कर सकती थी। एकेश्वरवाद की भावना का प्रादुर्भाव हो चुका था और इस मत के माननेवालों का एक गिरोह भी बन गया था। ईसाई धर्म का प्रभाव भी दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा था यद्यपि यह अरबों को किसी तरह भी प्रभावित न कर सका। किन्तु रंगमंच की रचना हो चुकी थी और वह समय भी आ गया था जबकि एक बहुत बड़े धार्मिक एवं राष्ट्रीय नेता का जन्म होने जा रहा था।

(‡) Yahwah (*) Jahowah

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मुहम्मद साहब के प्रकट होने के पूर्व के समय को मुसलमान ''जाहिलियत'' का समय कहते हैं। इस शब्द का साधारण अर्थ 'मूर्खता' और 'जंगलीपन' है। यद्यपि उत्तरी अरबों ने हजरत मुहम्मद साहब के समय तक लिखने की कोई पद्धति नहीं पैदा की थी, फिर भी 'जंगलीपन' जैसे कठोर 'पद' का प्रयोग ऐसे उन्नत समाज के लिए नहीं होना चाहिए था जैसा कि दक्षिणी अरब में विकसित हो चुका था। यह वह समय था जब कि अरब में न कोई व्यवस्था थी न कोई दैवी पैगम्बर था और न कोई दैवी ग्रन्थ।

अरबों में साहित्यिक भावों को व्यक्त करने के लिए जैसी उत्साहपूर्ण श्लाघा विद्यमान थी वैसी संसार की किसी अन्य जाति में नहीं पाई जाती है और न तो संसार की किसी अन्य जाति का हृदय एवं मस्तिष्क अरबों की भाँति किसी लेख या वाणी से प्रभावित हो सकता था। अरबी भाषा अपने बोलने वालों के मस्तिष्क पर जितना अधिक प्रभाव डाल सकती है, उतना अधिक संसार की सम्भवतः कोई ही भाषा अपने बोलने वालों के मस्तिष्क पर डाल सके। बगदाद, दमिश्क, और काहिरा की आधुनिक जनता के सम्मुख यदि किसी अरबी कविता का पाठ किया जाय तो वह उसको भलीभाँति समझे बिना झूमने लगती है और प्राचीन भाषा में किये गये भाषणों को थोड़ा समझ कर भी अधिक उत्साह में आ जाती है। ताल, स्वर और संगीत का उनके हृदय और मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ता है उसे वह धर्म-सम्मत जादू समझते हैं।

इन निराले सामियों [अरबों] ने न तो अपनी किसी कला को ही जन्म दिया और न किसी कला को प्रोत्साहन ही दिया। उनकी कलात्मक प्रकृति केवल एक ही माध्यम अर्थात् वाणी द्वारा व्यक्त हुई। यदि यूनानियों ने अपनी मूर्तियों एवं भवनों द्वारा यश प्राप्त किया तो अरबों ने अपनी कविता द्वारा और यहूदियों ने अपने धर्म-गीतों द्वारा यश प्राप्त किया था जो अपने भावों को व्यक्त करने के सुन्दर माध्यम थे।

एक पुरानी अरबी कहावत है कि मनुष्य की सुन्दरता उसकी वक्तृत्व-शक्ति में निहित है। उसके बाद की एक दूसरी कहावत है कि बुद्धिमत्ता तीन वस्तुओं में व्यक्त हुई है—फ्रैन्कों (Franks) के मस्तिष्क में, चीनियों के हाथ में और अरबों की ज़बान में। ''जाहिलियत काल'' में वक्तृत्वशक्ति [गद्य और पद्य में ओजपूर्ण ढंग से भावों को व्यक्त करने की क्षमता] धनुर्विद्या और घुड़सवारी—ये एक ''पूर्ण व्यक्ति'' की प्रारम्भिक विशेषताएँ समझी जाती थीं। अरबी भाषा अपने विचित्र ढाँचे के कारण प्रशंसनीय ढंग से एक संक्षिप्त एवं मितवक्तृता के रूप में ढल जाती है। इस्लाम ने भाषा की इस प्रधान विशेषता और अरबों की मनोवैज्ञानिक विचित्रता से पूर्ण लाभ उठाया। इसके फलस्वरूप कुरान की वर्णन एवं रचना शैली के इसी चमत्कार को मुसलमान अपने धर्म की सत्यता के समर्थन में प्रस्तुत करते हैं। इस्लाम की जीत, एक सीमा तक, एक भाषा की और विशेष रूप से एक ग्रन्थ की जीत है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह केवल भावों को पद्यमय ढंग से व्यक्त करने का ही क्षेत्र था जिसमें इस्लाम के पूर्व के अरब बढ़े चढ़े हुए थे। बद्दू का कविता से प्रेम ही उसकी एक सांस्कृतिक सम्पत्ति थी। जैसे-जैसे उसकी मर्यादा की वृद्धि हुई वैसे-वैसे वह समाज के अनेक कृत्यों में भाग लेने लगा। युद्धस्थल में उसकी वाणी भी उतनी ही प्रभावशालिनी थी जितनी कि उसके कबीले के लोगों की वीरता। शान्ति के समय अपने ओजपूर्ण पद्यों की वजह से वह व्यवस्था-भंग का कारण बन सकता था। उसकी कविताएँ कबीले को क्रिया के निमित्त कटिबद्ध होने के लिए इस प्रकार आन्दोलित किया करती थीं जिस प्रकार आजकल राजनीतिक मोर्चों पर वक्ताओं की वक्तृताएँ लोगों को प्रोत्साहित किया करती हैं। अपने समय के पत्र-प्रतिनिधि अर्थात् पत्रकार होने के कारण भी, उसका अनुग्रह प्राप्त करने के लिए, उसे बड़े-बड़े उपहार दिये जाते थे। उसकी कविताएँ कंठस्थ कर ली जाती थीं और एक जबान से दूसरी जबान तक पहुँच कर प्रचार का बहुमूल्य साधन बन जाती थीं। कवि एक ही समय में जनता के विचारों को ढालने-वाला और उसका प्रचार करने वाला होता था। जबान काटने की पुरानी कहावत का यही अर्थ है कि कवि की रुपये-पैसे से सहायता कर उसका मुख बन्द कर दिया जाय और इस प्रकार उसके व्यंग से बचा जाय।

कवि, अपने गिरोह का प्रतिनिधि, पथप्रदर्शक, परामर्शदाता तथा वक्ता होने के साथ-साथ ऐतिहासिक और आवश्यकता पड़ने पर वैज्ञानिक भी होता था। वह बद्दू की बुद्धिमत्ता को कविता से नापता था। प्राचीन समय के एक कवि का कथन है कि मेरी कविता, घुड़सवारों और मेरे कबीले वालों की संख्या की दृष्टि से मेरे कबीले की बड़ाई का कौन मुकाबिला कर सकता है। सैनिकशक्ति, बुद्धिमत्ता और संख्या—ये ही तीन बातें थीं जिन पर किसी कबीले की श्रेष्ठता निर्भर करती थी।

प्राचीन कविता में काव्य-रुचि, ओज एवं प्रवाह के अतिरिक्त ऐतिहासिक तत्व भी होते हैं। जिस समय इस कविता का प्रादुर्भाव हुआ उस समय के अध्ययन के लिए यह शोध की सामग्री प्रदान करती है और वस्तुतः प्राचीन कविता ही हमको ऐसे तथ्य प्रदान करती है जिससे इस्लाम के पूर्व के जीवन के समस्त अंगों पर प्रकाश पड़ता है। इसीलिए यह कहावत है कि कविता ही अरबों का जन-इतिहास है।

कविता के प्रकाश में यदि मूर्तिपूजक बद्दुओं के जीवन का अध्ययन किया जाय तो हजरत मुहम्मद साहब से पूर्व बद्दुओं का मुश्किल से ही कोई धर्म था। कबीलों की आँख मूँद कर परम्पराओं को मानने की आदत ने स्वतंत्रतापूर्वक सोचने और कार्य करने की आदत को नष्ट कर दिया था। जिस मार्ग का सारा कबीला अनुसरण करता था प्रत्येक भी उसीका अनुगामी बन जाता था। हमें ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जिससे यह सिद्ध हो सके कि बद्दू सच्चे दिल से किसी देवता के उपासक रहे हों। बद्दुओं ने सारे रेगिस्तान को पशु-प्रकृति जैसी सृष्टि से भर रखा था जिनको ये जिन या भूत-प्रेत कहते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ये 'जिन' देवताओं से अपने स्वभाव में उतने भिन्न नहीं हैं जितने कि ये मनुष्यों से अपने स्वभाव में भिन्न होते हैं। सामूहिक रूप से देवता मित्र और जिन शत्रु होते हैं। 'जिन' मरुस्थल के जंगली जीवन, वहाँ की कठिनाइयों और निराधार भय की मूर्ति हैं। इस्लाम के पश्चात् भी जिनों की कल्पना मस्तिष्क में बनी रही। इतना ही नहीं बल्कि उनकी संख्या में वृद्धि भी हो गयी। क्योंकि उसके पहले के देवता अप्रतिष्ठित होने के पश्चात् जिन बन गये थे।

किन्तु हिजाज क्षेत्र के मक्का नगर में एक देवता और भी था जिसका नाम "अल्लाह" था। हिजाज का यह बंजर क्षेत्र नज्द की ऊँचीभूमि और नीचे के तटीय क्षेत्रों के मध्य एक दीवार के रूप में स्थित है। "अल्लाह" नाम भी प्राचीन है। मक्का के निवासी अल्लाह को सृष्टा और परम दाता मानते थे। तथा भयंकर परिस्थितियों में उसकी सहायता की माँग करते थे। शीघ्र ही एक मनुष्य के मुखसे, जो मक्का का निवासी था, अरबी भाषा का सबसे महान् पद निकला जो विद्युत, गति उत्पन्न करनेवाला था और जो रेगिस्तान के निवासियों को निर्जन स्थानों से निकाल कर संसार के अन्तिम छोर तक पहुँचा देने वाला था। यह पद (कलमा) है, "ला इलाह इल्लल्लाह !" जिसका अर्थ है कि 'अल्लाह' के अतिरिक्त और कोई देवता नहीं है।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४—मुहम्मद (अल्लाह के रसूल) ❀

५७१ ई० में अथवा उसके लगभग मक्का के एक बड़े कबीले 'कुरेश' में एक लड़के का जन्म हुआ। यह कबीला काबे के तीर्थस्थान का पंडा था जहाँ असंख्य मूर्तियाँ रखी हुई थीं। आस-पास के लोग यहाँ पर तीर्थ-यात्रा पर आया करते थे। यह अभी तक ठीक तरह से पता न चल सका कि माता ने इस बच्चे का क्या नामकरण किया। इस कबीले के लोग इस बच्चे को एक सम्मानित उपाधि "अल-अमीन"† के नाम से पुकारते थे। 'कुरान' में एक स्थान पर इस का नाम 'मुहम्मद' और दूसरे स्थान पर 'अहमद' आया है। यह नाम जिसका अर्थ 'अति प्रशंसित' है, ऐसा नाम है, कि इतनी बड़ी संख्या में किसी दूसरे नाम का प्रचलन संसार में और नहीं मिलता। इस बच्चे के पिता का, इसके जन्म के पूर्व ही देहान्त हो गया था। वह केवल ६ वर्ष का ही था जब कि उसकी मा भी इस संसार से चल बसी।

संसार के पैगम्बरों में केवल हजरत मुहम्मद साहब ही ऐसे पैगम्बर हैं जिनका जन्म उस समय हुआ था जब कि इतिहास का पूर्ण विकास हो चुका था। किन्तु फिर भी उनके प्रारम्भिक जीवन के बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। जीविकोपार्जन के लिए आप का प्रयत्न, अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए आप का उपाय और भविष्य में जो महान् कार्य आप को करना था उसके दायित्व का क्रमशः अनुभव—इन सभी बातों के सम्बन्ध में हमको बहुत ही कम विश्वसनीय तथ्य मिलते हैं। किन्तु पच्चीस वर्ष की उम्र में जब आपने मक्का की कुरेश जाति की एक सम्पत्तिशाली उच्च विचारों वाली विधवा स्त्री से विवाह किया जो आप से पन्द्रह वर्ष बड़ी थी, तो आप अचानक इतिहास के प्रवेश-द्वार पर दृष्टिगोचर होने लगते हैं। "बीबी खदीजा" कुरेश कबीले के एक बड़े धनी व्यापारी की विधवा स्त्री थीं, जो अपना स्वतंत्र व्यापार किया करती थीं। उन्होंने हजरत मुहम्मद साहब को अपने यहाँ नौकर रख लिया था। जब तक यह सभ्य एवं चरित्रवान स्त्री जीवित रही, तब तक हजरत मुहम्मद साहब ने दूसरा विवाह नहीं किया।

हजरत मुहम्मद साहब को अब जीवन की कुछ सुविधाएँ प्राप्त हो चुकी थीं और वे इस योग्य हो गये थे कि वे अपनी रुझान के अनुसार अपना जीवन व्यतीत

❀ रसूल, का शाब्दिक अर्थ है सन्देशवाहक,। मुसलमान 'रसूल' उस व्यक्ति को कहते हैं जो खुदा का सन्देश, उसकी आज्ञा से संसार तक पहुँचाता है।

† वह सच्चा अमानतदार जो अमानत को भली भाँति निबाह दे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर सकें। अब वे मक्का के बाहर एक पहाड़ी की छोटी सी गुफा में अकेले चिन्तन में तल्लीन दिखाई पड़ते हैं। सत्यता की खोज के इसी काल में आपको एक आवाज सुनाई दी, जो आप को यह आदेश दे रही थी कि "पढ़ो, उस अपने खुदा के नाम पर जिसने पैदा किया है"—(कुरान ६६ : १) यह आप का प्रथम दैवी-प्रकाशन† था। पैगम्बर के लिये अब पैगाम मिल गया था। इस पैगम्बरत्व की प्राप्ति के कुछ ही दिनों पश्चात् उन्हें दूसरी बार दैवी संदेश मिला। बड़े ही भावावेश में आप व्याकुल हो अपने घर अपनी बीबी के पास आये और उनसे कुछ ओढ़ाने को कहा। उसी समय यह आकाशवाणी हुई "कि ऐ कपड़े में लिपटे हुए आदमी, उठ और सचेत कर।" (कुरान ७४ : १) ये आकाश-वाणियाँ विभिन्न प्रकार की होती थीं। कभी-कभी यह घंटी बजने के सदृश होती थीं। इसके पश्चात् एक ही प्रकार की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी जो 'जिबराइल' (दूत) की ध्वनि के नाम से प्रसिद्ध हुई।

अरब के पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब का पैगाम ओल्ड टेस्टामेंट के हेब्रू पैगम्बरों से मिलता-जुलता था कि खुदा एक है। वह सर्वशक्तिमान है। वह संसार का सृष्टा है। एक कयामत का दिन है। उन लोगों को स्वर्ग में अच्छे पुरस्कार दिये जायँगे जो खुदा के आदेशों का पालन करते हैं। किन्तु जो उन आदेशों का उल्लंघन करते हैं उनको नरक में कठोर दण्ड दिया जाता है। आप के प्रारम्भिक पैगाम का यही सार है।

पैगम्बर के पद पर प्रतिष्ठित होने और इस रूप में जिस नये कार्य को करने के लिए हुई दैवी प्रेरणा की अनुभूति उनको हुई, उससे उत्साहित होने के पश्चात् सर्व प्रथम आप ने अपने ही कबीले के लोगों को इस्लाम का नया पैगाम सुनाया-समझाया। लोगों ने आप का मजाक उड़ाया और आप की बातों को हँसी में ठुकरा दिया। आप, लोगों से स्वर्ग के आनन्द का वर्णन करते थे और नरक के दण्ड से उन्हें भयभीत करते थे। वे अपने श्रोताओं को कयामत के सिर पर आ जाने का डर भी दिलाते थे। प्रारम्भिक काल की भविष्यवाणी जितनी संक्षिप्त और प्रभावशालिनो थी उतने ही कम लोग इस्लाम को स्वीकार कर रहे थे। आप की बीबी खदीजा, आप के चचेरे भाई अली, और आप के एक सम्बन्धी अबूबकर ने आपकी पैगम्बरी को स्वीकार किया किन्तु कुरैश के प्रभावशाली और धनाढ्य लोग आप का विरोध करने पर तुले रहे। धीरे-धीरे दूसरे लोग भी इस्लाम को स्वीकार करने लगे और मुसलमानों की संख्या बढ़ने लगी। सबसे पहले इस्लाम को स्वीकार करने वालों में दासों, निर्धनों तथा निम्न श्रेणी के लोगों की संख्या अधिक थी। कुरैश के लोगों ने जब देखा कि

† Revelation (वही)—कुरान में इस का तात्पर्य उस ज्ञान से है जो खुदा की ओर से किसी व्यक्ति पर प्रकट हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उनके विरोध और इस्लाम की हँसी उड़ाने का इस पर कोई प्रभाव न पड़ा तो उन लोगों ने आप को सताने और हानि पहुँचाने का यत्न किया। इससे तंग आकर मक्का के ग्यारह परिवार, जो मुसलमान हो गये थे, अबीसीनिया की ओर चले गये। सन् ६१५ ई० में दूसरे ८३ व्यक्तियों ने पुनः अबीसीनिया की ओर प्रस्थान किया। इन शरणार्थियों को अबीसीनिया के ईसाई बादशाह नेगस ने अपने यहाँ शरण दी। उसने इन लोगों को मक्का के आततायियों के हाथ सौंपने से बिलकुल इनकार कर दिया। विपत्तिकाल में जब कुरैश का अत्याचार बढ़ रहा था। और मुसलमान इतनी बड़ी संख्या में मक्का से बाहर चले गये थे, तो हजरत मुहम्मद साहब इससे लेशमात्र भी भयभीत नहीं हुए। आपने पहले से भी अधिक, लोगों को धैर्य एवं निर्भयता के साथ, इस्लाम की ओर बुलाया, मूर्तिपूजा से रोका, और एक सच्चे ईश्वर की ओर उनका ध्यान आकर्षित किया। आकाशवाणियाँ निरन्तर हो रही थीं। जो व्यक्ति किसी समय यहूदियों और ईसाइयों की इस बात पर चकित होता था कि उनके पास दैवी ग्रन्थ है, वही व्यक्ति अब यह निश्चित कर चुका था कि उसकी जाति के पास भी एक ऐसा ही ग्रन्थ होना चाहिये।

इसके पश्चात् ही उमर इब्नुलखत्ताब का नाम अल्लाह के सेवकों की सूची में दर्ज कर लिया गया जो इस्लामी रियासत की स्थापना में एक महत्वपूर्ण कार्य करने वाले थे। उसी समय एक नाटकीय ढंग से हजरत मुहम्मद साहब की वह निशायात्रा * हुई जिसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि आप निमिष मात्र में ही काबे से जेरूसलम चले गये और वहाँ से सातवें आसमान पर जा पहुँचे। जेरूसलम ने इस स्मरणीय यात्रा में एक विश्राम-स्थल का कार्य किया था। यह नगर जिस प्रकार यहूदियों तथा ईसाइयों के लिए पवित्र समझा जाता था, उसी प्रकार मुसलमानों के लिए भी अब पवित्र समझा गया और आजभी मक्का एवं मदीना के बाद इस्लामी जगत् में यह तृतीय पवित्र स्थान माना जाता है। इस अद्भुत यात्रा के सम्बन्ध में बहुत सी मनगढ़न्त कहानियाँ हैं जो आज भी ईरान तथा तुर्किस्तान के सूफी क्षेत्रों में बड़े प्रेम से सुनी जाती हैं। स्पेन के एक विद्वान ने इसी घटना को 'दान्ते' की "डिवाइन कामेडी" नामक ग्रन्थ का आधार माना है। उस यात्रा की स्मृति आज भी इस्लाम में एक जीवित एवं प्रेरणाप्रद शक्ति के रूप में विद्यमान है। अगस्त सन् १९२९ ई० में फिलिस्तीन में जो भयंकर घटनाएँ घटी हैं वे इस तथ्य के ज्वलंत प्रमाण हैं। ये घटनाएं जेरुसलम में यहूदियों की उस "क्रन्दन दीवाल" (wailing wall) से सम्बन्धित हैं जिस के सम्बन्ध में मुसलमानों की यह धारणा है कि वह पंखोंवाला घोड़ा जिसका मुख औरत का सा और पूँछ मोर की सी थी, यहीं से हजरत मुहम्मद साहब को लेकर आकाश की ओर उड़ा था।

* इस यात्रा को इस्लाम के इतिहास मे 'मेराज' के नाम से पुकारते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस आश्चर्यजनक यात्रा के दो वर्ष पश्चात् पछत्तर व्यक्तियों के एक गिरोह ने हजरत मुहम्मद साहब को मक्का से मदीना आकर रहने का निमंत्रण दिया। मदीना में यहूदी एक 'मसीह' के आने की बाट जोह रहे थे। और उसके स्वागत के लिए उन्होंने अपने मूर्तिपूजक निवासियों को तैयार कर रखा था। हजरत मुहम्मद साहब ने दो सौ मुसलमानों को कुरैश की दृष्टि बचाकर शान्तिपूर्वक अपने ननिहाल मदीना को चले जाने का आदेश दिया। उनके पश्चात् आप भी चल पड़े और २४ सितम्बर सन् ६२२ ई० को मदीना पहुँच गये। यही घटना इतिहास में 'हिजरत' के नाम से प्रसिद्ध है। इस घटना को केवल भाग जाना ही नहीं कहा जा सकता। दो वर्ष से 'हिजरत' की इस योजना पर विचार-विनिमय किया जा रहा था। इस घटना के सत्रह वर्ष बाद हजरत उमर ने चन्द्रवर्षीय पंचांग (जो १६ जुलाई से आरम्भ हुआ था।) की नींव डाली। 'हिजरत' के समय से ही इस्लामी वर्ष का आरम्भ हुआ।

हजरत मुहम्मद साहब की 'हिजरत' से 'मक्का काल' का अन्त और 'मदनी-काल' का आरम्भ हुआ। यह घटना हजरत मुहम्मद साहब के जीवन-प्रवाह को मोड़ देती है। आप ने अपनी जन्मभूमि मक्का को एक ऐसे पैगम्बर के रूप में त्यागा जिसके महत्व को किसी ने न समझा था और आपने अपने नये निवासस्थान मदीना में एक प्रमुख के रूप में प्रवेश किया। आप अब द्रष्टा के रूप में नहीं अपितु राजनीति में भाग लेने वाले एक व्यावहारिक व्यक्ति के रूप में लोगों के समक्ष आये और अब पैगम्बरत्व की अपेक्षा राजनीति प्रमुख हो उठी।

"पवित्र युद्ध विश्राम" (Holy Truce) से पूर्ण रूप से लाभ उठा कर और प्रवासियों की जीविका का प्रबन्ध करने के लिए उत्सुक, हो मदीने के अन्सार (सहायक) कहलाने वाले मुसलमानों ने अपने नये मुखिया के नेतृत्व में सीरिया से मक्का जानेवाले एक ग्रीष्मकालीन कारवाँ को रोका। इससे मक्का नगर के व्यापारिक जीवन के सबसे शक्तिशाली अंग पर बहुत बड़ा धक्का लगा। काफ्लि के मुखिया को मुसल-मानों के इस कार्य-क्रम की सूचना मिल चुकी थी। उसने मक्का से सहायता मँगवायी। सहायता आ भी गयी। मक्का वालों और मदीना के मुसलमानों के बीच संघर्ष हुआ। किन्तु श्रेय है हजरत मुहम्मद साहब के प्रभावोत्पादक नेतृत्व को जिसके कारण तीन सौ मुसलमानों को एक हजार मक्का वालों पर पूर्ण विजय प्राप्त हुई। सैनिक दृष्टि से यह युद्ध कितना ही तुच्छ क्यों न हो पर इसने हजरत मुहम्मद साहब की सांसारिक शक्ति की नींव को दृढ़ कर दिया। इस्लाम ने अपनी सर्वप्रथम और निर्णयात्मक सैनिक विजय प्राप्त करली। इस जीत का यह अर्थ लगाया गया कि इस धर्म का "दैवी स्वीकृति" (Divine Sanction) प्राप्त है।

अनुशासन की भावना और मृत्यु को तुच्छ समझने का विचार जो इस्लाम के इस प्रथम युद्ध में देखने को मिला वह उसके पश्चात् की महान् जीतों में उनका एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विशेष गुण बन गया। यह सत्य है कि दूसरे ही वर्ष मक्का वालों ने अपनी हार का बदला ले लिया, यहाँ तक कि उन्होंने पैगम्बर साहब को भी घायल कर दिया। लेकिन उनकी यह सफलता अधिक टिकाऊ नहीं सिद्ध हुई। इस्लाम फिर संभला और उसने शनैः शनैः सुरक्षात्मक स्थिति से आक्रमणात्मक स्थिति धारण कर ली। अब सचमुच उसके प्रचार-मार्ग खुल गये। इस समय तक उसकी स्थिति राज्य के अन्तर्गत एक धर्म जैसी थी किन्तु मदीना में, अब उसकी स्थिति राज्य-धर्म से बढ़-चढ़ गयी। इस समय इस्लाम स्वयं एक राज्य का रूप धारण कर चुका था। इसी समय से उसने एक सैनिक राजनीतिक पद्धति का रूप भी धारण कर लिया और इसी रूप से संसार ने उसे पहचाना है।

इसके पश्चात् हजरत मुहम्मद साहब ने उन यहूदियों के विरुद्ध एक अभियान आरम्भ किया जिन्होंने शत्रुदल का साथ दिया था। इसका फल यह हुआ कि यहूदियों के सबसे अधिक प्रबल कबीले के ६ सौ से अधिक योग्य योद्धा मारे गये और जो शेष रहे उन्हें मदीने से निष्कासित कर दिया गया। इस प्रकार जो नखलिस्तान खाली हुए थे उन पर उन लोगों को बसाया गया जो अपना घर-बार छोड़कर मदीने चले आये थे। इस्लाम के शत्रुओं का यह प्रथम कबीला था [जो अन्तिम न था] जिसको मृत्यु और स्वधर्म त्याग में से एक को चुन लेने का अधिकार प्राप्त था।

मदीने के इसी काल में इस्लाम को एक अरबी और राष्ट्रीय रूप प्रदान किया गया। इस नये पैगम्बर ने यहूदियों और ईसाइयों से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। शुक्रवार ने सब्बथ [शनिवार] का स्थान ले लिया, तुरुही और घंटे के स्थान पर ऊँचे मीनार से अजान देने की आज्ञा दी गयी। रमजान का महीना रोजा रखने का महीना निश्चित किया गया। नमाज के लिए जेरुसलम की ओर मुख न करके मक्का की ओर मुख किया जाने लगा। काबा को तीर्थस्थान माना गया। हजरे अस्वद [काला पत्थर] को चूमने का आदेश दिया गया। यह वह रीति है जो इस्लाम के पूर्व से प्रचलित थी।

सन् ६२८ ई० में हजरत मुहम्मद साहब ने चौदह सौ मुसलमानों के साथ अपनी जन्मभूमि की ओर प्रस्थान किया और एक ऐसी सन्धि की जिसके अनुसार मक्का वालों को और मुसलमानों को समान अधिकार मिले। इस सन्धि ने हजरत मुहम्मद साहब और उनके कबीले कुरैश के बीच चलते रहने वाले झगड़ों का अन्त कर दिया। कुरैश के लोगों में से खालिद बिन वलीद और उमर बिन आस ने इसी वर्ष इस्लाम को स्वीकार किया। ये दोनों व्यक्ति आगे चलकर इस्लामी सेना की दो शक्तिशाली तलवार का काम करने वाले थे। इस वर्ष ने उस महान कार्य के लिए इनका स्वागत किया। दो वर्ष के उपरान्त जनवरी सन् ६३० ई० में (सन् ८ हिजरी) मक्का को पूर्ण रूप से जीत लिया गया। हजरत मुहम्मद साहब ने शहर के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सबसे बड़े पुण्य-स्थान (काबा) में प्रवेश किया और यहाँ की बहुत सी मूर्तियों को छिन्न-भिन्न कर दिया जिनकी संख्या लगभग ३६० के बतायी जाती है। ऐसा करते समय आप यह कहते जाते थे कि सत्य आगया है और झूठ गायब हो गया है। शहर के लोगों के साथ आप ने बड़ी उदारता का व्यवहार किया। प्राचीन काल में कोई विरला ही विजेता किसी विजित नगर में इस प्रकार प्रवेश करता होगा।

लगभग इसी समय काबे की आस-पास की भूमि को मुहम्मद साहब ने पवित्र और वर्जित घोषित किया। कुरान की एक 'सूरत' (अनुच्छेद) प्रकट हुई जिसका आगे चल कर यह अर्थ निकाला गया कि इसके द्वारा समस्त गैर मुस्लिमों को काबे के निकट आना निषिद्ध है। इस "आयत" का प्रत्यक्ष अर्थ तो यह था कि बहुदेवपूजकों को वार्षिक तीर्थयात्रा के अवसर पर काबे के निकट आने से रोका जाय। लेकिन जो अर्थ ऊपर लिखा गया है उसी पर आज भी अमल हो रहा है। जिन यूरोपीय ईसाइयों को इन दो पवित्र शहरों को देख कर अपना प्राण सकुशल रखने में सफलता प्राप्त हुई उनकी संख्या पन्द्रह से अधिक नहीं है। इस प्रकार का सबसे पहला यूरोपीय ईसाई लूडो विको डि वारथेमा था जो सन् १५०३ ई० में मक्का गया था और जिसका सबसे पहला लेख इस सम्बन्ध में मिलता है, यह बोलाग्ना का निवासी था। सबसे अन्तिम अंग्रेज यात्री का नाम इल्डनरटर था! इन सभी यात्रियों में सर रिचर्डबर्टन की यात्रा सबसे अधिक दिलचस्प थी।

सन् ९ हिजरी में हजरत मुहम्मद साहब ने ईसाई सरकार अल अकबा और मकना, अधरुह और जरबा के नखलिस्तानों में रहने वाले यहूदी कबीले से सन्धि की। वहाँ के बसने वाले यहूदियों और ईसाइयों को नयी उभरती हुई इस्लामी बिरादरी की सुरक्षा में रखा गया और इसके बदले में उनसे जजिया लिया गया जिसमें भूमिकर और व्यक्तिकर दोनो सम्मिलित थे। इसने एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया, जिसके, फलस्वरूप भविष्य में, अत्यंत व्यापक परिणाम निकलने वाले थे।

हिजरत का यह नवाँ वर्ष (६३०-६३१ ई०) प्रतिनिधि भेजने का वर्ष कहा जाता है। इस वर्ष पैगम्बर साहब के प्रति भक्ति दिखलाने के निमित्त निकटस्थ एवं दूरस्थ प्रतिनिधियों का ताता लगा रहा। धर्म-स्वीकृति की दृष्टि से नहीं अपितु अपनी सुरक्षा की दृष्टि से अरब कबीलों को इसी में अपनी भलाई दिखाई पड़ी कि वे आपस में एक हो जायँ। इस्लाम अपने धर्म की मौखिक स्वीकृति मात्र कर लेने पर सन्तुष्ट रहा। ओमान, हद्र मौत, और यमन जैसे दूर-दूर के क्षेत्रों से लोग आते रहे। बड़े-बड़े कबीले अपने-अपने प्रतिनिधियों को भेजते रहे, अरब की भूमि जो आज तक किसी के आगे नतमस्तक नहीं हुई थी, अब हजरत मुहम्मद साहब के सम्मुख मस्तक झुकाये खड़ी थी और आप के संगठन में विलीन हो जाने को तैयार थी। उसकी मूर्तिपूजा उससे अच्छे धर्म और आचरण के आगे परास्त हो रही थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिजरत के दसवें वर्ष हजरत मुहम्मद साहब ने अपनी धार्मिक राजधानी मक्का में हज की वार्षिक यात्रा का नेतृत्व बड़ी सफलतापूर्वक किया। यह आप की अन्तिम यात्रा थी जो इस्लाम के इतिहास में "विदाई के हज" Farewell Pilgrimage (हजज्जतुलविदा) के नाम से विख्यात है। मदीना लौटने के तीन वर्ष पश्चात् आप अचानक बीमार पड़ गये और आप का देहान्त हो गया। आप को महती सिर पीड़ा थी। यह घटना ८ जून, सन् ६३२ ई० को घटी।

हजरत मुहम्मद साहब के जीवन के मदीना-काल में कुरान के लम्बे-लम्बे पाठ प्रकाश में आये जिनमें धार्मिक विधियों के अतिरिक्त, रोजे, ज़कात, नमाज़, सामाजिक और राजनीतिक आदेश, विवाह, विवाह-विच्छेद, दासों, युद्ध-बन्दियों और शत्रुओं के साथ व्यवहार किये जाने से सम्बन्धित विधियों का उल्लेख है। जो व्यक्ति स्वयं कभी निर्धन और अनाथ रह चुका हो, उसके बनाये हुए कानून, दासों, अनाथों, निर्बलों और दलितों के लिए विशेष रूप से उदारतापूर्ण हैं।

हजरत मुहम्मद साहब ने, उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने के पश्चात् भी, वैसा ही सरल जीवन एक मिट्टी की कुटिया में व्यतीत किया जैसा कि वे अपनी असहायावस्था में भी किया करते थे। इस तरह के प्राचीन ढंग के मिट्टी के झोपड़े आज भी अरब और सीरिया में देखे जा सकते हैं। इनमें कुछ कोठरियाँ होती हैं जो एक आँगन में खुलती हैं। आप बहुधा अपने वस्त्रों की मरम्मत स्वयं कर लिया करते थे। छोटा-बड़ा प्रत्येक व्यक्ति आपके पास हर समय पहुँच सकता था। होगार्थ (Hogarth) का कथन है कि आप के प्रत्येक छोटे और बड़े व्यवहार ने एक शास्त्रीय आदेश का रूप धारण कर लिया जिसका पालन करोड़ों व्यक्ति आज भी बड़ी सावधानी से करते हैं। आज तक किसी व्यक्ति को 'पूर्णतः मानव' मानते हुये, लोगों की इतनी बड़ी संख्या ने उसका अनुसरण नहीं किया।

आपने जो कुछ भी थोड़ी बहुत सम्पत्ति छोड़ी थी, उसे भी आपने राज्य-सम्पत्ति (State Property, बैतुल माल) में सम्मिलित किया। आप के लगभग बारह पत्नियाँ थीं जिनमें से कुछ से आपने प्रेमवश विवाह किया था और कुछ से राजनीतिवश। आपकी सभी पत्नियों में सबसे अधिक प्रिय अबूबक्र की युवा पुत्री 'आयशा' थीं। खदीजा से आपके कई सन्तानें हुईं लेकिन फातिमा को छोड़कर शेष सभी का उनके जीवनकाल में देहान्त होगया। फातिमा का विवाह आगे चलकर अली से हुआ। हजरत मुहम्मद साहब को अपने नवजात शिशु इब्राहीम की मृत्यु का बहुत दुख हुआ था। यह शिशु आपकी ईसाई पत्नी 'मेरी' से उत्पन्न हुआ था।

मदीना के धार्मिक समाज ने आगे चल कर एक इस्लामी राज्य का रूप धारण कर लिया। मुहाजिर (Emigrants) और अन्सार (Supporters) के गिरोहों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ने धर्म की नींव पर एक 'उम्मत' अर्थात् ''ईश्वर के गिरोह'' Congregation of Allah.) की स्थापना की। अरब के इतिहास में सामाजिक संगठन का यह प्रथम प्रयास था जिसकी नींव रक्त-सम्बन्ध के अतिरिक्त धार्मिक सम्बन्ध पर रखी गयी थी। अल्लाह ही राज-शक्ति की प्रतिमूर्ति था। खुदा का पैगम्बर जीवनपर्यन्त, उसका 'नायब' और इस भूमि का सबसे बड़ा शासक था। अपने इसी रूप में हजरत मुहम्मद साहब ने अपने आध्यात्मिक कार्यों के साथ-साथ वैसा ही सांसारिक अधिकार भी ग्रहण किया जैसा कि किसी राज्य का प्रमुख कर सकता है। इस समाज के समस्त लोग चाहे वे किसी भी कबीले से सम्बन्ध रखते हों, कम से कम सिद्धान्ततः परस्पर एक दूसरे के भाई बन गये। हज्जतुल विदा(farewell pilgrimage)—विदाई का हज के अवसर पर आपने अपने सदुपदेश में यह शिक्षा दी थी कि ऐ लोगों! मेरी बातों को ध्यानपूर्वक सुनो, और उन्हें गाँठ में बाँध लो। जान लो कि प्रत्येक मुसलमान प्रत्येक अन्य मुसलमान का भाई है और अब तुम लोग एक बिरादरी से सम्बन्ध रखते हो। इसलिए तुममें से किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि तुम अपने भाई की किसी वस्तु को उस समय तक अपने अधिकार में कर लो जब तक कि वह भाई प्रसन्नतापूर्वक तुम्हें इसके लिए अनुमति न प्रदान कर दे।

इस प्रकार एक ही बार में कबीले का जातीय-बन्धन टूट गया और उसके स्थान पर धर्म का नया बन्धन आ गया। यही वह अवसर था जब हजरत मुहम्मद साहब की मौलिकता भली-भाँति विदित होती है। इससे अरब देश के लिए एक प्रकार के मुसलमानी भ्रातृ-भाव की स्थापना हो गयी। इस नये समाज में न कोई पुरोहित था, न कोई धार्मिक नेता, और न कोई केन्द्रीय धार्मिक न्यायालय ही था। उसकी मस्जिदें ही उसके लिए जन-स्थान थीं जहाँ सैनिक कवायद होती थी और जहाँ सब लोग हिल-मिलकर प्रार्थना किया करते थे। नमाज़ का इमाम, मुसलमान सेना का सिपहसालार (सेनापति) भी होता था। सब मुसलमानों को यह आदेश था कि वे समस्त संसार के विरोध में परस्पर एक दूसरे की सहायता और रक्षा करें। उन सभी अरबों को जो अभी तक बहुमूर्ति-पूजक थे जाति-बहिष्कृत और अरक्षित घोषित कर दिया गया। इस्लाम ने अतीत से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। औरतों के बाद अरबों की सबसे अधिक प्रिय वस्तु शराब और जुवा था। इन दोनों का कुरान की एक ही आयत के द्वारा सर्वदा के लिए अन्त कर दिया गया। गाने और बजाने को भी बुरा समझा जाने लगा जो अरबों के लिए उतना ही प्रिय था।

मदीना से इस्लाम का धार्मिक शासन सारे अरब में फैल गया और धीरे-धीरे इसने पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका के बड़े भागों को अपने प्रभाव से प्रभावित कर दिया। मदीना का छोटा सा समाज आगे आने वाली मुसलमान जाति का एक छोटा सा प्रतिरूप था। हजरत मुहम्मद साहब ने अपने अल्प जीवनकाल में ही, आशातीत सफलता के साथ अरब जैसे अज्ञात और सदैव विभाजित देश के लोगों में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एकता स्थापित कर के एक नये राष्ट्र की स्थापना की। आप ने एक ऐसा धर्म चलाया जिसने संसार के बड़े-बड़े भागों में यहूदी और ईसाई धर्म को उनके उच्च स्थान से हटाकर स्वयं उनका स्थान ग्रहण कर लिया। आज भी मानव जाति की एक बहुत बड़ी संख्या इसी धर्म की अनुयायी है। आप ने एक ऐसे साम्राज्य की नींव डाली जो उस समय के सभ्य संसार के सर्वोत्तम प्रदेशों को अपनी वृहत् सीमा के अन्तर्गत सम्मिलित कर लेने वाला था। यद्यपि आप पढ़े-लिखे न थे, फिर भी आप के द्वारा एक ऐसे ग्रन्थ की उत्पत्ति हुई जिसको संसार की जनसंख्या का सातवाँ भाग, विज्ञान, दर्शन और धर्मशास्त्र का आगार समझता है।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

५—किताब और ईमान

आज भी यदि कोई मुसलमान सड़क से कागज का कोई टुकड़ा चुनता हुआ और उसको बड़ी सावधानी से किसी दीवार के छिद्र में डालता हुआ दिखाई पड़े कि कहीं उस पर अल्लाह का नाम न लिखा हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अल्लाह की किताब—कुरान की मुसलमान लोग अत्यधिक इज्जत करते हैं। यह खुदा (ईश्वर) का ही शब्द है जो जेबराईल दूत के द्वारा हजरत मुहम्मद साहब तक पहुँचा है। "पवित्र लोगों के अतिरिक्त इसे कोई स्पर्श नहीं कर सकता है" (५६ : ७८)।

यद्यपि संसार में ईसाइयों की संख्या मुसलमानों की संख्या की दूनी है किन्तु यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि संसार की समस्त "किताबों" की अपेक्षा 'कुरान' सबसे अधिक पढ़ा जाता है। इसका कारण यह है कि यह किताब 'प्रार्थनाओं' में प्रयोग किये जाने के अतिरिक्त, पाठ्यपुस्तक के रूप में भी व्यवहृत होती है। प्रत्येक मुसलमान बालक जब अरबी पढ़ना चाहता है तो वह इसी पुस्तक से आरम्भ करता है। तुर्की भाषा के सरकारी अनुवाद के अतिरिक्त कुरान का कोई दूसरा मान्य मुस्लिम अनुवाद नहीं है। फिर भी संसार की लगभग ४० भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। अंग्रेजी भाषा में "राडविल" का किया हुआ अनुवाद, "एवरीमैन्स लाइब्रेरी सीरीज" में, प्रत्येक व्यक्ति को सुविधापूर्वक मिल सकता है। लैटिन भाषा में कुरान का सर्वप्रथम अनुवाद बारहवीं शती में हुआ था। 'क्लुनी' के 'ऐबट पीटर' ने लैटिन भाषा में यह अनुवाद किया था। उसने यह प्रयास स्वयं "इस्लाम के विश्वास" का खण्डन करने और इस्लाम के पैगम्बर को नीचा दिखाने की दृष्टि से किया था। अंग्रेजी भाषा में कुरान का सर्वप्रथम अनुवाद कैम्ब्रिज के पादरी सिकन्दर रास ने सन् १६४६ ई० में फ्रांसीसी भाषा से किया था। इस अनुवाद का उद्देश्य उसके मुखपृष्ठ पर दी हुई भाषा से स्पष्ट होता है—जो इस प्रकार है :—

"(हजरत) मुहम्मद (साहब) का कुरान जिसका नया-नया अंग्रेजी भाषा में अनुवाद हुआ है, उन समस्त लोगों के सन्तोष के लिए है, जो तुर्कों के अहंभाव से परिचित हो जाना चाहते हैं।"

बाइबिल की तुलना में कुरान में पाठ सम्बन्धी बहुत ही कम अनिश्चितताएँ पाई जाती हैं। हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु के १६ वर्ष पश्चात् कुरान की प्रथम और पूर्ण प्रति प्रकाश में आयी। इसकी आवश्यकता इस लिए हुई कि इस्लाम के विभिन्न युद्धों में कुरान के 'हाफिज' बड़ी संख्या में मिट रहे थे। इससे पूर्व कुरान को खजूर के पत्तों, पत्थर की श्वेत तख्तियों और लोगों की याददाश्तों से लेकर किताब का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रूप प्रदान किया गया था। लेकिन उसका यह रूप मान्य न था। अतः उस कुरान की सारी प्रतियाँ नष्ट कर दी गयीं। कुरान की ६२३६ आयतें, उसके ७७, ६३४ शब्द, ३२३,६२१ अक्षर अब भी बड़े परिश्रम और सावधानी के साथ गिने जाते हैं। कुरान केवल एक धर्म का हृदय और दैवी राज्य की ओर पथ-प्रदर्शन करनेवाला ही नहीं है अपितु वह विज्ञान का सार तथा एक ऐसा राजनीतिक अभिलेख भी है जिसमें इस संसार के शासन की विधियाँ भी उल्लिखित हैं।

बाइबिल और कुरान में प्रत्यक्षतः बहुत सी समानताएँ पाई जाती हैं। कुरान की लगभग सभी ऐतिहासिक कहानियाँ बाइबिल में दी हुई कहानियों से मिलती जुलती हैं। बाइबिल के जिन पात्रों का कुरान में वर्णन है, उनमें आदम नूह और इब्राहीम (लगभग ७० बार इनका वर्णन आया है) इस्माइल, लूत, युसुफ, मूसा—(३४ सूरतों—पाठों में इनके नामों का उल्लेख है) तालूत, दाऊद, सुलेमान, इलियास, अयूब और युनुस को बहुत ही उच्च पद प्राप्त हैं। आदम के जन्म और उनके स्वर्ग से निकाले जाने का वर्णन पाँच बार, और नूह की बाढ़ एवं लूत की गाथा का वर्णन आठ बार हुआ है। न्यु टेस्टामेण्ट (अंजील) के पात्रों में केवल जकरिया, यहिया, ईसा, और मरियम को महत्व प्रदान किया गया है। तवरेत (ओल्ड टेस्टामेण्ट), अंजील और कुरान में पुरानी सामी भाषा की बहुत सी ऐसी कहावतों एवं किम्बदन्तियों का प्रयोग हुआ है जो हेब्रू और अरब दोनो जातियों में प्रचलित हैं। उदाहरणार्थ, आँख के बदले आँख, रेत पर मकान बनाना, ऊँट और सुई का नाका, मौत का मजा प्रत्येक व्यक्ति को चखना है। कुछ चमत्कारपूर्ण बातें जिनका सम्बन्ध हजरत ईसा के लड़कपन से है, जैसे उनका पालने में बात करना, या मिट्टी से जीवित चिड़ियों की रचना करना, उन चमत्कारों को स्मरण कराती हैं जो अपोक्रीफल गास्पेल (Apocryphal Gospel) में उल्लिखित हैं।

कुरान का धर्म अंजील के ईसाई धर्म की तुलना में, तवरेत के यहूदी धर्म से अधिक मिलता-जुलता है। इस्लाम और इन दोनो धर्मों में इतनी मिलती-जुलती हुयी बातें पाई जाती हैं कि उन्हें देखकर इसके प्रारम्भिक काल में यह अनुमान हुआ होगा कि भविष्य में यह एक स्थायी धर्म के बजाय ईसाई धर्म के किसी विकृत वर्ग के रूप में होगा। इसी बात को ध्यान में रख कर दान्ते ने अपने "डिवाइन कमेडी" नामक ग्रन्थ में हजरत मुहम्मद साहब को नरक के निचले भाग में दिखाया है जहाँ उनको बुराई तथा धर्मभेद उत्पन्न करने वाले के रूप में चित्रित किया है।

कुरान के पाठों को जिन्हें अरबी भाषा में सूरा कहते हैं, व्यवस्थित रूप से संग्रह किया गया है। सबसे पहला पाठ सबसे अधिक लम्बा है और इसके बाद के पाठ उत्तरोत्तर छोटे होते गये हैं। कुरान की सूरतें जो सर्वप्रथम मक्का में प्रकट हुई उनकी संख्या लगभग ६० है। इन पाठों का सम्बन्ध संघर्षकाल से है जो अधिकतर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छोटे हैं और जिनकी शैली ओजपूर्ण, उग्र एवं आवेशपूर्ण है। वे पैगम्बरत्व के भावों से पूर्ण हैं। इन पाठों का महत्वपूर्ण विषय अल्लाह का एकत्व, उसके गुण, मनुष्य के आचरण सम्बन्धी नियम और उसके कर्मों का फल है। शेष सूरतें मदीना की हैं। इनकी संख्या २४ (पूरे कुरान का लगभग एक तिहाई भाग) है। ये पाठ विजय के समय प्रकट हुए थे। ये पाठ अधिकतर लम्बे हैं। इनमें शब्दों की भरमार है। विधायिनी सामग्री (legisative material) से भी पूर्ण हैं। इन पाठों में धार्मिक सिद्धान्तों, और सामूहिक नमाज, रोजा, हज तथा पवित्र महीनों से सम्बन्धित नियमों का उल्लेख है। इनमें शराब, सुअर के मांस और जुए से रोका गया है। इनमें जकात, पवित्र युद्ध (Holywar) (वे युद्ध जो 'जेहाद' के नाम से प्रसिद्ध हैं), नर हत्या, प्रतिकार, चोरी, ब्याज, व्यापार, विवाह, विवाह-विच्छेद, पर-स्त्री गमन, उत्तराधिकार, और दास स्वतंत्रता से सम्बन्धित नियमों का उल्लेख है। विवाह (निकाह) का बार-बार होना वर्णन किया गया है किन्तु इससे बहुविवाह-प्रथा को प्रोत्साहन नहीं मिलता अपितु उसकी सीमा निर्धारित होती है। आलोचक, विवाह-विच्छेद (४ : २४ ; ३३ : ४८ ; २ : २२६) से सम्बन्धित नियमों को अत्यन्त आपत्तिजनक मानते हैं, लेकिन इस्लाम, दासों, अनाथों, और अपरिचितों के प्रति अच्छे व्यवहार (४ : २ ; ३ : ४० ; १६ : ७३ ; २४ : ३३) के सम्बन्ध में जो आदेश देता है उनको ये लोग भी "इस्लामी नियमावली" का सर्वाधिक मानवीय अंश मानते हैं। दासों को स्वतंत्र करने को इस प्रकार जो प्रोत्साहन दिया गया है मानो वह ईश्वर का सबसे अधिक प्रिय और मनुष्य के पापों को सबसे अधिक क्षमा कराने वाला है।

"कुरान" शब्द का अर्थ है, सुस्वर पाठ, व्याख्यान और वार्त्तालाप। यह किताब एक शक्तिशाली और जीवित स्वर वाली है। इसको मौखिक रूप से पढ़ने और इसके मूल पाठ को सुनने से ही इसका मूल्यांकन किया जा सकता है। इसकी शक्ति का प्रभाव अधिकतर इसके पद बैठाने के ढंग, अलंकार, लय, और प्रवाह में निहित है जिसको अनुवाद द्वारा किसी अन्य भाषा में नहीं व्यक्त किया जा सकता है। कुरान अंजील (अरबी) के ४/५ भाग के बराबर है। इस्लाम के आधार तथा आध्यात्मिक एवं नैतिक कार्यों में एक अन्तिम प्रमाण के रूप में यह जो धार्मिक प्रभाव डालता है, वह केवल कहानी का एक अंग है। मुसलमानों के निकट धर्मशास्त्र, विधिशास्त्र (फिक़ह) और विज्ञान एक ही वस्तु के विभिन्न रूप हैं। कुरान एक वैज्ञानिक पुस्तक है, और वह एक पाठ्य-पुस्तक है जिसके द्वारा साधारण शिक्षा प्राप्त करने में सहायता मिलती है। संसार के सबसे बड़े इस्लामी विश्वविद्यालय 'अजहर' में भी यह किताब अभी तक उनके पूर्ण पाठ्य-क्रम का आधार है। जब हम यह देखते हैं कि अरबी भाषा-भाषी विभिन्न जातियों की स्थानीय बोलियों ने, दक्षिणी-योरोप की बोलियों की भाँति, केवल कुरान के ही कारण एक दूसरे से पृथक होकर एक स्थायी रूप नहीं ग्रहण किया तो हमको कुरान के साहित्यिक प्रभाव का पूर्ण अनुमान होता है। हो सकता है कि आज एक ईराक निवासी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किसी मोरक्को-निवासी की बातचीत को पूर्णरूप से समझने में कुछ कठिनाई का अनुभव करे, किन्तु उसकी लिखित भाषा को समझने में ईराक निवासी को कोई कठिनाई न होगी। इसका कारण यह है कि सीरिया, अरब और मिस्र की भाँति ईराक और मोरक्को में प्रत्येक स्थान पर वह श्रेष्ठ (classical) अरबी भाषा प्रचलित है जिसकी रचना कुरान के आदर्श पर हुई है और जो इन सब देशों में निरन्तर समझी जाती है। हजरत मुहम्मद साहब के समय में अरबी गद्य का कोई उच्चकोटि का ग्रंथ उपलब्ध न था। कुरान अरबी गद्य का प्रथम ग्रन्थ है और आज तक भी वह इसका एक विशिष्ट आदर्श है। इसकी भाषा लयपूर्ण एवं अलंकारिक है किन्तु पद्यबद्ध नहीं है। इसके तालयुक्त गद्य ने एक ऐसा स्तर बना लिया है कि आधुनिक युग का प्रत्येक रुढ़िवादी (conservative) अरबी लेखक समझ-बूझ कर उसका पूर्णरूप से अनुकरण करने का यत्न करता है।

निकलसन ने अपनी पुस्तक "अरबों के साहित्यिक इतिहास" (Literary-History of the Arabs) में कुरान के प्रथम पाठ (सूरत) का अनुवाद इस प्रकार कर, मूल अरबी पाठ के आनन्द को कुछ सुरक्षित रखने का यत्न किया है।

In the name of god, the merciful, who forgiveth aye!
Praise to God, the Lord of all that be,
The merciful, who forgiveth aye,
The King of Judgment day!
Thee we worship and for thine aid we pray.
Lead us in the right way,
The way of those to whom Thou hast been gracious,
Against whom Thou hast not waxed wroth, and who go not astray.

इस पाठ का हिन्दी अनुवाद निम्नलिखित है :—

अल्लाह के नाम से जो रहमान और रहीम है,
सारी प्रशंसा उस ख़ुदा के लिए जो समस्त संसार का पालनहार है।
जो रहमान है और रहीम है,
फैसले के दिन (कयामत) का मालिक है,
हम तेरी ही प्रार्थना करते हैं और तुझी से सहायता माँगते हैं।
हमको सीधे मार्ग पर चला,
ऐसे सीधे मार्ग पर जिस पर चलने वालों को तूने वरदान दिया है,
उस मार्ग से बचा जिस पर चलने वालों पर तूने कोप किया है।
और उस मार्ग से बचा, जो पथभ्रष्ट हों। (सूरे फातिहा)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मुसलमान धर्मशास्त्री अपने धर्म के सिद्धान्तों की चर्चा करते समय, धार्मिक विश्वास और पूजा के कार्यों (धार्मिक कर्त्तव्य) को प्रथक-प्रथक मानते हैं। अल्लाह, उसके दूतों, ग्रन्थों एवं पैगम्बरों और प्रलय पर पूर्ण विश्वास रखने को ही ईमान कहते हैं। इसका सबसे पहला और बड़ा सिद्धान्त "ला इलाह इल् लल्लाह" है। अल्लाह के अतिरिक्त अन्य कोई देव नहीं है। ईमान में खुदा (ईश्वर) की कल्पना को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है और तथ्य तो यह है कि मुस्लिम धर्मशास्त्र का ९९ प्रतिशत अल्लाह से ही सम्बन्ध रखता है। "वही एक सच्चा ईश्वर है" वही सर्वोत्कृष्ट सत्य है, वही सर्वदा से है, वही स्रष्टा है, वही सर्व है और सर्वशक्तिमान है। उसके ९९ नाम हैं और उसके उतने गुण भी हैं। मुसलमानों की माला में भी खुदा के नामों की संख्या के अनुसार ९९ दाने होते हैं। खुदा के प्रेम सम्बन्धी गुण उसकी शक्ति एवं मर्यादा से आच्छादित हैं। खुदा की "इच्छा" [Will of Allah] के सम्मुख 'नतमस्तक' होने और आत्मसमर्पण कर देने को ही इस्लाम कहते हैं। हजरत इब्राहीम और उनके पुत्र के खुदा की इच्छा के सम्मुख झुक जाने और इस बड़ी परीक्षा में पुत्र के बलिदान देने के प्रयत्न को कुरान की भाषा में 'अस्लमा' (३७ : १०३) के नाम से स्मरण किया गया है। हजरत मुहम्मद ने अपने नये धर्म का नामकरण भी इसी के आधार पर किया है। धर्म के रूप में इस्लाम की वास्तविक शक्ति का रहस्य एकेश्वरवाद के साधारण, उत्साहपूर्ण और अटल एवं इस पूर्ण विश्वास में निहित है कि एक सर्वशक्तिमान, सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है और शासन कर रहा है। इस्लाम के अनुयायियों में एक ऐसे सन्तोष एवं त्याग की भावना विद्यमान है जो अन्य धर्मानुयायियों में नहीं पायी जाती है। यही कारण है कि इस्लामी देशों में आत्महत्या-बहुत कम होती है।

ईमान का दूसरा अंग यह है कि हजरत मुहम्मद साहब अल्लाह के रसूल, उसके पैगम्बर, और अपनी जाति के उपदेशक हैं। वे पैगम्बरों की लम्बी लड़ी की अन्तिम कड़ी हैं। इसीलिये आप का स्थान सर्वोच्च है। कुरान की धार्मिक पद्धति में हजरत मुहम्मद साहब केवल एक मनुष्य हैं और कुरान की भाषा का सौन्दर्य आप का एक मात्र चमत्कार है। लेकिन परम्परा, लोक-गीत, एवं जनविश्वास में आप दैवी प्रकाश से युक्त हैं। आप का धर्म प्रत्यक्षतः एक व्यावहारिक धर्म और वह अपने प्रवर्त्तक के व्यावहारिक एवं कुशल मस्तिष्क को पूर्ण रूप से व्यक्त करता है। यह ऐसा कोई आदर्श नहीं उपस्थित करता है जो प्राप्त न किया जा सकता हो। यह धर्म हर प्रकार की धार्मिक उलझनों से रहित है। इसमें न तो किसी प्रकार का रहस्य है, न धार्मिक नेताओं का एकाधिकार है, और न किसी तरह की आज्ञा देने का कार्य अर्पण तथा देवदूतों से सम्बन्धित उत्तराधिकार है।

कुरान खुदा का शब्द है। इसमें अन्तिम दैवी संदेश है और यह "अपौरुषेय (Uncreated)" है। इसका प्रत्येक वाक्य सदैव "अल्लाह कहता है" से प्रारम्भ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होता है। कुरान की स्वर-ध्वनि, मोहक उच्चारण तथा अलंकारपूर्ण भाषा उसकी नित्यता, दिव्यता और अलौकिकता को चरितार्थ करती है। समस्त चमत्कारों में यह सबसे बड़ा है। सभी मनुष्य और जिन मिल कर भी इसके तद्वत् रचना नहीं कर सकते हैं।

दैवी विद्या में इस्लाम 'जेब्रील' को सर्वोच्च स्थान प्रदान करता है। वह दैवी सन्देशवाहक है जो पवित्रता एवं सत्य की आत्मा है। सर्वोच्च देव के सन्देशवाहक के रूप में वह ग्रीक दैवतोपाख्यान के हर्मिस § की भाँति है।

पाप या तो चारित्रिक * हो सकता है अथवा सांस्कारिक†। सबसे बुरा और अक्षम्य पाप बहुदेव-पूजा (शिर्क) है। सच्चे ईश्वर के साथ अन्य अनेक देवों को सम्मिलित करने का नाम शिर्क है। हजरत मुहम्मद साहब की दृष्टि में बहुदेव-पूजा अत्यन्त घृणास्पद थी। इसीलिए कुरान की उन सूरतों में जो मदीना में अवतरित हुईं, बहुदेव-पूजकों को लगातार कयामत के दिन से भयभीत किया गया है। हजरत मुहम्मद साहब के विचार से "किताब" वाली जातियाँ (अर्थात् ईसाई और यहूदी) सम्भवतः बहुदेव-पूजक नहीं थीं यद्यपि कतिपय टीकाकार इससे भिन्न मत ग्रहण करते हैं।

कुरान के सबसे अधिक आकर्षक भाग वे हैं जिनमें भावी जीवन का वर्णन है। भावी जीवन की सत्यता पर, बार-बार आने वाले संदर्भों—यथा, 'निर्णय का दिन', 'पुनः जी उठने का दिन', 'कयामत का दिन', 'कयामत की घड़ी', 'अवश्यम्भावी'—के द्वारा अधिक बल दिया गया है। कुरान में भावी जीवन का जो स्वरूप वर्णित है, उसमें शारीरिक सुख और दुःख सम्मिलित हैं। "पुनः जी उठने के दिन" का तात्पर्य अपने शरीर के साथ जी उठना है।

मुसलमानों के इबादत या धार्मिक कृत्य इस्लाम के तथाकथित पाँच स्तम्भों पर आधारित हैं।

१—"खुदा पर अटूट विश्वास" इस्लाम का प्रथम स्तम्भ है। इसका सारांश "ला इलाह इल् लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह" ‡ के महानतम् सिद्धान्त में निहित है। प्रत्येक मुस्लिम नवजात शिशु के कान सर्वप्रथम इन्हीं शब्दों को सुनते हैं और मरने वाले की कब्र पर सबसे अन्त में ये ही शब्द दोहराये जाते हैं। जन्म और मृत्यु के बीच कोई और शब्द नहीं है जो इतना दोहराया जाता हो। पाँच समय की नमाज़ों में मीनारों की ऊँचाई से मुअज़्ज़िन (अजान देने वाला) इन्हीं नामों को पुकारता है। इस्लाम में साधारणतः खुदा पर मौखिक विश्वास पर्याप्त मात्रा में माना जाता है। जब कोई व्यक्ति इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लेता है और मुख से उसकी आवृत्ति कर

§ Hermes *Moral †Ceremonial ‡ईश्वर के अतिरिक्त कोई देव नहीं है, हजरत मुहम्मद साहब ईश्वर के सन्देशवाहक हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देता है तो वह मुसलमान कहलाने लगता है। सूर्य निकलने से पूर्व, मध्याह्न, अपराह्न, सूर्यास्त और रात्रि, इस प्रकार पाँच बार हर सच्चा मुसलमान काबे की ओर मुख करके अपनी नियत नमाज़ पढ़ता है। नमाज़ इस्लाम का दूसरा स्तम्भ है। किसी नमाज़ के समय यदि इस्लामी जगत पर एक विहंगम दृष्टिपात किया जाय तो 'सीराल्यून' से 'कैण्टन' तक और 'टोबाल्स्क' से 'केपटाउन' तक के लम्बे चौड़े तथा नित्यप्रति बढ़ते हुये क्षेत्र में नमाज़ पढ़ने वालों की असंख्य पंक्तियाँ मक्का को अपना केन्द्र बनाकर खड़ी हुई दृष्टिगोचर होंगी।

२—नमाज़ एक ऐसी धार्मिक क्रिया है जिसकी इस्लामी धर्मशास्त्र में विस्तृत व्याख्या की गयी है और समस्त मुसलमान एक विशेष ओर मुख करके शारीरिक अंगों की विशेष गति के साथ घुटने टेकते और उसी प्रकार नियमित ढंग से खड़े भी होते हैं। एक नमाज़ी को नमाज़ पढ़ने के लिए इस्लामी धर्मशास्त्र के नियमानुसार पवित्र होना चाहिए और भाव-व्यक्तीकरण के माध्यम अरबी भाषा का ही उसे प्रयोग करना चाहिए, चाहे उसकी मातृभाषा कोई अन्य भाषा ही क्यों न हो। अपने अपरिवर्तित रूप में नमाज़ खुदा के समक्ष प्रार्थना तथा रोने-गिड़गिड़ाने की अपेक्षा खुदा के नाम को स्मरण करना है। फ़ातेहा अर्थात् आरम्भ का सरल और सार्थक पाठ इंजील की "लार्ड्स प्रेयर" से प्रायः मिलता जुलता है। हर सच्चा मुसलमान दिन में इसका बीस बार जाप करता है। यह संसार के समस्त जापों में सबसे अधिक पढ़ा जाने वाला जाप है। अर्धरात्रि की नमाज़ ऐच्छिक प्रार्थना के रूप में पढ़ी जाती है और इसका पढ़ने वाला खुदा के निकट दुगुना पुण्यवान समझा जाता है। क्योंकि यह कर्तव्य से अधिक बढ़ा हुआ कार्य है। जुमे की नमाज, जो मध्याह्न में पढ़ी जाती है, ऐसी नमाज है जिसमें सभी वयस्क पुरुषों का सम्मिलित होना अत्यन्त आवश्यक है। कुछ मस्जिदों में स्त्रियों के लिए भी स्थान सुरक्षित रहता है। जुमे की नमाज की एक विशेषता उसका धर्मोपदेश है जो उसका इमाम देता है और जिसमें राज्य के प्रधान के लिए प्रार्थना भी की जाती है। यह धार्मिक जमाव अपने मूल रूप (Prototype) में, यहूदियों की पूजा से मिलता-जुलता था। लेकिन आगे चलकर यह ईसाइयों की रविवार की प्रार्थना से प्रभावित हो गया। सामूहिक प्रार्थना की दृष्टि से जुमे की नमाज, अपनी शान, सादगी और अनुशासन के लिए अपने ढंग की एक है। मुसलमान अपनी स्वनिर्मित पंक्तियों में सीधे खड़े हो कर इमाम का जिस शुद्धता एवं श्रद्धा से अनुसरण करते हैं उसका दृश्य सदैव बड़ा प्रभावशाली होता है। यह सामूहिक प्रार्थना अनुशासन की दृष्टि से, रेगिस्तान के इन स्वाभिमानी व्यक्तिवादी सन्तानों में सामाजिक समानता तथा समैक्य के भाव की वृद्धि करने में अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुई। इस प्रार्थना ने मुसलमानों के उस भ्रातृभाव की अत्यन्त वृद्धि की जिसको हजरत मुहम्मद साहब के धर्म ने सैद्धान्तिक रक्त-सम्बन्ध के स्थान पर प्रस्तुत किया था। नमाज पढ़ने के मैदान, इस्लाम के लिये, पहली कवायद के मैदान (Drill Grounds) बन गये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—ज़कात इस्लाम का तृतीय स्तम्भ है। आरम्भ में ज़कात को एक सप्रीति स्वेच्छापूर्वक दया का कार्य (दान) समझा और माना जाता था। इसने धीरे-धीरे एक अनिवार्य 'कर' का रूप धारण कर लिया जो जायदाद, रुपया-पैसा, जानवर, अन्न, फल और व्यापारिक सामानों पर लगाया जाता था। इस्लाम का यह नया राज्य अपने नियमित अधिकारियों द्वारा जकात वसूल करके एक केन्द्रीय कोष * में जमा करता था और इससे समाज के निर्धनों की सहायता करता था, मस्जिदें बनवाता था और शासन-व्यय का भार संभालता था। प्लिनी Pliny की राय में ज़कात से सम्बन्धित सिद्धान्त किसी सीमा तक उस "टिथे" † (दशमांश) से मिलता-जुलता है जो दक्षिणी अरब के व्यापारी अपना माल बेचने के पूर्व अपने देवता को भेंट के रूप में अर्पित किया करते थे। ज़कात की दर भिन्न-भिन्न है किन्तु साधारण रूप से इसका औसत ढाई प्रतिशत है। सिपाहियों की पेन्शनें भी इससे वंचित न थीं। आगे चल कर सच्चे इस्लामी शासन के छिन्न-भिन्न हो जाने के पश्चात् जकात के भुगतान को मुसलमानों के विवेक पर छोड़ दिया गया।

४—यद्यपि कुरान में पश्चात्ताप करने के व्रत का कई स्थानों पर उल्लेख है लेकिन व्रत-मास के रूप में 'रमजान' § का वर्णन केवल एक ही स्थान पर किया गया है। इस महीने में प्रातःकाल से लेकर सूर्यास्त तक हर प्रकार की खाने-पीने की वस्तुओं से परहेज किया जाता है। इस्लामी देशों में शासन या जनसाधारण की ओर से रोज़ा न रखनेवालों पर सख्ती करने के बहुत से उदाहरण मिलते हैं। इस्लाम के पूर्व मूर्तिपूजक अरब में रोजे की प्रथा का कोई प्रमाण नहीं मिलता है। लेकिन ईसाइयों और यहूदियों में निस्सन्देह रोजे की प्रथा भलीभाँति प्रचलित थी। इसी को इस्लाम का चौथा स्तम्भ माना गया।

५—हज इस्लाम का पाँचवाँ और अन्तिम स्तम्भ है। जीवन में कम से कम एक बार वर्ष के एक निश्चित महीने में मक्का की पवित्र यात्रा करना प्रत्येक समर्थ स्त्री और पुरुष का पुनीत कर्तव्य है। हाजी इस पवित्र दशा में जब कि वह एक बिना सिला हुआ कपड़ा पहने हुए होता है तो वह उन समस्त वस्तुओं के प्रयोग से परहेज करता है जिनसे रमज़ान के महीने में बचने का आदेश दिया गया है। यथा स्त्री-सम्भोग, हत्या, आखेट, वृक्षों का काटना आदि। पवित्र स्थानों की यात्रा प्राचीन सामी प्रथा थी जो तवरेत के समय तक प्रचलित रही। वस्तुतः यह किसी सूर्य-पूजक वर्ग की प्रथा रही होगी, और उसका पर्व वसन्त ऋतु में आतो होगा। यह प्रथा एक तरह से प्रचण्ड सूर्य के कठोर शासन की विदाई और उर्वरक मेघ देव के स्वागत के लिए मनायी जाती होगी।

---

* इसे 'बैतुल माल' कहते थे। †Tithe दसवाँ भाग जिसको इस्लामी धर्मशास्त्र में उस्र कहा गया है। § मुस्लिम कैलेण्डर का नवाँ महीना जिसके बाद ईद का महीना आता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केन्द्रीय अफ्रीका के इस छोर से उस छोर तक 'सेनीगाल' 'लाइबेरिया' नाइजेरिया' के यात्रियों का पूर्व की ओर निरन्तर तीर्थयात्रा करना बराबर देखा जाता है। और यह सिलसिला जितना आगे बढ़ता है, इसकी संख्या में उतनी ही वृद्धि होती जाती है। कुछ लोग पैदल यात्रा करते हैं और कुछ ऊँटों के ऊपर। पुरुषों की संख्या अधिक होती है लेकिन इसमें कुछ स्त्री और बच्चे भी होते हैं। ये लोग व्यापार भी करते हैं और भीख भी माँगते हैं, बहुत से मार्ग में मर जाते हैं और शहीद हो जाते हैं। जो शेष रह जाते हैं वे किसी प्रकार लालसागर के किसी न किसी बन्दरगाह तक पहुँच जाते हैं और वहाँ से वे छोटी नावों के द्वारा लालसागर के दूसरे तटपर पहुँचा दिये जाते हैं। यमन, ईराक, सीरिया और मिस्र के चार काफिले सबसे बड़े होते हैं। ये चारो देश अपने-अपने काफ़िलों के आगे प्रतिवर्ष एक महमिल भेजा करते थे जो उनके ऐश्वर्य का प्रतीक होती थी। 'महमिल' एक प्रकार की डोली होती है जिसको भली-भाँति सजाया जाता है। इसको ऐसे ऊँट पर ले जाया जाता है जिस पर कोई सवार नहीं होता है।

प्रथम और द्वितीय महायुद्ध के मध्य में हाजियों की वार्षिक औसत संख्या १ लाख ७२ हजार रही है। सन् १६५६ ई० की सरकारी गणना के अनुसार हाजियों की संख्या ६ लाख बीस हजार थी। सन् १६५७ ई० में इनकी संख्या बढ़कर दस लाख हो गयी जिसमें बाहर की आयी हुई एक तिहाई संख्या भी सम्मिलित है। इसी वर्ष मिस्र से आये हुए हाजियों की संख्या सबसे अधिक (बत्तीस हजार एक सौ नौ) थी। पाकिस्तान का स्थान दूसरा था। वहाँ से तेईस हजार छः सौ सत्तर हाजी आये थे।

हज सैकड़ों वर्षों से इस्लाम में एक बहुत बड़ी एकता लाने की शक्ति रखता आया है और विभिन्न मुस्लिम धार्मिक गिरोहों में एक प्रभावशाली सम्बन्ध स्थापित करता आया है। यह लगभग प्रत्येक सक्षम मुसलमान के जीवन में कम से कम एक बार यात्रा करने का अवसर प्रदान करता है। समस्त संसार के मुस्लिम बिरादरी के इस बड़े जमाव के समाजीकरण के प्रभाव को उत्पन्न करने वाली शक्ति की जितनी भी प्रशंसा की जाय, कम है। इसने, हब्शियों, बर्बरियों, चीनियों, ईरानियों, तुर्कों और अरबों के मध्य, चाहे वे धनी हों अथवा निर्धन, ऊँच हों या नीच, बन्धुत्व स्थापित करने, और धर्म की साधारण बातों के सम्बन्ध में परस्पर भाई के समान मिलने-जुलने का अवसर प्रदान किया है। संसार के समस्त धर्मों की तुलना में केवल इस्लाम ही को कम से कम अपनी जमात की सीमा के भीतर, जाति, रंग और राष्ट्रीयता के भेद-भाव को दूर करने में सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई है। मुसलमानों और उनके अतिरिक्त शेष मानवों के बीच ही केवल अन्तर किया जाता है। यह विश्वास के साथ कहा जाता है कि इन के इन जमावों ने इस उद्देश्य की पूर्ति में बहुत ही महत्वपूर्ण योग दिया है। इसने ऐसे-ऐसे क्षेत्रों में भी इस धर्म का प्रसार करने के सुन्दर अवसर प्रदान किये हैं जहाँ केवल आधुनिक यातायात का अभाव ही नहीं है अपितु वहाँ अभी तक पत्रकारिता का जन्म ही नहीं हुआ है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केवल एक मुसलमान गिरोह 'खार्जियों' ने 'जेहाद' (धर्मिक युद्ध) को, इस्लाम का छठे स्तम्भ होने का सम्मान प्रदान किया है। जहाँ तक इस्लाम की सांसारिक शक्ति का सम्बन्ध है, उसका अद्वितीय प्रसार 'जेहाद' के ही कारण हुआ। खलीफा के महत्वपूर्ण कर्त्तव्यों में यह भी सम्मिलित है कि ज्यों-ज्यों इस्लाम का क्षेत्र (दारुलइस्लाम) का विस्तार होता जाय, वह जेहाद के द्वारा युद्ध को आगे बढ़ाता जाय। वर्तमान युग में 'जेहाद' को इस्लामी जगत में बहुत कम समर्थन प्राप्त हुआ है और इस युग में इस्लाम बहुत सी विदेशी सरकारों के अन्तर्गत भी उन्नति कर रहा है। ये सरकारें या तो अत्यन्त शक्तिशाली हैं या अत्यन्त उदार हैं जिसके कारण इनके विरुद्ध कोई विद्रोह नहीं किया जाता। मुसलमानों से भिन्न लोगों के विरुद्ध विश्वव्यापक विद्रोह की अन्तिम घोषणा सन् १९१४ के पतझड़ की ऋतु में उस्मानी सुल्तान खलीफा मुहम्मद रशाद की ओर से की गयी थी जो बिलकुल असफल रही। एक पूर्वीय भाषाशास्त्री ने इसको अपनी पुस्तक "दि होली वार इन जर्मनी" का विषय बनाया है।

ऊपर जिन धार्मिक सिद्धान्तों की चर्चा हुई, वे ही इस्लाम के मूलाधार हैं, लेकिन यह नहीं समझ लेना चाहिए कि कुरान में केवल ये ही सिद्धान्त उल्लिखित है। आधारस्वरूप एक मुसलमान का चरित्र निश्चित करने के लिए केवल एक ही नियम है और वह है "ईश्वरेच्छा" जो हजरत मुहम्मद साहब के द्वारा कुरान में प्रकाश में आयी है।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

६—इस्लाम का अभियान

मध्ययुग के आरम्भ में घटनेवाली घटनाओं में दो घटनाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। एक घटना तो प्राचीन जर्मन लोगों का अपना देश छोड़ कर दूसरे देश में चला जाना है जिसके कारण पवित्र रोमन साम्राज्य में फूट पड़ गयी और दूसरी घटना अरबों की विजय है जिसने ईरानी साम्राज्य का नाश कर दिया और बेजेन्टाइन साम्राज्य की नींव को हिला डाला। यदि कोई सातवीं शती के प्रथम तिहाई भाग में यह भविष्यवाणी करने का साहस करता, कि दस बीस वर्ष के भीतर अरब जैसी जंगली और अज्ञात भूमि से एक अपूर्व शक्ति उत्पन्न होगी, जो अपने समय के दो बहुत बड़े साम्राज्यों पर धावा कर के—एक तो सासानी पर अधिकार कर लेगी, और दूसरे बेजेन्टाइन से उसके उत्तम क्षेत्र छीन लेगी, तो ऐसी भविष्यवाणी करने वाले को पागल समझा जाता। लेकिन बिलकुल ऐसी ही घटना घटी। पैगम्बर साहब की मृत्यु के पश्चात् ऐसा जान पड़ता है कि मानो किसी ने जादू की शक्ति से अरब की बाँझ भूमि को एक ऐसी भूमि में बदल दिया जो नायकों की पौधघर बन गयी। और यहाँ ऐसे-ऐसे लोगों ने जन्म लिया जिनकी संख्या और गुण की दृष्टि से संसार में अन्यत्र उदाहरण नहीं मिलते हैं। ईराक, सीरिया और मिस्र में खालिद बिन वलीद और उमर बिन आस ने जो युद्ध जीते हैं, युद्ध-इतिहास में उनकी गणना ऐसे सैनिक-युद्धों में होती है जो अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से किये गये थे और जिनकी तुलना नैपोलियन, हनीबाल और सिकन्दर के युद्धों से की जा सकती है!

सासानी और बेजेन्टाइन साम्राज्य पारस्परिक शत्रुता के कारण कई पीढ़ियों से निरन्तर युद्ध कर निर्बल हो गये थे। इन युद्धों के ऋण को चुकाने के लिए प्रजा पर बड़े-बड़े कर लगाये गये थे जिसके कारण प्रजा की राजभक्ति क्षीण होती जा रही थी। कुछ अरब कबीलों को सीरिया और मेसोपोटामिया में, विशेष कर सीमाओं पर; कुछ राजनीतिक अधिकार पहले से ही प्राप्त हो चुके थे। ईसाई चर्च में विरोध उत्पन्न हो गया था और सनातनी चर्च ने अधिक अत्याचार करना आरम्भ कर दिया था। इन सभी बातों ने मिलकर अरब सेना की आश्चर्यजनक उन्नति के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया था। सीरिया और फिलिस्तीन के सामी तथा मिस्र के हामी (Hamites) निवासियों ने अरब से आने वाले नवागन्तुकों को अपने घृणित एवं अन्यायी स्वामियों की तुलना में अपना निकटतम सम्बन्धी समझा। तथ्य तो यह है कि मुसलमानों की विजयों के सम्बन्ध में यह ख्याल करना चाहिए कि इन्हीं के द्वारा प्राचीन निकट-पूर्व (Near east) ने अपने खोये हुए राज्य को प्राप्त किया। इस्लाम की उत्तेजना से ही प्रभावित होकर पूर्व जाग्रत हो उठा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और उसने पश्चिम की सहस्रों वर्ष की दासता से मुक्ति पाकर फिर अपने अस्तित्व को पुनर्स्थापित किया। इसके अतिरिक्त नवविजेताओं ने पुराने शासकों की तुलना में कम 'कर' वसूल किया, और अब विजित लोग अधिक स्वतंत्रता के साथ अपनी धार्मिक प्रथाओं का अनुसरण कर सकते थे। जहाँ तक अरबों का प्रश्न है, वे तरोताज़ा और प्रबल थे। उनमें एक नवीन जोश और विजय करने का एक दृढ़ संकल्प, तथा अपने नये धर्म के कारण मृत्यु से भी निर्भीक होने का साहस था।

मुसलमानों की चमत्कारपूर्ण सफलताओं में उस सैनिक पद्धति का भी कुछ कम हाथ नहीं है जिसको उन्होंने पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका के मरुस्थलीय जंगलों में प्रयोग किया था। इस पद्धति से हमारा तात्पर्य उन घुड़सवार ऊँटसवार सैनिक दलों से है जिनके सम्बन्ध में रोमनों को कभी भी कोई क्षमता नहीं प्राप्त हो सकी। इस्लामी सेना, मध्य, दाहिने और बायें पार्श्व, तथा आगे और पीछे के रक्षक-दलों में विभक्त होती थी। दाहिने और बायें पार्श्व में घुड़सवार होते थे। इस विभाजन में कबीलों के सैन्य-दल पर विशेष ध्यान दिया जाता था। प्रत्येक कबीले का पृथक झण्डा होता था। बर्छे में एक कपड़ा बाँध कर उसे कबीले का सबसे वीर व्यक्ति उठा लेता था। पैगम्बर साहब के झण्डे पर 'गरुड़' होने की बात कही जाती है। पैदल सेना, धनुषबाण, गुलेल (slings) तथा कभी-कभी ढाल और तलवार का प्रयोग करती थी। तलवार म्यान में रखकर दाहिने कन्धे पर लटकायी जाती थी। आगे चल कर अबीसीनिया से, फेंक कर मारने वाली बर्छियों के प्रयोग का चलन आरंभ हुआ। अश्वारोहियों का प्रधान अस्त्र नेज़ा था। राष्ट्रीय अस्त्र के रूप में धनुषबाण और बर्छी का प्रयोग होता था। सुरक्षात्मक कवच, जो बेजन्टाइनियों के कवच की तुलना में हल्का होता था, ढाल का भी काम देता था।

सेना का क्रम प्राचीन ढंग पर निश्चित होता था। उसे पंक्तियों और सुसंगठित समूहों में विभक्त किया जाता था। व्यक्तिगत लड़ाई से युद्ध आरंभ होता था। विख्यात वीर अपनी पंक्ति से आगे निकल कर शत्रु को ललकारते थे। अरब सैनिक को अपनी कोटि के ईरानी और बेजेन्टाइन सैनिक की अपेक्षा अधिक वेतन मिलता था। लूट के धन में भी उसका भाग नियत था। सैनिक वृत्ति ईश्वर की दृष्टि में केवल सर्वोत्तम तथा सर्वप्रिय पेशा ही नहीं थी अपितु अत्यंत लाभप्रद भी थी। मुस्लिम अरब सेना की शक्ति न तो उसके अस्त्रों की श्रेष्ठता में ही निहित थी और न उसके संगठन की उत्तमता में। यह तो उसके उच्च चरित्र-बल में निहित थी जिसके बनाने में निस्सन्देह उसके धर्म का पर्याप्त हाथ था। यह उनकी सहनशक्ति का परिणाम था जिसे उनके रेगिस्तानी-जीवन ने उनमें उत्पन्न कर दिया था। यह उनके अद्भुत खानाबदोशी के जीवन का प्रभाव था जो ऊँट सम्बन्धी यातायात से उनमें पैदा हो गया था।

अरबी इतिहास में इस्लामी क्रांति की जो "मुल्लायाना" (Clerical)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्याख्या की गयी है उसमें उसके धार्मिक पहलू पर अत्यधिक बल दिया गया है। और उसके अन्तर्गत जो आर्थिक तत्व कार्य कर रह थे, उन पर दृष्टि भी नहीं डाली गयी है। इसी प्रकार के निराधार अनुमान बहुत से ईसाइयों के भी हैं जिनमें अरब मुसलमानों को एक हाथ से क़ुरान तथा दूसरे से तलवार प्रस्तुत करते हुए दिखाया गया है।

अरब प्रायद्वीप के बाहर, और विशेष कर ईसाइयों तथा यहूदियों के प्रति व्यवहार में एक तीसरी बात और भी थी। विजेताओं के दृष्टिकोण से, क़ुरान और तलवार से भी प्रिय एक वस्तु—खिराज—थी।

"उन लोगों से लड़ाई छेड़ दो जिनको किताब दी गयी यहाँ तक कि वे अपने हाथ से खिराज अदा करें और रियाया बन जायँ" (६ : २९)

इस्लाम ने निरसन्देह एक जंगी नारा देकर लोगों को संगठित करने वाला एक सामान्य आधार तथा एक क़ौमी संकेत-शब्द प्रस्तुत किया था। निस्सन्देह उसने ऐसी बिखरी हुई जनता को जो इससे पूर्व कभी भी संगठित नहीं हुई थी, एक स्थान पर केन्द्रित कर दिया और इस प्रकार उसने एक अच्छी-खासी प्रेरणा-शक्ति उत्पन्न कर दी। किन्तु ये बातें ही केवल इस्लामी विजय के कारणों पर प्रकाश डालने वाली नहीं हैं। यह धर्मोन्माद ही नहीं अपितु आर्थिक आवश्यकता थी जो बद्दुओं के झुण्डों को अपनी खुश्क और रेतीली भूमि से निकाल कर उत्तर की उर्वर भूमि तक ले गयी। इस्लामी सेना में अधिकांश बद्दू ही होते थे। हो सकता है कि भावी जीवन में स्वर्ग के स्वप्न ने भी कुछ लोगों को प्रभावित किया हो लेकिन द्वितीया के चन्द्रमा के आकार जैसी उर्वर भूमि के ऐश्वर्यपूर्ण एवं विलासी जीवन की इच्छा भी बहुतों के हृदयों को उत्साहित कर रही थी। इस्लाम के प्रसार से; काफी समय से चलता हुआ, रेगिस्तानी क्षेत्र के निवासियों का, मिले हुये द्वितीयाके चन्द्रमा के आकार की उर्वर भूमि में जाकर बसने का क्रम, अब अपनी अन्तिम स्थिति में आ गया।

विजय की घटनाओं का उनके परिणामों की दृष्टि से अध्ययन करने वाले ऐतिहासिकों का कथन है कि इस्लाम के समस्त युद्ध, विशेष कर प्रथम खलीफा हजरत अबूबक्र, और हजरत उमर की बुद्धिमत्ता एवं सतर्कतापूर्वक पूर्वनियोजित योजनाओं के परिणाम थे। लेकिन इतिहास में बहुत ही कम ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें बड़ी-बड़ी घटनाओं का आरम्भ करने वालों ने पहले ही से यह भाँप लिया हो कि ये घटनाएँ भविष्य में कौन सा रूप धारण करेंगी। ये अभियान पूर्णतया बुद्धिपूर्ण एवं शान्तिपूर्ण मनन के ही परिणाम नहीं हैं अपितु इनके अन्य कारण भी हैं। इस्लाम में पारस्परिक मार-काट निषिद्ध घोषित हो चुकी थी, इसलिए ऐसा जान पड़ता है कि इन अभियानों का आरम्भ कबीलों की लड़ाकू प्रवृत्ति को नवीन मार्ग पर ले जाने के निमित्त लूट मार के रूप में हुआ होगा; क्योंकि अधिकांश युद्ध लूट के धन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को प्राप्त करने के लिए ही लड़े गये थे और उस समय किसी भी देश पर स्थायी अधिकार जमाने की इच्छा न थी। पर जिन लोगों ने इस यंत्र की रचना की थी वे आगे चलकर इसको अपने नियंत्रण में न रख सके और जब लड़ने वालों को विजय के बाद विजय प्राप्त होती रही तो यह आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। तभी सुचारु रूप से अभियानों का आरम्भ हुआ और इस प्रकार स्वतः एक अरब साम्राज्य की उत्पत्ति हुई। अतः यह कहना उचित होगा कि यह साम्राज्य, आरम्भ के विचारपूर्ण आयोजन की तुलना में, तात्कालिक घटने वाली घटनाओं का स्वाभाविक परिणाम था।

इस्लाम के प्रसार के सम्बन्ध में दैवी सहायता की मुल्लाओं जैसी विचार-धारा, जो ओल्डटेस्टामेण्ट में यहूदी इतिहास के संबंध में तथा मध्ययुगीन इतिहास में ईसाई दर्शन के बारे में भी पायी जाती है, अधिकांशतः भाषा की अशुद्ध व्याख्या पर आधारित है। इस्लाम शब्द प्रारम्भ में धर्म, तदनन्तर एक राज्य और अन्त में एक संस्कृति—इन तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है। यहूदी धर्म और बौद्ध धर्म के विपरीत, इस्लाम, ईसाई धर्म की भाँति ही, एक आक्रामक और उपदेशक(मिशनरी) धर्म सिद्ध हुआ। अन्त में उसने एक साम्राज्य की स्थापना कर ली। वह इस्लाम जिसने उत्तरी क्षेत्रों को जीता था, धर्म नहीं था अपितु एक राज्य था। अरबों ने, एक ऐसे जगत् पर, जिसको यह कभी भी आशंका नहीं थी कि वे उस पर आक्रमण करने आरहे हैं (क्योंकि वे समझते थे अरब तो एक धार्मिक राष्ट्र है), आक्रमण कर दिया। यह अरब-राष्ट्रीयता ही थी जिसकी सर्वप्रथम विजय हुई, यह इस्लाम न था। द्वितीय और तृतीय हिजरी शती तक सीरिया, मेसोपोटामिया और ईरान की अधिकांश जनता ने इस्लाम को स्वीकार नहीं किया था।

मुसलमानों की सैनिक विजय के बहुत समय के पश्चात् यहाँ के लोगों ने इस्लाम को स्वीकार किया है। इनके इस्लाम-ग्रहण करने का सबसे बड़ा कारण इनका निजी लाभ था। यह इस्लाम ग्रहण कर, जजिया से बचना और अधिकारी वर्ग में सम्मिलित होना चाहते थे। संस्कृति के रूप में इस्लाम ने अपनी सैनिक विजय के पश्चात्, विगत शामी-अर्मनी, ईरानी और यूनानी सभ्यताओं के आधार पर अपने को विकसित किया। इस्लाम के कारण, निकट-पूर्व Near Orient ने केवल अपना खोया हुआ राजनीतिक अधिकार ही नहीं प्राप्त कर लिया अपितु सांस्कृतिक क्षेत्र में उसने अपना प्राचीन बौद्धिक गौरव भी प्राप्त कर लिया।

दूसरे देशों को जीतने के पूर्व अरब राष्ट्र के लिए अपने आप को संगठित करना आवश्यक था और वह अभी इस एकता की खोज में ही था कि अचानक हजरत मुहम्मद साहब के उत्तराधिकार अर्थात् "खिलाफत" का कठिन प्रश्न सामने आ उपस्थित हुआ। जब तक हजरत मुहम्मद साहब जीवित रहे, आप पैगम्बर,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विधिविधायक, धार्मिक नेता, मुख्य न्यायाधीश, सेनापति और राज्य के प्रधान के समस्त कर्तव्यों का अकेले ही पालन करते थे। किन्तु अब हजरत मुहम्मद साहब का देहान्त हो चुका था। अब प्रश्न यह था कि आध्यात्मिक कार्यों को छोड़कर आप का उत्तराधिकारी कौन हो, पैगम्बर के रूप में हजरत मुहम्मद साहब ने खुदा के अन्तिम सन्देश को जनता तक पहुँचा दिया था। इसलिए अब आप के पश्चात् किसी को पैगम्बरी मिलने का प्रश्न ही नहीं था। हजरत पैगम्बर साहब के कोई पुत्र न था। लेकिन एक मात्र पुत्री, "बीबी फातिमा" जो हजरत अली की पत्नी थीं, जीवित थीं। लेकिन अरब में मुखियागिरी या शेख की पदवी पूर्णरूप से पैतृक न थी। यह अधिकतर चुनावों पर निर्भर करती थी। कबीले का सबसे बड़ा व्यक्ति ही इस पद के लिए चुना जाता था। इसलिए यदि हजरत मुहम्मद साहब के पुत्र जीवित भी रहते तो भी आप के उत्तराधिकार की समस्या हल न होती। हजरत मुहम्मद साहब ने भी खुले रूप से किसी को अपना उत्तराधिकारी नहीं बनाया। खिलाफत वह समस्या थी जिसका सामना इस्लाम को सबसे पहले करना पड़ा था। यह समस्या आज भी विद्यमान है। सुल्तानी शासन के अन्त होने के १६ महीने पश्चात्, मार्च सन् १९२४ ई० में, कमाली तुर्कों ने कुस्तुन्तुनिया में उस्मानी खिलाफत का अन्त कर दिया जिस पर सुल्तान अब्दुल मजीद द्वितीय शासन करते थे। उस समय से लेकर अब तक काहिरा और मक्का में संसार के समस्त मुसलमानों के कई जलसे हजरत मुहम्मद साहब के वास्तविक उत्तराधिकारी के चुनने के लिए हुए किन्तु उनका कोई परिणाम न हुआ। "खिलाफत के अतिरिक्त और कोई ऐसी इस्लामी समस्या न थी जिसमें इतना रक्तपात हुआ हो"।

जब कोई जटिल समस्या जनता के समक्ष निर्णयार्थ छोड़दी जाती है तो नाना प्रकार के अनेक दलों का जन्म हो जाता है। ठीक यही स्थिति हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् भी उत्पन्न हुई। इस समय एक ओर "मुहाजिर"* थे जिनका यह कहना था कि उनका सम्बन्ध पैगम्बर साहब के कबीले से है और सर्वप्रथम उन्होंने ही उनके सन्देश को स्वीकार किया था। दूसरी ओर मदीना के अन्सार (सहायक) थे जो यह तर्क प्रस्तुत करते थे कि यदि हमने उभरते हुए। इस्लाम और हजरत मुहम्मद साहब को शरण न दी होती तो वे दोनों नष्ट हो गये होते। आगे चलकर ये दोनों दल, एक 'जमात' को चुनने के लिए एकत्र हुए और फिर वे लोग आगे आये जो हज़रत मुहम्मद साहब के उत्तराधिकार को पैतृक समझते थे। उनका तर्क यह था कि अल्लाह और हज़रत मुहम्मद साहब, मुसलमानों की जमात को केवल भाग्य और चुनने वालों की इच्छा पर नहीं छोड़ सकते, इसलिए अवश्य ही ऐसे स्पष्ट आदेश मौजूद होंगे और उन्होंने अवश्य ही किसी व्यक्ति को

*Imigrants—कहलाते थे। वे लोग जो मक्का छोड़कर मदीना में आबसे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपना उत्तराधिकारी घोषित किया होगा। इन लोगों की यह धारणा थी कि हज़रत मुहम्मद साहब के चचेरे भाई हजरत अली ही उनके उत्तराधिकारी हो सकते थे जो आप की एक मात्र जीवित पुत्री के पति थे और जिनकी गणना आरम्भ के दो-तीन ईमान लाने वालों में की जाती थी। केवल यही एक ऐसी जमात थी जो चुनाव-सिद्धान्त के विरुद्ध "ईश्वरीय अधिकार" के सिद्धान्त को मानने वाली थी। और कुरैश वंश के सामन्तशाही बनीउमैया, इस्लाम के पूर्व, अधिकार, शक्ति एवं धन के स्वामी थे। वे सबसे अन्त में इस्लाम लाये थे। उत्तराधिकार क विषय में वे भी अपने आप को अधिकारी समझते थे।

इस खींच-तान में सफलता प्रथम दल (मुहाजिरों) को मिली। वयोवृद्ध एवं धर्मात्मा अबूबक्र जो हजरत मुहम्मद साहब के श्वसुर भी थे और सर्वप्रथम इस्लाम धर्म को स्वीकार करने वाले तीन-चार व्यक्तियों में से थे, एक जनसभा में खलीफा चुन लिये गये। इनका नाम धर्मपरायण खलीफाओं की सूची में सर्वोपरि है। इस सूची में हजरत उमर, हजरत उस्मान और हजरत अली भी सम्मिलित हैं। यह वह समय था जिसमें हज़रत मुहम्मद साहब के जीवन की आभा इन चारो खलीफाओं के विचार एवं क्रिया पर समाप्त नहीं हुई थी। ये चारो खलीफा हजरत मुहम्मद साहब के निकट के साथी एवं सम्बन्धी थे। मदीना इस्लामी साम्राज्य की राजधानी घोषित हुआ।

अरब ऐतिहासिकों का यह कथन है कि हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु होते ही 'हिजाज़' के अतिरिक्त समस्त अरब ने इस नवसंगठित राज्य से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। तथ्य तो यह है कि यातायात के साधन और उपदेश सम्बन्धी कार्यों की सुसंगठित प्रणाली की अनुपस्थिति और समय के अभाव के कारण, हजरत मुहम्मद साहब के जीवन में अरब प्रायद्वीप का एक तिहाई भाग ही इस्लाम ग्रहण कर आप के शासन को स्वीकार कर सका था। 'हिजाज़' भी जो आप का अति निकटस्थ कार्य-क्षेत्र था, आप की मृत्यु के एक-दो वर्ष पूर्व ही इस्लाम ग्रहण कर सका था।

निरन्तर कई छोटे छोटे किन्तु भयंकर युद्धों के पश्चात् हजरत अबूबक्र ने, एक-एक करके उन लोगों को जो इस्लाम को स्वीकार कर मुकर गये थे, जीता। इन युद्धों के सेनापति ख़ालिद बिन वलीद हुए थे। उन्होंने सेनापतित्व के गुणों का पूर्ण रूप से परिचय दिया और इस्लाम शीघ्र ही सुसंगठित हो कर आगे बढ़ने के लिए तैयार हो गया।

सर्वप्रथम अरब प्रायद्वीप के उत्तर में स्थित सीरिया की बारी आयी। लगभग एक हजार वर्ष से बेजेण्टाइन लोग, रोमनों और सिकन्दर का उत्तराधिकार समझ कर, इस पर अपना अधिकार जमाये हुए थे। उनके सरदारों को इस बात का ध्यान भी न था कि इस समय आवश्यकता से अधिक आगे बढ़ आने वाले अरब लुटेरे साधारण लुटेरों से कछ अधिक महत्व रखते थे। लेकिन उन्हें अत्यन्त शीघ्र ही यह ज्ञात हो गया कि उनका शत्रु एक नयी शक्ति का अधिकारी है और एक नये अस्त्र अर्थात्—"तीव्र गति से" युक्त है। अरब के ऊँट, युद्धों में एक अप्रतिरोधनीय तत्व (Irresistible Element) का रूप धारण कर रहे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरब को सेना बेजेन्टाइन लोगों से हार रही थी। खालिद—"ईश्वर की तलवार"—को यह आदेश हुआ कि वह इनकी सहायता करें। उन्होंने एक अनुभवी सेना के साथ ऊँटों पर लम्बी-लम्बी यात्राएँ कर निचले ईराक के लम्बे-चौड़े रेगिस्तान को पार किया और नाटकीय गति से सीरिया की राजधानी दमिश्क में आ धमके। सेना के लिए पानी मशकों में लाया गया था और घोड़ों के लिए पानी उन बूढ़े ऊँटों के पेट से निकाल कर एकत्र किया गया था जो खाने के लिए मारे गये थे। दो सप्ताह के पश्चात् खालिद पूरी अरब सेना को नेतृत्व में कर के, शहर के फाटक पर जा पहुंचे।

दमिश्क, परम्परानुसार विश्व का प्राचीनतम नगर माना जाता था। इसकी चहारदीवारी से एक स्मरणीय रात्रि को, जब कि 'पाल' भागा है, वह एक टोकरी के सहारे नीचे उतारा गया था। यह शहर शीघ्र ही इस्लामी साम्राज्य की राजधानी बनने वाला था। छः महीने के घेरे के पश्चात् इसने आत्मसमर्पण कर दिया। दूसरे नगर भी शतरंज के मोहरों के भाँति एक-एक करके परास्त होते गये। अभी एक युद्ध और शेष था। पूर्वी साम्राज्य के शासक हर्कुलिस (Heraclius) ने मुसलमानों का सामना करने के लिए पचास हजार सैनिकों की एक सेना भेजी। २० अगस्त, सन् ६३६ ई० को खालिद ने अपने शत्रु की सेना की तुलना में आधी सेना के साथ 'यरमूक' (yarmuk) की घाटी में, जो जार्डन की एक सहायक है, उसका मुकाबिला किया। यह स्थान संसार के सर्वाधिक बंजर स्थानों में से था। दिन गर्म था और धूल-धक्कड़ से आकाश भी आच्छन्न था। अरब के सेनापति ने स्पष्टतया इस दिन को बड़ी बुद्धिमानी से चुना था। अरब के इन मरुस्थल-पुत्रों के भयंकर आक्रमणों के सामने बेजेन्टाइन सेना की कुछ न चली यद्यपि उनके धार्मिक नेता मन्त्रों और दुआओं के साथ क्रास लिये हुए उनका साहस बढ़ा रहे थे। बेजेण्टाइन की मद्य-सभा उनकी हत्या का क्षेत्र बन गयी। अब कोई शक्ति इस्लामी सेना को रोकने वाली न थी और वह सीरिया की प्राकृतिक सीमा टौरस (Taurus) तक बढ़ती चली गयी।

इतनी तीव्र गति और सुविधा से ऐसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र का अपने समय के सबसे शक्तिशाली शासक के हाथ से छीन लेने की यह एक ऐसी घटना थी जिसने संसार की दृष्टि में इस्लाम की उभरती हुई शक्ति का सम्मान बढ़ा दिया और उससे महत्त्व की बात यह कि उनको अपने भाग्य पर विश्वास होगया। सीरिया को केन्द्र बना कर अर्मीनिया, उत्तरी मेसोपोटामिया, जार्जिया, और आजरबाईजान (Adharbayjan) पर आक्रमण करना सम्भव हो गया था। तदनन्तर एक समय तक एशिया-माइनर पर यहीं से छापे मारे जाते और आक्रमण होते रहे।

ऐसी ही फुर्ती और ऐसी ही युद्ध सम्बन्धी चालें चलकर अल्लाह के लिए युद्ध करने वालों ने जब ईरान की ओर ध्यान किया तो यहाँ पर भी उन्होंने ऐसी ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सफलता प्राप्त की। सन् ६३७ ई० में एक विशाल सासानी सेना एक ऐसे दिन जब आकाश धूल से आच्छन्न था, आतंकित हो छिन्न-भिन्न हो गयी। फलतः ईराक की उर्वर निचली भूमि और दजला नदी के पश्चिम का उर्वर क्षेत्र आक्रमणकारियों के लिए खुल गया। अपनी विशिष्ट फुर्ती और साहस के साथ मुसलमान आगे बढ़ते गये और उन्होंने दजला को पाँव से पार करने योग्य स्थान से पार किया। सोतों की बाढ़ के कारण नदी चढ़ी हुई थी, फिर भी इसे उन लोगों ने इस चतुराई से पार किया कि एक सैनिक की भी जान न गयी। ईराक-निवासियों ने भी सीरिया निवासियों की भाँति आक्रमणकारियों का स्वागत किया। इन दोनों स्थानों के निवासी अपने पुराने शासकों को घृणा की दृष्टि से देखते थे और उनको अपना शत्रु समझते थे। यूनानी और ईरानी सभ्यता उनके ऊपर बलपूर्वक, थोप दी गयी थी लेकिन यहाँ के निवासियों ने उसे पूर्ण रूप से नहीं स्वीकार किया था। ईरान के सम्राट् और उसकी सेना ने बिना युद्ध किये ही अपनी राजधानी "टेसीफोन" Ctesiphon को खाली कर दिया। मुसलमान, एशिया के इस भाग के महान राजकीय नगर में विजेता के रूप में प्रवेश कर गये। ईरान के सम्राट् को उसकी प्रजा के एक व्यक्ति ने उसके मुकुट के रत्नों के लोभ के कारण मार डाला। १२०० वर्षों से निरन्तर फलते-फूलते चले आने वाले ईरान के साम्राज्य का, इस सम्राट की हत्या के साथ अन्त हो गया। इसके पश्चात् लगभग ८०० वर्ष तक इसकी पुनः स्थापना न हो सकी।

इस प्रकार प्रथम बार "अरब-मरुस्थल" की सन्तानें ऐश्वर्य एवं सुख के सम्पर्क में आईं। ईरान का राजकीय प्रासाद अपने विस्तृत दरबार-आम, सुन्दर मेहराबों और बहुमूल्य सामग्रियों एवं सज-धज के साथ, अरब प्रायद्वीप के मिट्टी के मकानों की तुलना में, एक महान् अन्तर प्रस्तुत कर रहा था। अरबों की शिक्षा प्रारम्भ हो रही थी। और ऐसी दशा में, जैसा कि प्रायः देखा जाता है, कुछ विनोदपूर्ण बातें भी हो रही थीं। कपूर को जिसे उन्होंने इसके पूर्व कभी नहीं देखा था, नमक समझकर खाने में डाल लिया। कुछ सिपाही सोने से परिचित नहीं थे। वे उसे चाँदी से बदलने के लिए दौड़े, जिसे वे पहले से जानते थे। एक सिपाही ने लूट के धन में प्राप्त एक अमीर घर की लड़की को सिर्फ एक हजार दिरहम में बेच डाला और जब उसको लज्जित किया गया तो उसने उत्तर दिया कि मुझे यह नहीं मालूम था कि १००० के ऊपर भी कोई संख्या होती है।

एक बार ईराक की सीमा पार कर लेने के पश्चात् मुख्य ईरान में आक्रमणकारियों को एक कड़े विरोध का सामना करना पड़ा और देश पर पूर्ण रूप से अधिकार पाने के लिए दस वर्ष व्यतीत करने पड़े। ईरान के लोग आर्य वंश के थे, सामी वंश के न थे। वे युद्ध-स्थल में एक सुसंगठित सैनिक शक्ति लेकर आये थे जो लगभग चार सौ वर्ष से रोमनों का मुकाबिला करती चली आ रही थी। लेकिन यह शक्ति भी उनके सामने टिक न सकी और सन् ६४३ ई० में अरब, भारत की सीमा तक पहुँच गये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इधर पूर्व की ओर मुसलमानों का यह विजयपूर्ण बढ़ाव जारी ही था, उधर पश्चिम में भी उनकी बाढ़ बढ़ती जा रही थी। सैनिक दृष्टि से मिस्र को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। वह सीरिया और हिजाज से मिला हुआ था। उसकी स्थिति खतरे से खाली न थी! अपने उपजाऊ होने के कारण वह कुस्तुनतुनिया के लिए नाज का भण्डार समझा जाता था। उसकी राजधानी सिकन्दरिया वस्तुतः बेजेन्टाइन नौ-सैना का आधार थी और मिस्र देश शेष उत्तरी अफ्रीका के लिए एक दरवाजे का कार्य कर रहा था।

इन समस्त बातों ने अपने प्रसार के प्रारम्भिक काल में ही अरबों की दृष्टि को नील की घाटी की ओर आकर्षित कर लिया। अपने नामी प्रतिद्वन्द्वी खालिद से बाजी मार ले जाने के उद्देश्य से सन् ६३६ ई० में अम्र बिन आस ४००० अश्वारोहियों के साथ फिलिस्तीन के मार्ग से समुद्र के किनारे-किनारे मिस्र की ओर चल पड़ा। यह वह पिटा हुआ मार्ग है जिस पर किसी समय हजरत इब्राहीम, कम्बोजिया, सिकन्दर, ऐन्टीकस और धार्मिक परिवार (हजरत ईसा और उनकी माता बीबी मरियम) तथा इन सब के पश्चात् नेपोलियन एवं एलम्बी भी चल चुके हैं। यह प्राचीन संसार का अन्तर्राष्ट्रीय मार्ग था।

पुनः वही दृश्य उपस्थित हुआ। वही हंगामा, घेरा, आक्रमण और "अल्लाहो अकबर" का जय नाद—ईश्वर सर्वोपरि महान् है। अब बाबुल ने भी आत्मसमर्पण कर दिया।

अरब से सहायतार्थ आई हुई नयी सेना के कारण 'अम्र' की सेना २०,००० तक पहुँच गई और वह एक दिन प्रातःकाल मिस्र की राजधानी एवं उसके सबसे बड़े बन्दरगाह सिकन्दरिया की प्रत्यक्षतः दुर्भेद्य चहारदिवारी पर दृष्टिपात करती हुई दृष्टिगोचर हुई। दाहिनी ओर गगनचुम्बी सिरैपियम खड़ा था जिसमें किसी समय सिरापिस का मन्दिर तथा सिकन्दरिया का सबसे बड़ा पुस्तकालय था। दूसरी ओर सेंट मार्क का सुन्दर गिरजाघर शान से खड़ा था। इसमें किसी समय कैसर का मन्दिर था जिसे जूलियस सीज़र की स्मृति में केलोपेट्रा ने बनवाना आरम्भ किया था लेकिन अगस्टस ने उसे पूरा करवाया था। दूर पश्चिम की ओर दो लाल मीनार दिखाई पड़ रहे थे जो केलोपेट्रा द्वारा बनवाये हुए कहे जाते थे। लेकिन तथ्य तो यह है कि उनको तूतमोस तृतीय (१४५० ई० पू०) ने बनवाया था। ये दोनो मीनारें वही हैं जो अब लन्दन में टेम्स नदी के बन्दरगाह और न्यूयार्क में सेन्ट्रल पार्क की शोभा बढ़ा रही हैं। इसकी पृष्ठभूमि में प्रकाशस्तम्भ स्थित था जो दिन में सूर्य की किरणों से चमक उठता था और रात्रि को स्वयं अपने प्रकाश से जगमगाता रहता था, वस्तुतः इसकी गणना विश्व के सात आश्चर्यों में की जाती है। कोई आश्चर्य की बात नहीं है यदि इस दृश्य का मरुस्थलीय अरबों के मस्तिष्क पर वही प्रभाव पड़ा हो जो आधुनिक न्यूयार्क की "स्काई लाइन" (आकाश पंक्ति) एवं गगनचुम्बी भवनों का नवागन्तुकों के मस्तिष्क पर पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिकन्दरिया को इस बात का गर्व था कि उसकी सुरक्षा के लिए ५०,००० सैनिकों की एक विशाल सेना उद्यत है और उसकी सहायता के लिए बेजेण्टाइन नौसेना की पूर्ण शक्ति लगी हुई है, जिसका केन्द्र स्वयं सिकन्दरिया का शहर है। इस प्रकार की शक्ति की तुलना में आक्रमणकारी, संख्या एवं युद्ध-सामग्री की दृष्टि से, बहुत ही तुच्छ थे। इनके पास न तो कोई जहाज था न तो दुर्ग भेदने वाला कोई यंत्र, और न तो सैनिकों की संख्या में वृद्धि होने का कोई साधन तत्काल उपलब्ध था।

एक वर्ष भी व्यतीत न होने पाया था कि विजय के निम्नांकित शुभ समाचार हजरत उमर के पास पहुँचने लगे, जो उस समय मदीना में खलीफा हो चुके थे :—

"मैंने नगर जीत लिया है। उसका विवरण मैं न दे सकूँगा। इतना उल्लेख कर देना पर्याप्त है कि मैंने ४,००० प्रासादों, ४,००० स्नानागारों और ४०,००० कर देने वाले यहूदियों तथा ४०० राजकीय मनोरंजन-स्थलों पर अधिकार कर लिया है।" खलीफा ने अपने सेनापति के दूत का स्वागत रोटी और खजूर से किया, तथा हजरत पैगम्बर साहब की मस्जिद में शुकराने की सादी और गौरवपूर्ण नमाज़ पढ़ी—"अल्लाहो अकबर।"

वह स्थान, जहाँ अम्र ने बेबीलोन के पास अपना खेमा डाला था, फुस्तात के नाम से नयी राजधानी बन गया। आज भी वह स्थान प्राचीन काहिरा के नाम से विद्यमान है। यहाँ पर मिस्र के विजेता ने एक साधारण मस्जिद की नींव डाली थी जो मिस्र की पहली मस्जिद थी और जो आज भी अपनी मरम्मत की हुई दशा में विद्यमान है। यह कहानी, कि खलीफा हजरत उमर की आज्ञा से 'अम्र' छः महीने तक सिकन्दरिया के पुस्तकालय की पुस्तकों को नगर के विभिन्न स्नानघरों की भट्ठियों में जलवाते रहे, निराधार है। इससे अच्छे उपन्यास की रचना तो हो सकती है, पर अच्छे इतिहास की रचना नहीं हो सकती। टाल्मी के महान् पुस्तकालय को जूलियस सीज़र ने ४८ ई० पू० में जलवा दिया था। इसके पश्चात् एक और पुस्तकालय को जिसका वर्णन 'डाटर लाइब्रेरी' के नाम से किया जाता था, सन् ३८९ ई० में रोमन सम्राट् थ्यूडोसियस की आज्ञा से नष्ट कर दिया गया था। जिस समय अरबों ने सिकन्दरिया को जीता, उस समय वहाँ पर कोई महत्वपूर्ण पुस्तकालय न था और न तो किसी समकालीन लेखक ने हजरत उमर और सेनापति अम्र पर इस प्रकार का दोषारोपण ही किया है।

मिस्र की विजय से वेजेन्टाइन के उन सूबों के दरवाजे बिलकुल खुल गये जो मिस्र की पश्चिमी सीमा पर स्थित थे, और अब किसीप्रकार की रोक-टोक बाकी न रही। सिकन्दरिया की जीत के पश्चात् अपनी सेना के पिछले भाग को बचाने के उद्देश्य से अम्र अपनी स्वाभाविक तीव्रता से पश्चिम की ओर अपनी अश्वारोही सेना के साथ बढ़े। इनके आक्रमण ने अफ्रीका के उत्तरी किनारे से लेकर बर्बरों के ट्रिपोली नामक नगर तक हजरत पैगम्बर साहब का झण्डा लहरा दिया। इस झण्डे को शीघ्र ही और आगे बहुत दूर तक जाना था।

——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

७—ख़िलाफ़त

इतिहास-वर्णन के प्रिय प्रसंगों में से एक यह है कि असभ्य नवोन्नत जाति अपनी तरोताजा शक्ति से किसी प्राचीन सभ्यता को जीत लेती है और फिर अपने नवीन अर्जित उत्कर्ष के आनन्दों में मगन और विमुग्ध होकर स्वयं भी दुर्बलता को अन्ततः प्राप्त होती है। अरब-निवासियों की चल रही कहानी में अब ऐसे ही प्रसंग का आविर्भाव हो रहा है।

अरब की द्वितीया के चन्द्रमा के सदृश उर्वर भूमि, तथा ईरान और मिस्र की भूमि को जीत कर अरब लोगों ने समस्त विश्व के प्राचीन सभ्यता-केन्द्रों पर अधिकार कर लिया था। कला, भवननिर्माण कला, दर्शन, चिकित्सा, विज्ञान, साहित्य एवं राजनीति आदि किसी विषय में भी बद्दू अरब इस योग्य न थे कि वे दूसरों को कुछ सिखा सकते। उनको तो हर विषय दूसरों से ही सीखना था और इन विषयों को सीखने की कितनी उत्कट अभिलाषा उन लोगों में प्रकट हुई! अत्यन्त महती उत्सुकता एवं अब तक प्रच्छन्न अपनी अन्तर्निहित शक्तियों से इन अरब मुस्लिमों ने, अपनी जीती हुई जातियों के सहयोग और सहायता से सीखना और वस्तुओं को अपनाना तथा पुनः उनको अपने रंग में रंग कर एव अपनी बौद्धिक तथा सौन्दर्यात्मक पैतृक सम्पत्ति बना कर विश्व के समक्ष प्रस्तुत करना आरम्भ किया। तसीफोन, दमिश्क, जेरुसलम और सिकन्दरिया में उन्होंने बड़े-बड़े शिल्पकारों, कारीगरों, जौहरियों एवं निर्माताओं के कृत्यों को देखा और उनकी सराहना की तथा स्वयं उनके अनुरूप करने लगे। प्राचीन सभ्यता के उन समस्त केन्द्रों पर वे गये, उनका अवलोकन किया और अपने ऊपर उनकी पूरी छाप ली।

आज जिस सभ्यता को हम अरब सभ्यता के नाम से पुकारते हैं, वह न तो बुनियादी ढाँचे की दृष्टि से अरबी थी और न नीति और आचार ही की दृष्टि से उसे हम अरबी कह सकते हैं। नितांत अरबी देन तो भाषा के ही क्षेत्र में थी और किसी सीमा तक धार्मिक क्षेत्र में भी। खिलाफत के सम्पूर्ण काल में, सीरिया-निवासी, ईरानी, मिस्री और अन्यान्य ने, चाहे वे नवमुस्लिम रहे हों अथवा यहूदी और ईसाई, उनके ही विद्या और ज्ञान के आलोक से मार्ग ठीक उसी प्रकार प्रशस्त होता रहा, जिस प्रकार पराधीन यूनानियों ने अपने विजेताओं (रोमनों) का पथ-प्रदर्शन किया था। अरबों की इस्लामी सभ्यता के मूल में यूनानी, आरामी, और ईरानी सभ्यताएँ थीं, जो खिलाफत के संरक्षण में, फूली-फलीं और अरबी भाषा के माध्यम से व्यक्त हुईं। दूसरे शब्दों में अरबी सभ्यता, द्वितीया के चन्द्रमा के आकार की उर्वर भूमि की प्रारंभिक सामी सभ्यता का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खलीफों का साम्राज्य (सन् ७५० ई०)

हजरत मुहम्मद साहब एवं प्रथम खलीफा के समय की विजय (६२२-६३४)

प्रथम चार खलीफाओं के समय की विजय (६३२-६५६)

अल-वलीद तक के अमवी वंश की विजय (६६१-७१५)

सुलेमान (७१५-७१७) और उसके उत्तराधिकारियों (७५० तक) की विजय



0 २०० ४०० ६०० मील

बलगर्स
काला सागर
कुस्तुन्तुनिया
बासफोरस
ब्रुसा
अमूरिया
पूर्वी रोमन साम्राज्य
रोन
कारकेज
कैरवान
महदिया
भूमध्य सागर
ट्रिपोलिस
बुर्का
साईप्रस
सिकन्दरिया
अलफुस्तात
मिस्र
न्युबिया
दमिश्क
जेरूसलम
अलकूफा
अलहीरा
अलबसरा
बगदाद
समरा
अलमोसिल
मेसोपोटामिया
आर्मीनिया
कैस्पियन सागर
निहावन्द
खुरासान
परसिया
फारिस
इस्तरव
करमान
शीराज
मुकरान
फारस की खाड़ी
ओमान
मसकत
नज्द
मदीना
मक्का
अरब
लाल सागर
हजरमौत
अल-यमन
अल-देबुल
मुल्तान
काबुल
बलख
बुखारा
समरकन्द
फ्रान्स
अस्तूरिया
टोलेडो
अण्डलूसिया
कर्त्तबा
टैंजियर
अल मगरिब

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाभाविक तारतम्य थी जिसका बाबुल-असीरियों, फोनेशियों, अर्मेनियों, तथा हेब्रुओं द्वारा विकास तथा पालन-पोषण होता रहा। इसी सभ्यता के द्वारा पश्चिमी एशिया की भूमध्यसागरीय सभ्यता की एकता अपनी चरम सीमा पर पहुँची थी।

प्रथम दो खलीफाओं (अर्थात् हजरत अबूबक्र जिन्होंने ६३२ से ६३४ तक तथा हजरत उमर जिन्होंने ६३४ से ६४४ तक शासन किया) में हमें सही-सही उस व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं, जो वस्तुतः मुस्लिम अरब ने विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया। विजेता और अरब के शान्ति-संस्थापक हजरत अबूबक्र ने एक मुखिया के तद्रूप सादा जीवन व्यतीत किया। अपने संक्षिप्त शासनकाल के प्रथम छः महीनों में वह अलसुन्ह (Alsunh) से, जहाँ वह एक साधारण से घर में अपनी पत्नी हबीबा के साथ रहा करते थे, नित्यप्रति खिलाफत का कार्य करने के निमित्त मदीने आया-जाया करते थे। उनको इस कार्य के लिए कोई भत्ता नहीं मिलता था क्योंकि उस समय खिलाफत की मुश्किल से ही कोई आमदनी थी। खिलाफत का सारा कार्य आप 'मस्जिदे नबवी' * के प्रांगण में बैठ कर निपटाया करते थे।

हजरत उमर हजरत अबूबक्र के उत्तराधिकारी हुए। वह बड़े सीधे सादे चुस्त एवं प्रतिभावान थे। आप बड़े मितव्ययी भी थे। आप बड़े लम्बे-चौड़े तथा मजबूत शरीर वाले थे। खलीफा होने के पश्चात् भी वे कुछ समय तक व्यापार के द्वारा अपना जीवन व्यतीत करते रहे। एक बद्दू-शेख (Bedouin Sheikh) की भाँति, आप का जीवन हर प्रकार के दिखावे और तड़क-भड़क से रहित था। मुस्लिम परम्परा के अनुसार महत्ता की दृष्टि से आप का नाम हजरत मुहम्मद साहब के पश्चात् ही आता है। मुस्लिम लेखकों ने आपको दयालुता, न्याय, एवं कुलपति जैसी यथोचित सादगी की मूर्ति माना है। आपको उन समस्त गुणों का साक्षात् स्वरूप समझते हैं, जिनका एक खलीफा में पाया जाना आवश्यक है। कहा जाता है कि आप के पास केवल एक कमीज और एक तहमत था। इनमें भी अनेक पेबन्द लगे थे। आप खजूर की चटाई पर सोया करते थे। आप को धर्म की पवित्रता को बनाये रखने के अतिरिक्त और किसी बात की चिन्ता न थी। आप न्याय को बनाये रखने, और इस्लाम तथा अरबों की सुरक्षा एवं उन्नति के लिए सदैव बेचैन रहते थे। अरबी साहित्य हजरत उमर के सुदृढ़ चरित्र की कहानियों से भरा पड़ा है। कहा जाता है कि आप ने अपने एक लड़के को मद्यपान एवं व्यभिचार के दंड में इतने कोड़े

* पैगम्बर साहब ने जो मस्जिद मदीने पहुँच कर बनवाई थी, उसे 'मस्जिदे नबवी' के नाम से पुकारा जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगाये कि उसका देहान्त हो गया। एक बार जब आप क्रोध में थे एक बद्दू आप के पास किसी व्यक्ति के अत्याचार के विरुद्ध सहायता पाने के लिए आया। आपने उसी को कोड़े लगवा दिये। बाद में आप ने अपने किये पर पश्चाताप किया और बद्दू से निवेदन किया कि वह उनके उतने ही कोड़े लगाये। पर बद्दू ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। तदनन्तर आप अपने घर आये और उस समय आप की जिह्वा पर ये वाक्य थे—"ऐ खत्ताब के पुत्र! तेरी कोई हस्ती न थी, अल्लाह ने तुझे प्रतिष्ठा प्रदान की। तू पथभ्रष्ट था, अल्लाह ने तेरा पथप्रदर्शन किया; तू निर्बल था, अल्लाह ने तुझे शक्ति प्रदान की। फिर उसने तुझे तेरी जमात का शासक बनाया और जब उन लोगों में से कोई तुझसे सहायता माँगने आया तो तूने उसको मारा। तू ईश्वर को क्या उत्तर देगा जब तू उसके समक्ष अपने आप को प्रस्तुत करेगा।"

यह बात महत्त्वपूर्ण है कि ऐसे अवसर पर जब आप का जीवन चरमोत्कर्ष पर था, उस समय एक ईसाई ईरानी गुलाम ने जहर में बुझाये हुए खंजर से आपकी हत्या कर दी।

हजरत उमर के उत्तराधिकारी हजरत उस्मान ने बारह वर्ष तक शासन किया और एक विद्रोह के अवसर पर मुसलमानों द्वारा उनकी हत्या कर दी गई। चौथे खलीफा हजरत अली (६५६-६१ ई०) को यद्यपि समस्त इस्लामी जगत ने अपना खलीफा स्वीकार कर लिया था, फिर भी शीघ्र ही उनके विरुद्ध एक गिरोह उठ खड़ा हुआ और शासनाधिकार के लिये उन खान्दानी युद्धों का आरम्भ हो गया जो समय-समय पर भड़क कर इस्लाम को क्षति पहुँचाने और उसकी नींव को कमज़ोर करने लगे। पाँच वर्ष के पश्चात् हजरत अली भी एक जहर में बुझी हुई तलवार के शिकार हो गये।

हमें यहाँ पर एक व्यापक भ्रम से बचना चाहिए कि 'खिलाफत कोई धार्मिक पद था'। इस सम्बन्ध में पवित्र रोमन साम्राज्य और कैथोलिक चर्च के प्रधान पद (पोप) से जो उपमा दी जाती है, वह भ्रामक है। मुसलमानों के सेनापति के नाते खलीफा के सैनिक-पद को विशेष महत्व दिया जाता था। इमाम के रूप में खलीफा जन-प्रार्थना (सामूहिक नमाज) का अगुआ होने का अधिकारी था और नमाज पढ़ाता था। वह जुमे को उपदेश भी दिया करता था। पर यह कार्य ऐसा था जिसे साधारण से साधारण मुसलमान भी कर सकता था। हजरत मुहम्मद साहब के उत्तराधिकार (अर्थात् खिलाफत) का तात्पर्य "राज्य की सार्वभौमिकता" के उत्तराधिकार से था। हजरत मुहम्मद साहब का, एक पैगम्बर, दैवी संदेश (वही) के प्रकट होने का माध्यम तथा अल्लाह के सन्देशवाहक के रूप में, कोई उत्तराधिकारी नहीं हो सकता था। धर्म से खलीफा का उतना ही सम्बन्ध था कि वह उसका रक्षक और सरपरस्त होता था। धर्म की सुरक्षा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में उसको उतना ही सर्वाधिकार प्राप्त था, जितना एक यूरोपीय शाहंशाह को। खलीफा काफिरों का दमन करता था, ईमान न लाने वालों के विरुद्ध धर्मयुद्ध (जेहाद) छेड़ता था और दारुलइस्लाम की सीमा का प्रसार करता था। इन सब कार्यों के लिए वह अपनी अनन्त सैनिक शक्ति का प्रयोग करता था। अठारहवीं शती के अन्त तक योरोप में इस प्रकार की कोई भी विचारधारा नहीं पायी जाती कि मुसलमानों का खलीफा एक पोप के समान था जिसको सम्पूर्ण विश्व के मुहम्मद के अनुयायियों पर आध्यात्मिक अधिकार प्राप्त था। चतुर अब्दुलहमीद द्वितीय ने, जिसके समय तक योरोपीय शक्तियों ने एशिया और अफ्रीका के अधिकांश मुस्लिम देशों पर अधिकार कर लिया था, उन योरोपीय शक्तियों की दृष्टि में अपनी प्रतिष्ठा की वृद्धि करने के लिये इस विचार से लाभ उठाया। ईसाई शक्तियों के विरुद्ध "क्रिया की एकता" Unity of Action उत्पन्न करने के निमित्त, गत शती के अन्त में "पान इस्लामिज्म" (समस्त मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करना) की अस्पष्ट परिभाषा के आधार पर एक वृहद् आन्दोलन का आरम्भ हुआ। यह आन्दोलन तुर्की को केन्द्र मान कर, समस्त मुसलमानों पर खिलाफत के सार्वभौमिक अधिकार की बात को अनुपयुक्त महत्त्व प्रदान करता था।

हजरत अली से खिलाफत लेने वाले उनके एक दूर के चचेरे भाई मोआविया थे। यह बड़े ही बुद्धिमान और उस काल में सीरिया के गवर्नर थे। उनके समय में शासन-सत्ता के सिद्धान्त ने एक नया रूप धारण किया। खिलाफत वंशानुगत बन गयी और उसकी नींव अबतक के प्रचलित सामयिक चुनावों के बजाय उत्तराधिकार के सिद्धान्त पर पड़ गयी। अब हम जिस समय का वर्णन कर रहे हैं, उसमें तीन बड़े वंश सामने आये। एक तो 'बनी उमैया' का वंश था जिसका आरम्भ सन ६६१ ई० में दमिश्क में अमीर मोआविया की खिलाफत से हुआ। दूसरा वंश अब्बासियों का था जो बगदाद में सन् ७५० ई० से सन् १२५८ ई० तक चलता रहा। तीसरा वंश फातिमियों का था जिसने सन् ९०९ ई० से लेकर सन् ११७१ ई० तक शासन किया। इनकी राजधानी काहिरा में थी। 'बनी उमैया' की एक प्रतिष्ठित शाखा स्पेन में सन् ९२९ई० से सन् १०३१ ई० तक शासन करती रही। उसकी राजधानी कर्त्तबा (Cardova) में थी। इन तीनो वंशों में केवल फातिमी वंश ही ऐसा था जो हजरत अली का वंशज होने का दावा करता था। वंशानुगत शासन के सिद्धान्त से शासन में राजनीतिक स्थिरता उत्पन्न करना ही मुख्य उद्देश्य था। पर तथ्य तो यह है कि इस अवधि में शायद ही कोई ऐसा लम्बा काल आया हो जिसमें रक्तपूर्ण आन्तरिक युद्ध ने इस्लाम पर मुसीबतें न ढायी हों। इसमें ऐसे काल भी आये हैं जब खलीफा, साम्राज्य का नाममात्र का प्रधान होते हुये अपनी राजधानी पर भी अपना नियंत्रण नहीं रख सका। अमीर मुआविया की शक्तिविकास के साथ जो घटनाएँ घटीं उनमें एक ऐसी आवाज भी थी जिसकी गूँज बढ़ती गयी और जो आगे आने वाली सदियों में सुनाई देती रही। ईराक ने हजरत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अली के लड़के हजरत हसन के विषय में यह घोषित किया कि राजसिंहासन के यही वास्तविक उत्तराधिकारी हैं। उनका तर्क यह था कि हजरत हसन, भूतपूर्व खलीफा हजरत अली और हजरत पैगम्बर साहब की एक मात्र जीवित पुत्री फातिमा के सबसे बड़े पुत्र थे। किन्तु दुर्भाग्यवश हजरत पैगम्बर साहब के नाती बहुत समय तक विलासमय जीवन में भटकते रहे थे। उनकी प्रतिभा प्रशासकीय क्षेत्रों को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में अधिक थी। उनकी मृत्यु ४५ वर्ष की अवस्था में हुई थी। लेकिन इतनी ही उम्र में वह कम से कम १०० बार निकाह कर तलाक दे चुके थे। और इस प्रकार उन्होंने "महान तलाककार" (The Great Divorcer) की उपाधि प्राप्त की। हजरत हसन किसी प्रकार से भी अपनी योग्यता की वास्तविकता से अपरिचित नहीं थे। इसलिए उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक अमीर मुआविया को खलीफा बन जाने दिया और जीवन भर एक वजीफा स्वीकार करके खिलाफत से अलग हो गये।

अमीर मोआविया असाधारण प्रशासकीय प्रतिभा वाले व्यक्ति थे। उन्होंने अराजकता से उठा कर एक नियमित मुस्लिम समाज का निर्माण किया। समस्त इस्लामी युद्धों में पहली सेना उन्हीं की थी जो अनुशासित सेना के रूप में प्रसिद्ध हुई। ऐतिहासिक उनको इस बात का भी श्रेय देते हैं कि इस्लामी राज्य में वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने रजिस्ट्री विभाग की स्थापना की और जिन्होंने सर्वप्रथम डाक की व्यवस्था करने में रुचि ली और अति शीघ्र उसे विकसित कर एक सुसंगठित प्रबंध कर दिया, जिसने साम्राज्य के विभिन्न भागों को परस्पर मिला दिया।

अमीर मुआविया के व्यक्तित्व में जिस सीमा तक राजनीतिक बुद्धि समुन्नत थीं, उस सीमा तक किसी भी अन्य खलीफा में न थी। इनकी जीवनी लिखने वाले अरब लेखकों ने उनकी 'हिल्म' की सर्वाधिक प्रशंसा की है जिसका तात्पर्य 'स्वभाव की कोमलता' है, अर्थात् शक्ति उसी समय प्रयुक्त की जाय जब उसके अतिरिक्त कोई और चारा न हो; ऐसे अवसरों के अतिरिक्त हर दशा में शान्तिपूर्ण व्यवहार बरता जाय। अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण नम्रता से वह अपने शत्रु से हथियार रखा लेते थे और इस प्रकार उसको अपने किये पर लज्जित करते थे। देर से उत्तेजित होने तथा अपने आत्मसंयम के कारण वह सभी परिस्थितियों में प्रत्येक स्थिति पर काबू कर लेते थे।

वह कहा करते थे कि जहाँ मेरे कोड़े से काम चल जाता है मैं वहाँ कभी भी अपनी तलवार का प्रयोग नहीं करता और जहाँ मेरी जबान काम कर सकती है, वहाँ मैं कोड़े पर हाथ भी नहीं लगाता। जहाँ मैं किसी व्यक्ति से एक बाल से भी बँधा होता हूँ, मैं उसको टूटने नहीं देता। जब वह उस बाल को खींचता है तो मैं ढील दे देता हूँ, और जब वह ढील देता है तो मैं उसे खींच लेता हूँ। हम इस स्थान पर अमीर मुआविया के एक पत्र को उद्धृत करते हैं जो उन्होंने हजरत हसन को उनके अधिकार त्यागने के अवसर पर लिखा था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

"मैं स्वीकार करता हूँ कि आप रक्त-सम्बन्ध की दृष्टि से इस उच्च पद के लिए मेरी अपेक्षा अधिक अधिकार रखते हैं। और यदि मुझको इस बात का भी विश्वास हो जाता कि आप में कर्त्तव्य-पालन की मुझसे अधिक योग्यता है तो मैं निस्संकोच आप को खलीफा मानकर आप का अनुयायी बन जाता। अब आप ही बतायें कि आप क्या चाहते हैं ?"

इस पत्र के साथ एक सादा कागज भी नत्थी था जिस पर अमीर मुआविया के हस्ताक्षर थे और रिक्त स्थान की पूर्ति हजरत हसन को करनी थी। ऐसे प्रस्ताव से "भावी प्रतिद्वन्द्वी" को स्वाभाविक रूप से विमुग्ध होना ही था।

जैसा कि आगे आने वाले खलीफाओं को करना अनिवार्य हुआ, अमीर मोआविया वैजेन्टाइन से तलवार द्वारा जोर-आजमाई करते रहे और उन्होंने दो बार कुस्तुन्तुनिया के विरुद्ध अपनी विशाल सेना के साथ आक्रमण किया। आप की सीरिया की गवर्नरी काल में, मुस्लिम नाविक बेड़े ने बेजेन्टाइन की समुद्री शक्ति को ललकारा और एशियामाइनर में, लीसियायी समुद्रतट से परे, भयंकर रक्तपात हुआ, जिसमें मुसलमानों की प्रथम सामुद्रिक विजय हुई। कुस्तुन्तुनिया उस समय भी और उसके बाद भी तुर्कों के समय तक, अजेय रहा। और अरबों को एशिया-माइनर में स्थायी तौर पर न तो पैर जमाने का ही और न समुद्र को पार करने का ही अवसर मिला। पूर्व और पश्चिम में जहाँ कहीं भी कम से कम प्रतिरोध की संभावना होती थी, उसी ओर उनकी प्रधान शक्ति लगती थी। अमीर मोआविया के समय में इस्लामी शक्ति का अभियान पुनः आरम्भ हुआ।

———————

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

८—स्पेन की विजय

सीरिया, ईराक, ईरान और मिस्र की विजय के पश्चात् मुस्लिम जीत का प्रथम काल समाप्त हो जाता है। इसके अनन्तर गृहयुद्ध का एक अल्प समय आता है, जिसके अन्त हो जाने पर मुसलमानों की विजय के इतिहास का दूसरा चरण आरंभ होता है।

मुसलमानों के तूफानी अभियानों ने, पूर्व की ओर दजला नदी, जहाँ फारसी और तुर्की बोलने वाली जातियों के बीच परम्परागत सीमा निर्धारित थी, के उस पार तथा उसके भी आगे बाह्य मंगोलिया तक, इस्लाम का झण्डा लहरा दिया। मध्ययुग की कहानियों के प्रख्यात, बुखारा, ताशकन्द, समरकन्द जैसे नगरों ने भी मुसलमानों के आगे हथियार डाल दिये, और मध्य एशिया में इस्लाम की सर्वोच्चता की धाक इस प्रकार जम गयी कि चीनियों ने भी उसके इस अधिकार को चुनौती न दी। एक अन्य पूर्वीय सैनिक दस्ता उस क्षेत्र से होकर जिसे इस समय बिलोचिस्तान के नाम से पुकारते हैं, दक्षिण की ओर अग्रसर हुआ और उसने सन् ७१२ ई० में सिन्धुप्रदेश, सिन्धु नदी की निचली घाटी और उसके डेल्टा पर अधिकार कर लिया। पुनः विजय का क्षेत्र और विस्तृत हुआ और मुसलमानों ने दक्षिणी पंजाब के मुल्तान नगर पर अधिकार कर लिया जो उस समय एक प्रसिद्ध बौद्ध तीर्थ था, इस प्रकार भारत के सीमान्तप्रदेश सदैव के लिए इस्लामी बन गये। कुछ वर्ष हुये, इन विजयों का अन्तिम रूप, पाकिस्तान के रूप में प्रस्तुत हुआ है। यहाँ इस्लाम ने बौद्धों की नवीन सभ्यता से सम्पर्क स्थापित किया।

उत्तरी केन्द्रीय मोर्चे पर, अरबी सेना की लहरें कुस्तुन्तुनिया के दुर्ग से टकरायीं। अरब इस समय बेजेन्टाइन की राजधानी का एक वर्ष तक (अगस्त ७१६ से सितम्बर ७१७ तक) एक स्मरणीय घेरा डाले रहे। इसमें अरब नाविक बेड़े का मार्ग बासफोरस की खाड़ी में एक लम्बी जंजीर के द्वारा अवरुद्ध था।

लेकिन पश्चिम की ओर मुसलमान निरन्तर अग्रसर होते गये और इस ओर उन्हें महान विजय प्राप्त होती रही। उत्तरी अफ्रीका में वह प्राचीन कार्थेज तक पहले ही पहुँच चुके थे और अब वे महान् इस्लामी सेनापति मूसा बिन नुसैर के नेतृत्व में बर्बरों * की भूमि से हो कर आगे बढ़ने लगे। बर्बरों का सम्बन्ध श्वेत रंग वाले हामी † वंश से है और शायद प्रागऐतिहासिक काल में इनका और सामियों का एक ही वंश था। समुद्रतट पर निवास करने वाले अधिकांश बर्बर, ईसाई हो चुके थे।

---

* Berber †Hamitic

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टर्टूलियन ‡ सेण्ट सिप्रियन § और सबसे बढ़ कर सेण्ट अगस्टाइन ☧ जिनकी गणना प्रारंभिक ईसाई सन्तों में की जाती है, यहीं पर उत्पन्न हुए थे; किन्तु तट से अन्दर की ओर जो आबादी थी उस पर रोमन और बेजेन्टाइन सभ्यता की कोई गहरी छाप नहीं पड़ी थी। इसका कारण यह था कि यह सभ्यता उत्तरी अफ्रीका के खानाबदोश और अर्ध खानाबदोश कबीलों के रहन-सहन से बिलकुल विपरीत थी।

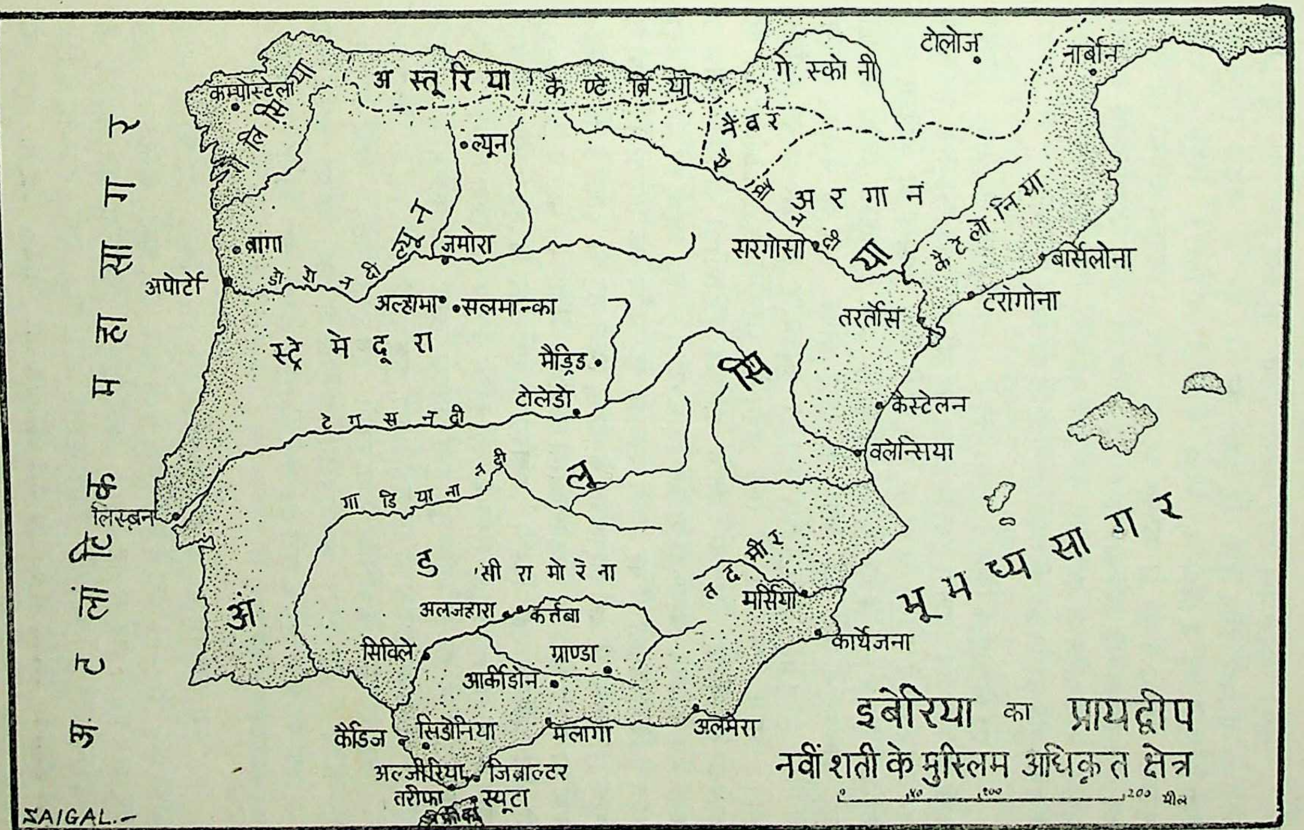
इस्लाम में उन लोगों के लिए विशेषरूप से आकर्षण था, जो बर्बरों की जैसी सभ्यता और रहन-सहन वाले लोगों के अनुरूप हो। और यही कारण था कि सामी अरबों ने शीघ्र ही अपने हामी भाइयों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर लिया। इस्लाम ने एक बार पुनः एक अर्धजंगली गिरोह के धर्म को इस्लामी, और उसकी भाषा को अरबी साँचे में ढालने में अपना चमत्कार दिखाया। इस प्रकार विजेताओं के रक्त ने नयी जाति के रक्त से मिल कर नयी सुदृढ़ जातियों की उत्पत्ति की। अरबी भाषा के प्रसार के लिए एक बृहद् क्षेत्र का प्रादुर्भाव हुआ। इस्लाम को अपनी सांसारिक श्रेष्ठता एवं उच्चता प्राप्त करने के लिए एक सोपान की प्राप्ति हुई। मध्ययुग के युद्ध सम्बन्धी इतिहास में कार्यगति की तीव्रता और सफलता की पूर्णता स्पेन के अभियान में अद्वितीय थी। जुलाई सन् ७१० ई० में स्पेन पर, उसकी वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रथम बार आक्रमण किया गया था। इस आक्रमण में ४०० पैदल सिपाही और १०० घुड़सवार थे जो सबके सब बर्बर जाति के थे, तथा उत्तरी अफ्रीका के गवर्नर मूसा बिन नुसैर के सिपाही थे। मूसा अमवी खलीफा का नियुक्त किया हुआ गवर्नर था। यह लोग छोटे से प्रायद्वीप 'तरीफा' पर उतरे जो यूरोप महाद्वीप का अत्यन्त दक्षिणी भाग है।

मूसा, जो लगभग सन् ६९९ ई० से अफ्रीका का गवर्नर था, ने बेजेन्टाइन निवासियों को कार्थेज के पश्चिमी क्षेत्र से सदैव के लिए बाहर निकाल दिया था। और अब वह अतलान्तिक महासागर की ओर शनैः शनैः बढ़ रहा था तथा योरोप को जीतने के लिए मोर्चेबन्दी भी करता जा रहा था। मूसा अपने प्रथम आक्रमण की सफलता के कारण अत्यधिक प्रोत्साहित हुआ। स्पेन के विजीगाथ राज्य के पारस्परिक कलह से उसका उत्साह और बढ़ा। सफलता व अधिकार की अपेक्षा, लूट की सम्पत्ति के प्रलोभन से अधिक प्रेरणा पाकर, सन् ७१७ ई० में मूसा ने अपने स्वतंत्र किये हुए बर्बर गुलाम तारिक के साथ ७००० बर्बर सैनिकों के एक दल को स्पेन में प्रवेश कर जाने का आदेश दिया। तारिक, जबल तारिक (जिब्राल्टर) नामक उस कठिन पर्वत के निकट उतरा जिसने उसके नाम को सदा के लिए अमर कर दिया है। यहाँ पर समुद्र अत्यन्त सँकरा है और उसकी चौड़ाई केवल १३ मील है। यह कहा जाता है कि ज्युलियन नामक एक अर्ध-काल्पनिक व्यक्ति ने इस्लामी सेना के लिए जहाज प्रदान किये थे। यह व्यक्ति स्युटा (Ceuta) का काउण्ट था।

---

‡ Tertullian § St. Cyprian ☧ St. Augustine

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.



इबेरिया का प्रायद्वीप
नवीं शती के मुस्लिम अधिकृत क्षेत्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तारिक़ अपनी नयी सेना (जिसकी संख्या अब बारह हजार तक पहुँच गयी थी) का संचालन करता हुआ १९ जुलाई सन् ७११ ई० को बादशाह राड्रिक की सेना से सैलेडो नदी के दहाने पर, जएडा के किनारे जा भिड़ा। राड्रिक ने, अपने पूर्ववर्त्ती, विटिजा के पुत्र को पदच्युत कर स्वयं राज्य पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया था। विजीगाथ की सेना की संख्या २५ हजार थी लेकिन वह बिलकुल नष्ट हो गयी। स्वयं राड्रिक पर क्या बीता, यह अभी तक एक रहस्य है। स्पेन एवं अरब के इतिहास में केवल इतना ही संकेत मिलता है कि वह गायब हो गया।

इस निर्णयात्मक विजय के पश्चात् स्पेन में इस्लामी सेना इस प्रकार विचरने लगी मानो वह एक उद्यान में विहारार्थ भ्रमण कर रही हो। केवल वही नगर प्रभावपूर्ण ढंग से प्रभावशाली प्रतिरोध कर रहे थे जिन पर विजीगाथ सामन्तों का अधिकार था। तारिक़ ने सेना के एक बड़े भाग के साथ 'एसिजा' के मार्ग से राजधानी टोलेडो को जाते हुए, आस-पास के नगरों को जीतने के लिए सैनिक दस्तों को भेजा। दक्षिण में सेविले (Seville) का दुर्ग छोड़ दिया गया क्योंकि वह दृढ़ और अत्यंत सुरक्षित था। सेना के एक दल ने बिना लड़े-भिड़े अर्शदोना (Archidona) पर अधिकार कर लिया और दूसरे दल ने एलविरा (Elvira) को जीत लिया। तीसरे दल ने जिसमें अश्वारोही थे, कर्त्तबा (कारडोआ) पर चढ़ाई कर दी। कहा जाता है कि मुसलमानों की यह भावी राजधानी, दो महीने तक निरन्तर घिरे रहने के पश्चात्, एक चरवाहे द्वारा विश्वासघात के कारण, जिसने शत्रु को दीवार के किसी छिद्र-मार्ग का पता दे दिया था, आक्रमणकारियों के अधिकार में आगयी। मलागा (Malaga) ने कोई प्रतिरोध नहीं किया। एलविरा जो उस स्थान के निकट स्थित था जहाँ आज ग्राण्डा (Granada) स्थित है, बड़ी सुविधा के साथ जीत लिया गया। एसिजा नामक स्थान पर स्पेन का भयंकर युद्ध हुआ जिसका अन्त आक्रमणकारियों के पक्ष में हुआ। विजीगाथ शासकों की राजधानी टोलेडो, कुछ यहूदी निवासियों के विश्वासघात के कारण, मुसलमानों के अधिकार में आ गयी। इस प्रकार तारिक़, जिसने सन् ७११ ई० के मौसमे बहार में एक आक्रमणकारी नेता के रूप में अपना जीवन आरंभ किया था, उसी वर्ष ग्रीष्म ऋतु के अन्त तक आधे स्पेन का स्वामी बन बैठा। उसने एक पूर्ण साम्राज्य नष्ट कर डाला।

मूसा अपने सहायक की इस अप्रत्याशित एवं आश्चर्यजनक सफलता से ईर्ष्यालु होकर स्वयं १०,००० सेना के साथ जिसमें केवल अरब और सामी सम्मिलित थे, जून सन् ७१२ ई० में स्पेन पर चढ़ दौड़ा। उसने मेडिना, सिडोनिया, और कार्मोना के सुदृढ़ नगरों एवं दुर्गों को जिन्हें तारिक़ ने छोड़ दिया था, अपने आक्रमण के लिए चुन लिया। सिविले जो स्पेन का सबसे बड़ा नगर और बौद्धिक केन्द्र था तथा जो किसी समय रोमनों की राजधानी भी रह चुका था, जून सन् ७१३ ई० के अन्त तक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घेरे में पड़ा रहा। किन्तु मेरिडा के स्थान पर अत्यन्त भयंकर मुकाबिला हुआ। परन्तु एक वर्ष के घेरे के पश्चात् इस नगर पर भी धावा कर १ जून सन् ७१३ ई० को इसे जीत लिया गया।

टोलेडो के निकट मूसा और तारिक़ की भेंट हुई। कहा जाता है कि यहाँ पर मूसा ने अपने नायक के कोड़े लगवाये और उसको जंजीरों में बँधवा दिया। उसका अपराध यह था कि "उसने अभियान के प्रारम्भिक काल में मूसा की आज्ञा से आगे बढ़ना बन्द नहीं किया था"। पर विजय का क्रम चलता रहा। अति शीघ्र उत्तर की ओर इस्लामी सेना सर्गोसा (Saragosa) पहुँच गयी। वहाँ से वह अरागान, लिवन (Leon), अस्तूरिया तथा गैलिशिया की उच्चभूमि तक बढ़ती गयी। इसी वर्ष पतझड़ के अवसर पर खलीफा वलीद ने मूसा को दमिश्क में बुलाया। अपराध वही था जो मूसा ने अपने बर्बर सहायक (तारिक) पर लगा कर उसको दण्डित किया था, 'अर्थात् अपने स्वामी की आज्ञा पर ध्यान दिये बिना स्वेच्छापूर्वक कार्य किये जाना'। अफ्रीका के गवर्नर की हैसियत से मूसा से प्रधान, खलीफा के अतिरिक्त कोई अन्य न था।

नवविजित प्रदेशों का कार्यभार अपने द्वितीय पुत्र अब्दुल अजीज के हाथों में सौंप कर मूसा ने शनैःशनैः स्थल मार्ग से सीरिया की ओर प्रस्थान किया। इस यात्रा में मूसा के साथ उसके अधीनस्थ सैनिक अधिकारी, तथा ४०० विजीगाथ राजकुमार सिर पर राजमुकुट और कमर में सोने की पेटियाँ धारण किये और उनके पीछे असंख्य गुलामों और बन्दियों का एक असीम सिलसिला चल रहा था, जिनके सिरों पर लूट की अपार सम्पत्ति लदी हुई थी। उत्तरी अफ्रीका में से हो कर पश्चिम से पूर्व की ओर, मूसा की इस विजय-यात्रा के शाही काफिले के जाने की कहानी, अरब ऐतिहासिकों के लिये एक प्रिय विषय है। जब हम इस जुलूस का विवरण पढ़ते हैं तो हमारे नेत्रों के समक्ष रोमन सेनापतियों की प्राचीन विजय-यात्राओं का चित्र खिंच जाता है। इस प्रभावशाली जुलूस का समाचार उससे पहले ही चल कर दमिश्क पहुँच चुका था। जब मूसा तिब्रिया (Tiberias) पहुँचा तो उसको बीमार खलीफा वलीद के भाई और उत्तराधिकारी सुलेमान का आदेश मिला कि वह राजधानी में आने में विलम्ब करे। भावी खलीफा इस आशा में था कि वह जब (वलीद के बाद) सिंहासनारूढ़ हो जायगा तो मूसा का आगमन उसके दरबार की शोभा-वृद्धि करेगा।

फरवरी सन् ७१५ ई० में मूसा ने दमिश्क में प्रवेश किया। उसके विजीगाथ राजकुमार रत्नों से आभूषित थे। प्रत्यक्षतः खलीफा वलीद ने उसका अनुग्रहपूर्वक स्वागत किया। अमवी मस्जिद के वैभवपूर्ण प्रांगण में इस जुलूस का राजकीय स्वागत जिस सज-धज से किया गया वह इस्लामी विजयों के इतिहास का एक ज्वलंत उदाहरण है। इतिहास में प्रथम बार पश्चिम के राजवंशों के सैकड़ों व्यक्तियों और सहस्रों योरोपीय बन्दियों को मुसलमानों के प्रधान (खलीफा) के समक्ष नतमस्तक करते देखा गया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

असंख्य उपहारों के साथ मूसा ने खलीफा के आगे वह वैभवशाली मेज भी प्रस्तुत की जिसके सम्बन्ध में गाथाओं में कहा गया है कि उसको हजरत सुलेमान के एक जिन ने, जो उनकी सेना में रहता था, बनाया था ! इसी के विषय में यह भी कहा गया है कि इस अद्भुत कलापूर्ण कृति को रोमन जेरुसलम से अपनी राजधानी में उठा ले गये थे जहाँ से बाद को गाथ लोग उसे स्पेन ले गये। प्रत्येक गाथ राजा अपने पूर्ववर्त्ती से इस मेज को रत्नों से आभूषित करने के कार्य में आगे बढ़ जाना चाहता था। यह कोष एक गिरजे में सुरक्षित था। तारिक ने सम्भवतः उसे उस समय पाया जब एक पादरी उसे लेकर भागा जा रहा था। जिस समय टोलेडो में मूसा की भेंट तारिक से हुई और वह उसे कोड़े भी लगा चुका,तो उसने इस मेज को भी उससे छीन लिया। पर किंवदन्ती इस प्रकार है कि तारिक ने चुपके से उसके एक पाए को उड़ा दिया था और अब खलीफा के समक्ष उसे बड़े नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करके प्रमाणित किया कि वह पराक्रम उसका था, न कि मूसा का।

उसी दुर्भाग्य का, जिसके बहुत से अन्य सफल अरब सेनापति शिकार हो चुके थे, अब मूसा भी शिकार होने वाला था। वलीद के उत्तराधिकारी ने उसका बड़ा अपमान किया। उसने मूसा को दण्डस्वरूप इतनी देर तक धूप में खड़ा किया कि वह थक कर चूर हो गया। उसका यहीं पर अन्त नहीं हुआ अपितु उसकी सारी सम्पत्ति छीन ली गयी और वह अपने सम्पूर्ण अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया। अफ्रीका और स्पेन के इस वयोवृद्ध विजेता के अन्तिम दिनों के सम्बन्ध में सुना जाता है कि उसने हिजाज के एक दूरस्थ गाँव में भीख माँग कर अपना जीवन व्यतीत किया।

स्पेन अब खिलाफत का एक प्रान्त बन गया था। इसने अब एक अरबी नाम अल अन्दलुस (Al-Andalus) धारण कर लिया था। शब्द-उत्पत्ति की दृष्टि से इस शब्द का सम्बन्ध वेण्डालों के नाम से है। अरबों से पूर्व इन्हीं का स्पेन पर अधिकार था। मूसा के उत्तराधिकारियों के लिए, प्रायद्वीप के उत्तर और पूर्व के कुछ छोटे-छोटे क्षेत्रों को ही जीतना शेष रह गया था और पहले की अपेक्षा बहुत कम विद्रोहों को दबाना उन्हें बाकी था। मध्यकालीन योरोप का सर्वोत्तम एवं सबसे वृहत् प्रान्त, सात वर्ष के संक्षिप्त काल में, मुसलमानों के अधिकार में आ गया। अब विजेताओं को वहाँ पर रहना और बसना था—कम से कम सदियों तक के लिए।

इस प्रत्यक्ष अद्वितीय सफलता एवं विजय का कारण जानना कुछ कठिन नहीं है। जो कुछ ऊपर संक्षिप्त रूप से वर्णित है, उससे भी इन कारणों को भलीभाँति समझा जा सकता है। पहली बात तो यह थी कि उन विजीगाथों (वेस्ट-गाथ), जो ट्युटनिक जंगलियों की भाँति पाँचवीं शती के आरंभ में स्पेन में घुस आये थे और स्पेन की रोमन जनता—इन दोनो में जो जातीय विरोध पाया जाता था वह अभी तक पूर्ण रूप से दूर नहीं हुआ था। गाथ के पूर्व सूवी (Suevi) और वण्डल जातियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का स्पेन पर अधिकार था। ये लोग भी उसी प्रकार से छापा मारने वाले जर्मनी गरोहों के समान थे। उनको स्पेन से निकालने के लिए बहुत दिनों तक गाथों को संघर्ष करना पड़ा था। विजीगाथ निरंकुश रूप से शासन करते थे। वे प्रायः स्वेच्छाचारी शासक होते थे। वे ईसाई धर्म के आर्य रूप के समर्थक थे। उनके एक राजा रिकारेड ने सन् ५८७ ई० में कैथलिक धर्म स्वीकार कर लिया जो वहाँ के पूर्व निवासियों का धर्म था। कैथलिक होने के नाते लोग, धर्मविरोधी गाथों के शासन से घृणा करते थे। वहाँ के निवासियों में एक बड़ी संख्या खेतिहर दासों और गुलामों की थी। वे स्वाभाविक रूप से अपने कष्टपूर्ण जीवन से असन्तुष्ट थे। यदि यह कहा जाय कि गुलामों के इस वर्ग ने आक्रमणकारियों के साथ मिलकर उनको सफल बनाने में अपना सहयोग दिया होगा, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। वहाँ की जनता में यहूदियों का भी एक अंग था जिसको गाथ राजाओं के अत्याचारों ने सम्पूर्ण राष्ट्र से पृथक कर रखा था। सन् ६१८ ई० में एक राजकीय आज्ञा निकाली गयी थी जिसके अनुसार बलपूर्वक यहूदियों का धर्म परिवर्तन कराने का यत्न किया गया था। इस राजाज्ञा में यह भी था कि यदि कोई यहूदी ईसाई धर्म को स्वीकार न करे तो उसे देश निकाला कर दिया जाय और उसकी सम्पत्ति ज़ब्त कर ली जाय। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जब मुसलमान आक्रमणकारी आगे बढ़ रहे थे तो स्पेन के अनेक विजित नगर यहूदियों के अधिकार में क्यों दे दिये जाते थे।

हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि गाथ राजाओं और उनके अमीरों के राजनीतिक मतभेद ने आन्तरिक झगड़ों से मिलकर रियासत की नींव को जर्जर कर दिया था। छठी शती के अन्त तक गाथ अमीर अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतंत्र बन बैठे थे। स्पेन में मुसलमानों के आक्रमण, और राज्य को बलपूर्वक अधिकार करने वाले एक अमीर के राज्यारोहण की घटनाएँ एक ही साथ घटीं और राजच्युत राजा के सम्बन्धियों ने ऐसे अवसर पर स्वेच्छापूर्वक विश्वासघात किया था। जब मुसलमानों ने टोलेडो पर आक्रमण किया, तो अकिला (Achila) जो विटिजा का पदच्युत पुत्र था, अपनी मूर्खता के कारण यह सोच रहा था कि अरब उसके लिये युद्ध कर रहे हैं। जब उसको टोलेडो की सम्पत्ति दे दी गयी तो वह प्रसन्न हो कर बैठ रहा और वहाँ पर बड़ा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगा। उसके चचा बिशप ओप्पास को राजधानी का बड़ा पादरी बना दिया गया। स्युटा (Ceuta) के गवर्नर ज्युलियन ने अरबों की जीत के सिलसिले में जो सेवाएँ कीं उनका अतिरंजित वर्णन किया गया है। कहा जाता है कि उसने अरब सेना के लिए बहुत सी नावें एकत्र कर दी थीं।

सर्गोसा की जीत से स्पेन और फ्रान्स के मध्य जो अन्तिम रुकावटें थीं उनमें से एक दूर हो गयी। पर पेरेनीज का पर्वत अभी तक मार्ग अवरुद्ध किये हुए खड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

था। मूसा ने कभी भी उन पहाड़ों को पार नहीं किया था। किन्तु कुछ अरब इतिहास-लेखक मूसा को यह श्रेय प्रदान करते हैं कि उसने केवल पर्वतमालाओं को ही पार नहीं किया अपितु फ्रान्स से होकर कुस्तुन्तुनिया के मार्ग से दमिश्क जा कर खलीफा के हाथ को चूमने की अभिलाषा भी उसके हृदय में जोर मार रही थी। यद्यपि उस समय योरोप के भूगोल के सम्बन्ध में अरब विजेताओं को कुछ अधिक ज्ञान न रहा होगा फिर भी वे वहीं की भूमि पर युद्ध कर मार्ग निकाल लेने का मनमौजी स्वप्न अवश्य देख रहे होंगे। वस्तुतः यह मूसा का तीसरा उत्तराधिकारी अलहुर-इब्न-अब्दुर रहमान अल सकफ़ी (Al-Thaqfi) था जिसने सन् ७१७ ई० या ७१८ ई० में सर्वप्रथम इस पर्वतमाला को पार किया था।

एक ओर फ्रान्स के मठों और गिरजों के बहुमूल्य कोष ने उनके ध्यान को अपनी ओर आकर्षित किया तो दूसरी ओर मेरोवेंजियन (Merovingian) दरबार के अमीरों और एक्विटेन (Aquitaine) के ड्यूकों के गृहयुद्धों ने उनको उत्साहित किया। फलतः अलहुर ने अपने आक्रमण आरम्भ कर दिये जिनको उसके उत्तराधिकारी अल-सम्ह-इब्न-मलिक-अलखौलानी ने भी जारी रखा। सन् ७२० ई० में अलसम्ह ने सिप्तेमानिया (Septimania) को छीन लिया। यह विजीगाथ राज्य के अधीन था। उसने नार्बोन को भी जीत लिया। इसके दुर्ग को बाद में अरबों ने एक बड़े दुर्ग में परिवर्तित कर दिया और इसको अस्त्रों और रसद का भण्डार बना दिया। उसमें अस्त्र बनाने का एक बहुत बड़ा कारखाना भी स्थापित कर दिया। किन्तु दूसरे वर्ष उसने एक्वीटेन के ड्यूक यूडस (Eudes) की राजधानी टोलोज (Toulouse) को जीतने का प्रयत्न किया। किन्तु जनता के प्रभावशाली विरोध को श्रेय है कि उसे कोई सफलता न मिली और यहाँ पर अलसम्ह को युद्धस्थल में गैरमुसलमानों के मुकाबिले में शहीद होना पड़ा। यह प्रथम महत्ता सफलता थी जो जर्मनी के एक राजकुमार को मुसलमानों के विरुद्ध प्राप्त हुई थी। इसके पश्चात् अरबों ने पेरीनीज के पार जो भी आक्रमण किये, उनका कोई परिणाम नहीं निकला।

सबसे अन्तिम और सबसे बड़ा अभियान उत्तर की ओर अलसम्ह के उत्तराधिकारी अब्दुर रहमान इब्न-अब्दुल्लाह अल गाफिक़ी के नेतृत्व में हुआ जो स्पेन का गवर्नर था। वह पश्चिमी पेरीनीज़ की ओर से आगे बढ़ा और सन् ७३२ ई० के मौसमे बहार के आरम्भ में उसने उस पर्वतमाला को पार कर लिया। गैरोन नदी के तट पर, ड्यूक यूडस को पराजित कर वह आगे बढ़ा और बोर्डो पर धावा बोल दिया। उसने वहाँ के गिरजों में आग लगवा दी। प्वायटियर्स (Poitiers) की दीवारों के बाहर एक गिरजे को जला कर वह उत्तर की ओर झपटा और टुवर्स (Tours) तक बढ़ता चला गया। गाल्स के देवदूत सेण्ट मार्टिन के शरीर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की समाधि होने के कारण टुवर्स को गाल की धार्मिक राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। सेण्ट मार्टिन की समाधि के बहुमूल्य चढ़ावों के कोष का ही विशेष आकर्षण था जो आक्रमणकारियों को यहाँ तक खींच लाया था।

यहाँ टूवर्स और प्वायटीयर्स के बीच क्लेन (Clain) एवं वैने (Vienne) नदियों के संगम पर अब्दुर रहमान और चार्ल्स मार्टेल का मुक़ाबिला हुआ। चार्ल्स मार्टेल मेरोवेंजियन दरबार के महलों का मेयर था। यूडस ने उससे सहायता करने की प्रार्थना की थी। चार्ल्स ने अपना कुल-नाम मार्टेल रखा था, जिसका अर्थ है हथौड़ा। यह नाम उसके लिए अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध हुआ। वह अत्यन्त साहसी और वीर था। वह अपने अनेक शत्रुओं को पराजित कर चुका था। उसने यूडस को जो एक्वेटेन में स्वतंत्र सत्ता रखता था विवश किया कि वह उत्तरी फ्रांसीसियों की नाममात्र की सार्वभौमिकता को स्वीकार कर ले। चार्ल्स जो हेरिस्टल के पेपिन का अनौरस पुत्र था, राजा न होने पर भी वस्तुतः राजा था। निरन्तर सात दिन अरब सेना अब्दुर रहमान के नेतृत्व में और फिरंगी सेना चार्ल्स के नेतृत्व में एक दूसरे के समक्ष खड़ी बेचैनी से युद्ध की प्रतीक्षा कर रही थी। फिरंगी सेना में बहुत से पैदल सिपाही थे जो भेड़िये के जबड़े को लपेटे हुए थे और जिनके उलझे गुँथे हुए बाल उनके कन्धों पर लटक रहे थे। छोटी-मोटी झड़पें हो रही थीं। आखिरकार अक्तूबर सन् ७३२ ई० को शनिवार के दिन अरब नेता ने सर्वप्रथम आक्रमण आरम्भ कर दिया। फिरंगी सैनिकों ने युद्ध की तेजी में एक चौकोर घेरे (व्यूह) की रचना कर ली और कन्धे से कन्धा मिला कर एक सुदृढ़ दीवार की भाँति तथा एक पश्चिमी इतिहासकार के शब्दों में एक बर्फ की चट्टान की तरह खड़े हो गये। शत्रु के साधारण अश्वारोही उनके सम्मुख विफल हो गये। लेशमात्र भी पीछे हटे बिना फिरंगियों ने, आक्रमणकारियों को तलवार के घाट उतार दिया। जो लोग मारे गये उनमें अब्दुर रहमान भी था। आखिरकार रात्रि के अन्धकार ने लड़नेवाली सेनाओं को एक दूसरे से अलग कर दिया। प्रातःकाल शत्रु-शिविर की निस्तब्धता के कारण चार्ल्स को किसी षडयंत्र का सन्देह हुआ। उसने तथ्य को जानने के लिए जासूसों को भेजा। रात्रि के अन्धकार में अरब शान्तिपूर्वक अपने शिविरों को छोड़ कर भाग गये थे। चार्ल्स को भलीभाँति सफलता मिल चुकी थी।

आगे चल कर प्वायटीयर्स अथवा टुवर्स की घटनाओं के सम्बन्ध में अनेक काल्पनिक कथाएँ गढ़ ली गयीं और उनके ऐतिहासिक महत्त्व को अधिक बढ़ा-चढ़ा कर वर्णन किया गया। ईसाइयों ने इस विजय को अपने सदैव के शत्रु के सैनिक भाग्य में एक प्रतिकूल मोड़ का स्थान प्रदान किया। गिबन और उसके बाद के इतिहासकारों का यह मत है कि उस दिन यदि ईसाईयों के स्थान पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरबों की विजय होती तो पेरिस और लन्दन में जहाँ इस समय गिरजे खड़े हैं, वहाँ मस्जिदें दिखाई देतीं और आक्सफोर्ड तथा अन्य शिक्षा-केन्द्रों में बाइबिल के स्थान पर कुरान की शिक्षा हो रही होती। वर्तमान काल के बहुत से इतिहासकार भी टुअर्स के युद्ध को संसार के युद्धों के इतिहास में एक निर्णयात्मक युद्ध की संज्ञा प्रदान करते हैं।

तथ्य तो यह है कि इस युद्ध ने किसी बात का भी निर्णय नहीं किया। अरबों और बर्बरों का तूफान जो अपने प्रस्थान-स्थान जिब्राल्टर से लगभग सौ मील दूर निकल आया था अब अपनी स्वाभाविक स्थिरता पर पहुँच गया था। वह अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था और अब उसमें किसी प्रकार की शक्ति शेष नहीं रह गयी थी। दो भिन्न जातीय गिरोहों के आपसी मनोमालिन्य एवं ईर्ष्या के कारण अब्दुर रहमान की सेना का मनोबल क्षीण होने लगा था। अरबों में भी अब भावनाओं एवं उद्देश्यों की एकता शेष नहीं रह गयी थी। यह सही है कि इस स्थल पर, मुसलमानों को रोक दिया गया था, लेकिन उनके आक्रमण दूसरे स्थल पर जारी थे। उदाहरणस्वरूप यह बताना पर्याप्त होगा कि सन् ७३४ ई० में उन्होंने अवेगनान (Avignon) को जीत लिया और ६ वर्ष पश्चात् लियोन को तहस-नहस कर डाला। उन्होंने सन् ७५६ ई० तक नार्बोन पर अपना अधिकार रखा; यह स्थान उनकी सैनिक कार्यवाहियों का महत्वपूर्ण केन्द्र था। यद्यपि टुअर्स की इस पराजय को, अरबों के रुक जाने का वास्तविक कारण नहीं कहा जा सकता, फिर भी इसमें विजयी मुसलमान सेना की दूरस्थ सीमा अवश्य निर्धारित होती है।

सन् ७६२ ई० में हजरत मुहम्मद साहब के देहान्त को १०० वर्ष हो चुके थे। अब आप के अनुयायी एक ऐसा साम्राज्य जीत चुके थे जो बिस्के की खाड़ी से लेकर सिन्धु नदी तक और चीन की सीमा से लेकर अर्ल सागर तथा नील नदी की ऊपरी घाटी तक फैला हुआ था। दमिश्क अब इस विशाल साम्राज्य की राजधानी बन गया जहाँ अपने बचपन में हजरत मुहम्मद साहब ने प्रवेश करने में इस कारण संकोच किया था कि वह स्वर्ग का दर्शन केवल एक ही बार करना चाहते थे। नगर के मध्य में अमवी खलीफाओं का जगमगाता हुआ प्रासाद स्थित था। इस प्रासाद से, हरे भरे विस्तृत मैदानों, जो दक्षिण-पश्चिम की ओर सर्वदा हिमाच्छादित हर्मन पर्वत तक फैले हुए थे, का सुन्दर दृश्य गोचर होता था। इस प्रासाद को उमैया वंश के प्रवर्त्तक, स्वयं अमीर मोआविया ने बनवाया था। इसी के आस-पास अमवी मस्जिद भी स्थित थी जिसको अल वलीद ने नये प्रकार से सुसज्जित कर भवन-निर्माणकला का एक रत्न बना दिया था, जिसकी ओर आज भी सौन्दर्य-प्रेमी आकर्षित होते रहते हैं। प्रासाद के दीवाने-आम में एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्गाकार चौकी थी जिसके ऊपर बहुमूल्य रत्नजटित गद्दियाँ सुशोभित थीं। यही खलीफा का राजसिंहासन था जिस पर वह लम्बी 'एबा' पहन कर घुटने मोड़ कर (Crosslegged) बैठता था। खलीफा के दाहिनी ओर उसके पितृकुल संबन्धी और बायीं ओर उसके मातृकुल सम्बन्धी अपने पद के अनुसार क्रमशः एक पंक्ति में खड़े होते थे। इन के पीछे दरबारी अमीर, कवि, और फरियादी लोग खड़े होते थे। इन औपचारिक दरबारों से अधिक महत्वपूर्ण दरबार अमवी मस्जिद में लगता था। इस मस्जिद की गणना आज भी विश्व के सर्वाधिक वैभवशाली इबादतगाहों में की जाती है। किसी ऐसे ही दरबार में खलीफा वलीद ने स्पेन के विजयी मूसा और तारिक का स्वागत किया होगा, जो अपने असंख्य बन्दियों और अपार कोष के साथ उसके समक्ष प्रस्तुत हुए होंगे। इस्लाम का अभियान इस समय अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुका था और इस्लाम के प्रथम राज-वंश का ऐश्वर्य अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच चुका था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

६—सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का आरंभ

हम अपनी कहानी का प्रथम वृहत् भाग समाप्त कर चुके। अब इस्लामी विजयों का अन्त हो गया। यद्यपि इस्लामी साम्राज्य के अन्त हो जाने तक उसके भीतर निरन्तर युद्ध होते रहे, लेकिन हम अब युद्धों एवं विजयों की कहानी सुनाने के स्थान पर इस्लामी साम्राज्य की एक दूसरी अधिक दिलचस्प कहानी सुनायेंगे जो अनेक दृष्टिकोणों से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। यह कहानी इस्लामी साम्राज्य में साहित्य, विज्ञान, चिकित्सा, कला, एवं भवननिर्माण कला की उन्नति से सम्बन्ध रखती है। यह वह मनोहर कहानी है जिसमें हम यह बतायेंगे कि जब तलवार के सहारे प्राप्त विजयों का अन्त हो जाता है, तो किस प्रकार विभिन्न संस्कृतियों के मिल-जुल जाने के कारण मानव-मस्तिष्क उन्नति के मार्ग को तय करता है।

यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि दमिश्क वालों के जीवन का जो साधारण ढंग एवं आचरण आठवीं शती में था वह आज कल के रहन-सहन से कुछ अधिक भिन्न नहीं था। उस समय भी आज के समान ही दमिश्क के निवासी अपने नगर की संकुचित और ढकी हुई सड़कों पर चौड़े पायजामों, लाल नुकीले जूतों और बड़ी-बड़ी पगड़ियों के साथ निकलते थे और धूप से झुलसे हुए बद्दुओं के साथ कन्धे से कन्धा रगड़ते हुए, चलते हुए चलते थे, जो ढीले-ढाले जुब्बे Gown पहने और सिर पर एक़ाल (Headband) बाँधे होते थे। कभी-कभी योरोपीय पोशाक धारण किये हुए कोई फिरंगी गुज़रता हुआ दिखाई दे जाता है। कहीं-कहीं दमिश्क के धनी प्रतिष्ठित अमीर श्वेत एबा पहने हुए, तलवार या बर्छे से सुसज्जित घोड़े पर सवार दिखाई पड़ते हैं। कभी-कदा कुछ स्त्रियाँ नकाब डाले हुए, सड़कों को पार करती हुई दिखाई देती थीं। कुछ अन्य स्त्रियाँ उच्च भवनों की जालियों से चुपके से बाजारों और जन-चौकों पर दृष्टि डालती हुई दिखाई देती थीं। शरबत और मिठाई बेचने वाले जोर-शोर से चिल्ला रहे थे। ऐसा जान पड़ता था कि मानो वे यात्रियों और लदे हुए असंख्य गधों एवं ऊँटों की चाल से उत्पन्न होने वाली ध्वनि से भी आगे बढ़ जाना चाहते हों। नगर का वातावरण हर प्रकार की गन्ध से युक्त था।

संसार के अन्य नगरों की भाँति अरब लोग यहाँ भी अपने कबायली संगठन के अनुसार प्रथक्-प्रथक् बसते थे। दमिश्क, हिम्स, हलब, और अन्य नगरों में भी ये मुहल्ले अभी तक स्पष्ट रूप से इंगित हैं। प्रत्येक गृह-द्वार, सड़क की ओर से एक आँगन में खुलता था जिसके बीच में साधारणतया पानी का एक बड़ा हौज होता था जिसमें एक फौवारा लगा होता था, जिससे रुक-रुक कर पानी की एक फुहार घूँघट की भाँति नीचे गिरती हुई दिखाई पड़ती थी। नारंगी अथवा नींबू का एक वृक्ष भी हौज के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पास ही लगा होता था। आँगन के चारो ओर कमरे होते थे और जिनके चारो ओर बड़े-बड़े घरों में बरामदे भी होते थे। अमवी शासकों की सदा अमर रहनेवाली कीर्ति, उनकी वह दमिश्क की जल-व्यवस्था थी, जो आज भी विद्यमान है, और जैसी उस समय के पूर्वीय जगत में अन्यत्र न थी।

सम्पूर्ण साम्राज्य में सामाजिक दृष्टिकोण से जन-संख्या चार भागों में विभक्त थी। सर्वोच्च वर्ग स्वाभाविक रूप से मुसलमान शासकों का था जिसका नेतृत्व खलीफा के वंश एवं अरब विजेताओं को प्राप्त था। इस वर्ग की संख्या का ठीक-ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता है किन्तु हिम्स और दमिश्क में उनकी संख्या २० हजार से लेकर ४५ हजार तक रही होगी।

अरब मुसलमानों के पश्चात् नव-मुस्लिमों का दर्जा था जो या तो बलात् मुसलमान बना लिये गये थे अथवा जिन्होंने स्वतः मुस्लिम धर्म को स्वीकार कर लिया था। इनको व्यवहार रूप में तो नहीं किन्तु सिद्धान्ततः मुस्लिम नागरिकता के पूर्ण अधिकार प्राप्त थे। एक मुसलमान को किसी प्रकार का भी खिराज नहीं देना पड़ता था। यहाँ अरबों का उग्राराष्ट्रीयतावाद इतना बढ़ गया था और इसमें इतनी कठोरता आ गयी थी कि इस्लाम के सैद्धान्तिक अधिकारों का पूरा होना कठिन हो गया था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अमवी शासन काल में जमींदारों से चाहे वह मुसलमान हों या कोई अन्य हों, भूमिकर लिया जाता था। फिर भी जमीदारों का इस्लाम स्वीकार कर लेना निस्सन्देह साम्राज्य की आय की कमी का एक कारण था।

ये नव-मुस्लिम इस्लामी समाज के निम्नतम स्तर के लोग थे। उनकी प्रतिष्ठा को कम करके उनको 'मवाली' के दर्जे तक पहुँचा दिया गया था। अपने इस स्तर पर वे अत्यंत क्षोभ प्रकट करते थे। हम इन लोगों को ऐसे आन्दोलनों में भाग लेते हुए पाते हैं जैसे कि ईराक में शियों ने और ईरान में खार्जियों न चलाये थे। ये आन्दोलन कभी न समाप्त होने वाले झगड़ों और रक्तपात के कारण बने। उनमें से कुछ लोग, जैसा कि सदैव होता आया है, धार्मिक क्षेत्र में बादशाहों से भी अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुए। नये धर्म के लिए उनका उत्साह पागलपन की सीमा तक पहुँच गया था और वे गैर-मुस्लिमों पर अत्याचार करने लगे थे। प्रारम्भिक मुसलमानों में सबसे अधिक असहिष्णु वही लोग साबित हुये जिन्होंने ईसाई और यहूदी धर्म को छोड़ कर इस्लाम धर्म को स्वीकार किया था।

मुस्लिम समाज में स्वाभाविक रूप से इन मवाली लोगों ने ही अपने आप को, अध्ययन एवं कला में लगाया क्योंकि यही लोग दूसरों की अपेक्षा दीर्घकालीन सांस्कृतिक परम्पराओं के प्रतिनिधि थे। यह लोग जैसे-जैसे विद्या के क्षेत्र में अरब मुसलमानों से आगे बढ़ते गये, वैसे-वैसे वे राजनीतिक नेतृत्व के लिए अरबों का मुकाबिला करने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विजयी अरबों के साथ अन्तर्जातीय विवाह के कारण अरबी रक्त की विशेषताएँ कम होती गयीं और अन्त में इन मिली जुली हुई जातियों में अरबी तत्त्व बिलकुल लुप्त हो गया था।

तीसरा वर्ग उन लोगों का था जिन्हें ज़िम्मी कहा जाता था। इसमें अन्य धर्मों के लोग यथा ईसाई, यहूदी और साबी सम्मिलित थे। मुसलमानों ने इन लोगों से समझौता कर लिया था। इन धर्मों के अनुयायियों को, जिनकी रक्षा का दायित्व इस्लाम ने लिया था, अस्त्र रख देने और मुसलमानों से प्राप्त रक्षा के बदले में खिराज देने पर विवश किया जाता था। इन धर्मों को संरक्षण प्रदान कर, हजरत मुहम्मद साहब ने राजनीति में एक विशिष्ट नवीन पद्धति को प्रस्तुत किया। यह नवीन पद्धति उस प्रतिष्ठा का सुपरिणाम थी जो हजरत मुहम्मद साहब बाइबिल की किया करते थे और किसी सीमा तक उन सम्बन्धों पर भी आधारित थी जो कुछ ईसाई कबीलों के सामन्त वर्ग के साथ आपने स्थापित किये थे।

जिम्मी लोग अपने वर्तमान मर्तबे में जातीय एवं भूमि कर से बरी थे। दीवानी और फौजदारी मुकदमों में भी जब कोई मुसलमान वादी-प्रतिवादी न होता तो ये जिम्मी व्यावहारिक रूप से अपने धार्मिक प्रधान के अधीन होते थे। क्योंकि इस्लामी कानून इतना पवित्र था कि इसका उन पर प्रयोग ही नहीं हो सकता था। उस्मानियों के शासनकाल तक भी इस प्रणाली के आवश्यक अंगों के अनुसार कार्य होता रहा और ब्रिटिश तथा फ्रान्सीसी अधीनस्थ—सीरिया एवं फिलिस्तीन में भी यह प्रणाली जारी रही।

मुस्लिम समाज का सबसे निचला वर्ग गुलामों का था। इस्लाम में सामियों की प्राचीन गुलाम-प्रथा कायम रही। ओल्ड टेस्टामेण्ट में उसे वैधानिक दृष्टि से उचित समझा गया था लेकिन इस्लाम ने दासों की दशा में प्रशंसनीय सुधार किया। इस्लामी धर्मशास्त्र ने मुसलमानों को किसी अन्य मुसलमान को दास बनाने से मना किया है किन्तु उसने ऐसे दासों की स्वतंत्रता की कोई जमानत नहीं ली है जो बाद को इस्लाम धर्म स्वीकार करें। इस्लाम के प्रारम्भिक काल में स्त्री और पुरुष दोनों को ही दास बनाया जाता था। ये या तो युद्ध-बन्दी होते थे या क्रय किये जाते थे। वे कैदी जिन्हें दण्ड लेकर छोड़ दिया जाता था, दास नहीं बनाये जाते थे। अति शीघ्र ही समस्त इस्लामी देशों में दासों के व्यापार का लाभप्रद बाजार गर्म हो गया। पूर्वी या मध्य अफ्रीका के दास काले, चीनी तुर्किस्तान के पीले और निकटपूर्व, या पूर्वी तथा दक्षिणी यूरोप के दास श्वेत वर्ण के होते थे। स्पेन के एक दास का मूल्य लगभग १००० दीनार होता था। तुर्की दास के केवल ६०० दीनार मिलते थे। इस्लामी विधि के अनुसार एक गुलाम स्त्री की सन्तान जो किसी अन्य गुलाम से या स्वामी के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यक्ति से उत्पन्न हो, अथवा स्वयं स्वामी से ही उत्पन्न होने पर भी वह स्वामी उसे अपनी सन्तान न स्वीकार करता हो तो वह भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुलाम ही माना जाता था। किन्तु किसी स्वतंत्र स्त्री के गर्भ से किसी गुलाम द्वारा उत्पन्न सन्तान स्वतंत्र मानी जाती थी।

मुसलमानों की विजय के फलस्वरूप इस्लामी साम्राज्य में गुलामों की जो बाढ़ आयी थी उसका अनुमान उस अतिशयोक्तिपूर्ण संख्या से किया जा सकता है जो इस प्रकार प्रस्तुत की जाती है :—

मूसा ने उत्तरी अफ्रीका में ३ लाख कैदी बनाये थे जिस का पाँचवाँ भाग उसने खलीफा की सेवा में प्रस्तुत किया था। स्पेन में गाथों के अमीर घरानों से उसने ३० हजार कुमारियों को, तथा तुर्किस्तान में एक मुसलमान सेनानायक ने १ लाख व्यक्तियों को बन्दी बनाया था। ऐसा पत्रकारों का कथन है।

स्वामी एवं गुलाम स्त्री के बीच स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध तो मान्य था पर वे परस्पर एक दूसरे से विवाह नहीं कर सकते थे। इस सम्बन्ध से उत्पन्न सन्तान स्वामी की सन्तान कहलाती थी और वह स्वतंत्र समझी जाती थी। उस दासी की पदवृद्धि कर उसको "बच्चों की मा" (उम्मे वलद) का पद दे दिया जाता था। अब वह न बिक सकती थी और न स्वामी उसे किसी को दे ही सकता था। स्वामी की मृत्यु के पश्चात् वह स्वतंत्र हो जाती थी। अरबों तथा उनसे भिन्न लोगों के बीच इस प्रकार के पारस्परिक सम्पर्कों के कारण जो रक्तमिश्रण हो रहा था, उसमें दासों के व्यापार ने निस्सन्देह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग लिया है।

हमें यह ज्ञात है कि मरुस्थल के आक्रमणकारियों ने जिन देशों को जीता था उनमें वे अपने साथ किसी प्रकार की शैक्षिक परम्परा और संस्कृति लेकर नहीं गये थे। अमवी शासनकाल का "(Barbarian age) जमाने जाहिलियत" से सान्निध्य, उस समय के अनेक युद्ध, और उस समय के इस्लामी जगत की अस्थिर सामाजिक एवं आर्थिक दशा—ये सब बातें मिलकर उस प्रारम्भिक मुस्लिमकाल के बौद्धिक विकास की संभावनाओं में बाधक हो रही थीं। किन्तु बीज पड़ चुका था और उस ज्ञानतरु, जो बगदाद में अगले राजवंश के समय फला-फूला, की जड़ें निस्सन्देह यूनानी, शामी और ईरानी संस्कृतियों के पूर्ववर्ती काल में थीं। अमवी काल में साधारणतया भावी संस्कृति के उस बीज का पोषण हुआ।

ईरानी, शामी, क़िब्ती, बर्बर और दूसरी जातियाँ जैसे-जैसे इस्लाम धर्म को स्वीकार करती गयीं और अरबों के साथ उनके विवाह-सम्बन्ध स्थापित होते गये, वैसे-वैसे प्रारम्भिक काल से ही अरबों तथा अन्य जातियों के बीच स्थित भेद-भाव की ऊँची दीवारें गिरती गईं। फलतः अरब मुसलमानों की राष्ट्रीयता पृष्ठ-भूमि में पड़ गयी। अब हजरत मुहम्मद साहब का प्रत्येक अनुयायी, चाहे उसकी राष्ट्रीयता कुछ भी क्यों न हो अरब समझा जाने लगा। उस समय से किसी भी जाति का प्रत्येक वह व्यक्ति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरब समझा जाने लगा जिसने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया हो और अरबी भाषा लिखता-पढ़ता हो। इस्लामी सभ्यता के इतिहास में यह एक अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण तथ्य है। इस लिए जब कभी हम अरबी चिकित्साशास्त्र, दर्शन, अथवा गणित का जिक्र करते हैं तो उससे वस्तुतः हमारा यह तात्पर्य नहीं होता है कि ये समस्त विद्याएँ अरब मस्तिष्क की ही उपज थीं अथवा इन विद्याओं को विकसित करने वाले वे ही लोग थे जो अरब प्रायद्वीप के निवासी थे। इससे हमारा तात्पर्य उन पुस्तकों में निहित उस ज्ञानराशि से है जिसको लोगों ने अरबी भाषा में लिखा था और जिनकी बड़ी संख्या खिलाफत काल में अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। उन लेखकों में ईरानी, शामी, मिस्री, अरब, ईसाई, यहूदी और मुसलमान सभी सम्मिलित थे और उन्होंने यूनानी, आरामी, इण्डो-ईरानी एवं अन्य स्रोतों से भी सामग्री प्राप्त की होगी।

ईरानी सीमा-क्षेत्रों में अरबी भाषा एवं उसके व्याकरण का वैज्ञानिक अध्ययन प्रारम्भ हो गया था। यह अध्ययन विशेष रूप से वे नवमुस्लिम कर रहे थे जो अरब न थे और किसी सीमा तक उनके इस कार्य में अरब भी सम्मिलित थे। इस अध्ययन का प्रथम उद्देश्य उन नव-मुस्लिमों की भाषा सम्बन्धी कमी को पूर्ण करना था जो क़ुरान का अध्ययन करना चाहते थे और सरकारी पदों को प्राप्त करना तथा विजेताओं से बात-चीत का सम्बन्ध स्थापित करना चाहते थे। व्याकरण के सम्बन्ध में प्रथम निबन्ध एक किंवदन्ती के अनुसार एक खलीफा के इस कथन के आधार पर लिखा गया था कि शब्दों के तीन भेद होते हैं—१ संज्ञा, २ क्रिया और ३ अव्यय। जो भी हो, अरबी व्याकरण का विकास बहुत धीमा रहा और उसे विकसित होने में अधिक समय लगा। और इस पर यूनानी तर्क की स्पष्ट छाप पायी जाती है।

क़ुरान के अध्ययन और इसकी व्याख्या की आवश्यकता ने दो जुड़वे विज्ञान अर्थात् भाषाविज्ञान एवं शब्दकोषीय-विज्ञान को प्रोत्साहित किया। इसके साथ-साथ मुसलमानों के मुख्य साहित्यिक कार्य—परम्परा-विज्ञान—हदीस जिसका शाब्दिक अर्थ 'वर्णन' है—को भी अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। हदीस (परम्परा) का अर्थ, स्वयं हजरत मुहम्मद साहब के अथवा उनके किसी साथी (सहाबा) के कार्य एवं कथन से है। कुरान और हदीस पर ही न्याय एवं धर्मशास्त्र की नींव पड़ी है। वर्तमान युग के विधि-विशेषज्ञों का यह अनुमान है कि विधि का न्यायशास्त्र से सम्बन्ध होना चाहिए ; लेकिन इस्लाम में विधि का धर्म से अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है। अमवी शासनकाल में, कानून की व्यवस्था पर प्रत्यक्ष रूप में अथवा तालमूद व अन्य माध्यमों के द्वारा रोमन विधिशात्र का निस्संदेह प्रभाव रहा। अलबत्ता वह किस सीमा तक प्रभावित हुआ है इसका पूर्णरूप से अनुमान नहीं किया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसी काल में अरब विज्ञान का आरम्भ हुआ। चिकित्साशास्त्र पर सर्वप्रथम एक यहूदी ने एक यूनानी निबन्ध के अनुवाद के आधार पर एक निबन्ध लिखा था। इस यूनानी निबन्ध को सिकन्दरिया के एक ईसाई पादरी ने लिखा था। चिकित्सा की भाँति रस-सिद्धि की भी इस्लाम के प्रारम्भिक काल में ही उन्नति हुई थी। यह विज्ञान उन विशिष्ट विज्ञानों में से एक है जिसकी उन्नति में आगे चल कर अरबों ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योग दिया।

कविता एवं संगीत ने भी दमिश्क के दरबार में अधिक उन्नति की। रूढ़िवादियों के आग्रह पर संगीत को मद्यपान एवं जुए जैसी वस्तुओं के समान निषिद्ध समझा गया था, जिनमें लोग अपना समय नष्ट किया करते थे और जिनसे हजरत मुहम्मद साहब ने लोगों को रोका था। अमवी शासन के संरक्षकत्व में कविता-क्षेत्र में सर्वाधिक बौद्धिक उन्नति हुई। विजयों के पिछले संघर्षकाल में, जो अरब जाति कवियों की खान थी, उसमें एक भी कवि का जन्म नहीं हुआ। किन्तु दुनियादार अमवी वंश के राज्यारोहण के साथ ही सुरा देवी तथा संगीत और कविता से प्राचीन सम्बन्ध स्थापित कर लिया गया। उसी काल में अरबी भाषा के साहित्य में शृंगार रस की कविता का सर्वप्रथम उदय हुआ।

मुस्लिम अरबों की कला, धार्मिक भवन-निर्माण कला में अत्यन्त उच्च कोटि की शैली में अभिव्यक्त हुई है। मुसलमान भवननिर्माताओं अथवा उन लोगों ने, जिनको इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया था, भवन-निर्माण की एक ऐसी योजना तैयार की, जो साधारण होते हुए भी शानदार थी। उसकी नींव प्राचीन आदर्शों पर डाली गयी थी लेकिन नवीन धर्म के भाव उसमें बड़े ही अद्‌भुत ढंग से व्यक्त होते थे। अन्तर्जातीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की दृष्टि से इस्लामी संस्कृति के विकास के इतिहास का ज्वलंत उदाहरण हमें मस्जिदों के रूप में मिलता है (मस्जिद उस स्थान को कहते हैं जहाँ सिजदा किया जाता है)! इस्लाम और उसके पड़ोसियों के पारस्परिक सांस्कृतिक सम्बन्ध को चित्रित करने के लिए मस्जिद के अतिरिक्त अन्य कोई अधिक स्पष्ट उदाहरण नहीं प्रस्तुत किया जा सकता है।

मदीना की प्रथम हिजरी शती की सामान्य "नबवी मस्जिद" इस्लामी मस्जिदों के लिए एक आदर्श थी। इस मस्जिद में एक आँगन था जो खुला हुआ था और जो चारों ओर से कच्ची ईंटों की दीवारों से घिरा हुआ था। आगे चलकर धूप से बचने के निमित्त हजरत मुहम्मद साहब ने पूरे आँगन पर एक सपाट छत डलवा दी थी जो पड़ोस की इमारतों से मिली हुई थी। यह छत खजूर के खम्भों पर आश्रित थी तथा खजूर के पत्तों और मिट्टी की बनी हुई थी। खजूर का एक कुन्दा भूमि पर गाड़ दिया गया था जो मंच का काम करता था और जिस पर खड़े होकर हज़रत मुहम्मद साहब भीड़ को सम्बोधित किया करते थे। बाद में इस कुन्दे के स्थान पर एक विशेष प्रकार की लकड़ी का चबूतरा बना दिया गया था जिसमें तीन सीढ़ियाँ भी थीं। यह चबूतरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसी प्रकार का था जैसा कि सीरिया के ईसाई गिरजाघरों में होता है। यहाँ हमको नबवी मस्जिद में आवश्यकता की प्रायः सभी वस्तुएँ सादे रूप में दिखाई देती हैं जैसे—एक आँगन, नमाजियों को साया देने के लिए छप्पर, और एक मंच।

आगे चलकर पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका में जब अरब आगे बढ़ रहे थे, तो अनेक साबित इमारतें तथा अनेक खण्डहर मुसलमानों के हाथ लगे जो एक अत्यन्त विकसित भवन निर्माणकला का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, और इस प्रकार सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह हुई कि इन तमाम बातों ने मुसलमानों को उस समस्त सजीव ज्ञान एवं कला का स्वामी बना दिया, जिनको पराजित जातियाँ सदियों से उत्तराधिकार के रूप में अपने पूर्वजों से प्राप्त करती चली आरही थीं। जब इस शैली का प्रयोग मुस्लिम जाति की धार्मिक आवश्यकताओं के लिए किया गया तो कुछ समय में एक ऐसी कला का प्रादुर्भाव हुआ जो इस्लामी, अरबी, मुस्लिम अथवा मोहमेडेन कला के नाम से प्रसिद्ध हुई। मुसलमान 'मोहमेडेन' शब्द पर आपत्ति करते हैं क्योंकि यह शब्द ईसाई शब्द के समकक्ष है जिसका प्रयोग हजरत ईसा के मानने वालों के लिए होता है और मुसलमान यह कहते हैं कि हम हजरत मुहम्मद साहब की पूजा नहीं करते हैं।

बाइबिल से सम्बन्धित और हजरत मुहम्मद साहब के मेराज† की रात को थोड़ी देर के लिए विश्राम-स्थान होने के नाते जेरुसलम को समस्त मुसलमानों की दृष्टि में आरम्भ से ही एक विशेष पुनीत स्थान की मान्यता प्राप्त हुई है। चट्टानी गुम्बद (डोम आफ दी राक)—"कुब्बतुस्सखरा" सन् ६९१ ई० में बनवाया गया था। यह स्थान यहूदियों, मूर्तिपूजकों, ईसाइयों और मुसलमानों—सबके लिए पवित्र है। परम्परानुसार यह प्रसिद्ध है कि जिस स्थान पर यह भवन स्थित है, वहाँ हजरत इब्राहीम पैगम्बर ने अपने पुत्र इसहाक § को बलिदान करना चाहा था। इस भवन से प्राचीन यवन-निर्माणकला में एक ऐसे परिवर्तन का आरंभ प्रतीत होता है, जिसके द्वारा पच्चीकारी और दूसरी सुसज्जित करने वाली शैलियों का प्रादुर्भाव हुआ। फलस्वरूप यह ऐसा गुम्बद तैयार हुआ जिसने हजरत ईसा की पवित्र समाधि के गुम्बद को भी मात कर दिया। यह सौन्दर्य की ऐसी प्रतिमा है जिसकी संसार में शायद ही कोई बराबरी कर सके।

दमिश्क की बड़ी मस्जिद इससे भी अधिक स्पष्ट रूप से यह बताती है कि अरब सभ्यता का किस प्रकार विकास हुआ। खलीफा अल वलीद ने सन् ७०५ ई० में

---

† मेराज—मुस्लिम परम्परा के अनुसार हजरत मुहम्मद साहब ने एक बार आकाश की यात्रा की थी और वह जेरुसलम से होकर और वहाँ थोड़ी देर रुक कर फिर वहाँ से ऊपर को गये थे। मुसलमान इसी को मेराज कहते हैं। § बाइबिल की कथाओं के अनुसार हजरत इब्राहीम ने अपने पुत्र इसहाक को बलिदान करना चाहा था, लेकिन मुसलमान हजरत इसहाक के स्थान पर हजरत इस्माइल का नाम लेते हैं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दमिश्क के एक ईसाई बासिलकी चर्च (Basilica Church) को जो सेण्ट जान को अर्पित कर दिया गया था, ले लिया। वस्तुतः यह जुपिटर का मन्दिर था। वलीद ने यहाँ पर उस वैभवशाली मस्जिद का निर्माण कराया जो अमवी मस्जिद (जामे अमवी) के नाम से प्रसिद्ध हुई। यह अनुमान लगाना बड़ा कठिन है कि इस मस्जिद में ईसाई गिरजे का कितना अंश शेष रखा गया है। दक्षिण ओर के दो मीनार जो पुराने चर्च के मीनारों पर खड़े हैं, वे बैसेलिकी चर्च के हैं किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उत्तरी मीनार जो, "प्रकाश स्तंभ" का कार्य करता था, वलीद का ही बनवाया हुआ था। यह मीनार, सीरिया, उत्तरी अफ्रीका और स्पेन में मस्जिदों के निर्माण करने के समय एक आदर्श प्रस्तुत करता था। यह सबसे पुराना और विशुद्ध मुस्लिम मीनार है जो अब भी शेष है। इस खलीफा ने अपनी मस्जिद के निर्माण में उन यूनानी कलाकारों के अतिरिक्त, जिन्हें कुस्तुन्तुनिया के बादशाह ने भेजा था, ईरानी, यूनानी और हिन्दुस्तानी कलाकारों से भी काम लिया था। पेपरी (Papyri) कागज की जो पाण्डुलिपियाँ अभी हाल में प्राप्त हुई हैं उनसे पता चलता है कि इस मस्जिद के लिए मसाला और कुशल कारीगर मिस्र से लाये गये थे।

जो कुछ ऊपर वर्णन किया जा चुका और जो कुछ आगे वर्णन किया जायगा उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वे अरब, जिन्होंने संसार को युद्धकला का पाठ पढ़ाया था वही अब शान्ति की कला को सीखने की भी क्षमता रखते थे; और इस क्षेत्र में भी उनको वैसी ही सफलता प्राप्त हुई।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१०—बग़दाद का वैभव

अरबों ने सभ्य जीवन की विलासितापूर्ण सामग्रियों पर अधिकार पाने में वैसा ही यत्न किया जैसा कि उन्होंने इस काल की ललित कला एवं विद्या को प्राप्त करने के लिए किया था। आठवीं शती के मध्य से कुछ पूर्व, एक ऐसा व्यक्ति अमवी सिंहासन पर बैठाया गया जो एक दासी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। यह एक अत्यन्त अप-शकुनसूचक कार्य था। इसके दो उत्तराधिकारी, जो इस वंश के अन्तिम खलीफा थे, दासी-पुत्र ही थे। नपुंसकों का रिवाज अब बहुत बढ़ चुका था, जिससे जनानखानों की बुनियाद पड़ी और इस काल तक खूब विकसित हो चुकी थी। धन की प्रचुरता और दासों की अधिकता के कारण ऐश्वर्यपूर्ण जीवन की ओर सहज रुचि उत्पन्न हो गयी थी। शासक वंश अपने विशुद्ध अरब रक्त के होने का दावा नहीं कर सकते थे। यह सब इस बात का प्रमाण था कि सम्पूर्ण समाज का नैतिक स्तर गिरता ही चला जा रहा था।

इस पतन के कारण अमवी वंश की प्रतिष्ठा कम हो गयी थी। उत्तरी और दक्षिणी अरब कबीलों के पारस्परिक मतभेद ने रही-सही प्रतिष्ठा को और भी जर्जर कर दिया था। विभिन्न जातियों की अलग-अलग जीवन व्यतीत करने की जो प्रवृत्ति इस्लाम के पूर्व भी प्रत्यक्ष थी, अब अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर असंख्य झगड़ों का कारण बन रही थी। सिन्ध नदी के तटों, सिसिली के समुद्री तटों और सहारा की सीमाओं पर प्रत्येक स्थान पर यह पुश्तैनी झगड़ा जिसने अब दो राजनीतिक दलों, क़ैस और यमन—के झगड़ों का रूप ग्रहण कर लिया था, अब अपना रंग दिखाने लगा था। लेबनान और फ़िलिस्तीन में यह झगड़ा वर्तमान समय तक जीवित चला आ रहा था। हमको उस घमासान युद्ध का ज्ञान है जो अठारहवीं शती में इन दो दलों के बीच हुआ था।

खिलाफत के उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम न होने के कारण अमवी वंश और भी निर्बल हो गया था। अमीर मोआविया ने अपने पुत्र यजीद को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर एक बुद्धिमत्ता एवं दूरदर्शितापूर्ण नीति की नींव डाली थी किन्तु अरबों का उत्तराधिकार के सम्बन्ध में पदानुक्रम का अति प्राचीन सिद्धान्त, शासक पिता की इस स्वाभाविक महत्त्वाकांक्षा से सदैव टकराता रहा कि उसके पश्चात् उसका पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी हो!

उस काल के इतिहास में यद्यपि जनता का वर्णन कहीं मुश्किल से ही आता है किन्तु फिर भी यह अजब उलटी सी बात है कि जनता का किसी के लिए भी स्वामिभक्ति की शपथ ले लेना ही उसके सिंहासनारूढ़ होने का प्रमाण था। इसका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रदर्शन मुखियों के द्वारा होता था। पर अभी वह दिन बहुत दूर था, जब किसी राज्य की जनता, जिसके हाथ में सचमुच सम्पूर्ण सत्ता निहित हो, अपनी इच्छाओं को निश्चित वैधानिक रूप से मनवाती।

सन् ७४७ ई० में अमवी वंश के विरुद्ध उनके चचेरे भाई अब्बासियों ने खुला विद्रोह कर दिया। अब्बासी लोग हजरत मुहम्मद साहब के चचा हजरत अब्बास के वंशज थे। यह विद्रोह सफल रहा। अमवी वंश नष्ट कर दिया गया। एक अब्बासी सरदार ने पदच्युत वंश के ८० प्रमुख सरदारों को एक दावत में निमंत्रित किया और उसी के दौरान में उन सबों की हत्या कर डाली। उसने उनके शवों एवं सिसकते हुए शरीरों पर चमड़े का फर्श बिछा कर अपना दस्तरखान सजाया। प्रथम अब्बासी खलीफा ने अपने आप को "अल-सफ्फाह" 'रक्त बहाने वाला' घोषित किया था जो उसका उपनाम बन गया। यह एक अपशकुन था। क्योंकि सत्ता हथियाने वाला यह राजवंश अपनी नीति को कार्यान्वित करने के लिए पशुबल पर भरोसा करता था। इस्लाम के इतिहास में पहली बार यह देखने में आया कि खलीफा की गद्दी के बगल में एक चमड़ा बिछाया जाता था जिस पर जल्लाद बैठता था। यह चमड़ा अब खिलाफत के शाही सिंहासन का एक अंग बन गया। अब्बासी खलीफा उत्तरी अफ्रीका और स्पेन पर कभी अधिकार न रख सके, किन्तु वे इस्लामी जगत् के पूर्वी भाग पर ५०० वर्ष तक शासन करते रहे; यहाँ तक कि १२५८ ई० में इस वंश के ३७ वें खलीफा को मुगलों ने बरबाद कर दिया। अब्बासी खलीफा के शासनकाल में ही इस्लामी सभ्यता अपने स्वर्णयुग पर पहुँची थी।

बगदाद अब्बासियों की ही सृष्टि थी। यह वह नगर है जिसको अब्बासी वंश के दूसरे खलीफा ने दजला नदी के पश्चिमी तट पर उसी घाटी में बसाया था, जिसमें प्राचीन जगत् की कुछ अत्यंत शक्तिशाली राजधानियाँ जगमगा चुकी थीं। खलीफा ने इसको बसाते समय कहा था कि, "यह अति उच्च कोटि की सैनिक छावनी है। इसके अतिरिक्त यहाँ दजला नदी भी बह रही है जिसके द्वारा हम चीन तक के प्रदेशों से भी सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं, और मेसोपोटामिया, आरमेनिया, और उनके आस-पास के क्षेत्रों की खाद्य-सामग्री के साथ-साथ समुद्रों द्वारा उपलब्ध सभी वस्तुएँ प्राप्त कर सकते हैं। यहाँ फरात नदी भी बहती है जिसके द्वारा सीरिया, रक्का और उनके आस-पास के क्षेत्रों से सुलभ सब कुछ लाया जा सकता है।" यह चुनाव अति कुशाग्र बुद्धि का परिचायक था। नये नगर का निर्माण आरंभ हो गया। ४ वर्ष तक एक लाख मज़दूर, कारीगर एवं शिल्पी काम करते रहे और देखते ही देखते यह नगर जगमगाने लगा।

नगर वृत्ताकार था। इसलिए इसका नाम 'गोल नगर' (राउण्ड सिटी) रखा गया। इसमें ईंटों की दोहरी दीवारें थी, तदनन्तर एक गहरी खाई और उसके बाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक ६० फुट ऊँची भीतरी दीवार थी जो केन्द्रीय भाग को घेरे हुए थी। इन दीवारों में चार दरवाजे थे, जिनसे चार मार्ग, चक्र की तीलियों की भाँति निकल कर, साम्राज्य के चार ओर को जाते थे। प्रत्येक मार्ग, नगर के केन्द्र से आरंभ होता था। खलीफा का प्रासाद जो स्वर्णद्वार या हरा गुम्बद कहलाता था इस समस्त वृत्ताकार रचना के केन्द्र में स्थित था। प्रासाद के बगल में एक जामे मस्जिद खड़ी थी। दरबारे आम का गुम्बद, जिसके नाम पर प्रासाद का नाम प्रख्यात था, भूमि से १३० फुट ऊँचा था। कुछ ऐसी किंवदन्तियाँ हैं कि इसके ऊपर एक व्यक्ति की प्रतिमा स्थापित थी जो घोड़े पर सवार और हाथ में बर्छी लिये हुए थी। आपत्ति के समय उसकी बर्छी उसी ओर संकेत करती थी जिधर से शत्रु के आने की आशंका होती थी। किन्तु एक अरब भूगोलवेत्ता का कथन है कि यह प्रतिमा सदैव एक ही ओर संकेत करती थी जिसका यह तात्पर्य था कि उसी ओर निरन्तर रहने वाला एक शत्रु था जिससे नगर को सदा आशंका रहती थी। यह भूगोलवेत्ता यह घोषित करता है कि मुसलमान इतने बुद्धिमान तो अवश्य हैं कि वे ऐसी काल्पनिक बातों पर विश्वास न करें।

नयी राजधानी की इस स्थिति ने पूर्व से आने वाली विचारधाराओं के लिए मार्ग खोल दिया। यहीं अरबी इस्लाम ईरानी प्रभावों का शिकार हुआ और 'खिलाफत' अरबी शेखों से अधिक ईरानी निरंकुशता के पुनरुत्थान का कारण हुई। धीरे धीरे ईरानी उपाधियाँ, ईरानी शराब और बीवियाँ, ईरानी औरतें, और ईरानी गीत, ईरानी भावों एवं विचारों के साथ-साथ घर करते गए। ईरानी प्रभावों के कारण अरबी जीवन की प्रारम्भिक कर्कशता दूर हो गयी और उसका स्थान कोमलता ने ले लिया। इस प्रकार उस नवीन युग के लिए मार्ग प्रशस्त हो गया जो विज्ञान की उन्नति और विद्वत्तापूर्ण कार्यों के लिए अत्यधिक प्रसिद्ध है। केवल दो ही क्षेत्र ऐसे थे जिन पर अभी तक अरबों का प्रभाव शेष था। उनमें से एक इस्लाम जो अभी तक राज्य-धर्म था और दूसरी अरबी भाषा थी जिसमें अभी तक सरकारी दफ्तरों का कार्य होता था।

नवीं शती में दो ऐसी राजकीय विभूतियाँ सामने आती हैं जिनकी विश्व में एक महती सत्ता थी। इनमें एक पश्चिम का शार्लीमान (Charlemagne) और दूसरा पूर्व में खलीफा हारुन-अल-रशीद था। इन दोनो में निस्सन्देह हारूँ अधिक शक्तिशाली और उच्चतर कोटि की सभ्यता का प्रतिनिधि था। इन दोनो ही समकालीन विभूतियों ने, अपना हित समझकर परस्पर मित्रता का भाव रखा। शार्लीमान अपने शत्रु बेजेन्टाइन साम्राज्य के विरुद्ध, हारून से मित्रता की सम्भावना की आशा करता था और हारून अपने प्रतिद्वन्द्वियों और भयंकर शत्रुओं अर्थात् पड़ोस में स्पेन के अमवी शासकों, जो वहाँ एक समुन्नत और शक्तिशाली राज्य स्थापित कर चुके थे, के विरुद्ध शार्लीमान का उपयोग करना चाहता था। पश्चिमी इतिहासकारों का यह कथन है कि यह मित्रता पारस्परिक उपहारों एवं राजदूतों के आदान-प्रदान के द्वारा स्थापित हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सकी। एक फिरंगी लेखक, जो कहीं-कहीं शार्लीमान के सचिव के रूप में स्मरण किया जाता है, कहता है कि "पश्चिम के महान् सम्राट् के राजदूत 'ईरान के बादशाह' हारून के दरबार से बड़े ही बहुमूल्य उपहार लेकर लौटे हैं। उनमें कपड़े, विभिन्न प्रकार के सुगन्धित पदार्थ और एक हाथी भी सम्मिलित है।" इस विवरण में एक पेचीदा घड़ी का भी उल्लेख है जो बगदाद के उपहारों में से एक थी। उस बाँसुरी की कहानी, जिसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि हारून ने शार्लीमान को भेजी थी, इतिहास की दिलचस्प मनगढ़न्त कहानियों में से एक है। प्रत्यक्षतः इस कहानी का आधार उस शब्द (Olepsydra) का अशुद्ध अनुवाद है, जो उपहार में प्राप्त उस जलघड़ी के लिए प्रयुक्त है। इस शब्द का वास्तविक अर्थ वह "शैली" है जिसके अनुसार पानी को नापकर समय का अनुमान किया जाता है। इसी प्रकार वह कहानी भी निराधार साबित हो चुकी है, जिसमें कहा गया है कि हारून ने ही हजरत ईसा की समाधि की कुंजियाँ शार्लीमान के पास भेज दी थीं। कहा जाता है कि उपहारों एवं दूतावासों का यह आदान-प्रदान जो सन् ७९७ ई० तथा सन् ८०६ ई० के बीच हुआ था, एक आश्चर्यजनक बात है, क्योंकि इसके सम्बन्ध में मुसलमान इतिहासकारों के द्वारा किसी प्रकार का कोई संकेत नहीं मिलता है। जबकि अन्य अनेक राजनीतिक आदान-प्रदानों एवं शिष्टाचारों के उल्लेख मिलते हैं, इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का भी जिक्र नहीं मिलता।

बगदाद को बने हुए अभी ५० वर्ष भी नहीं हुए थे कि वह हारून (७८६-८०६) के शासनकाल में ही एक साधारण अवस्था से बढ़कर अपार धनराशि का विश्व-केन्द्र तथा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का एक ऐसा नगर बन गया जिसको बेजेन्टियम का एक मात्र प्रतिद्वन्द्वी कहा जा सकता था। इसका वैभव, इसके साम्राज्य की समृद्धि के साथ ही साथ बढ़ रहा था, जिसकी वह राजधानी था। वह एक ऐसा नगर बन गया था जिसका उदाहरण अब संसार में मिलना कठिन था।

राजकीय प्रासाद, उन बहुत से भवनों के साथ, जो रानियों, ख्वाजासराओं (नपुंसकों) और विशेष जन-अधिकारियों के लिए निर्मित थे, वृत्ताकार नगर के एक तिहाई भाग में फैला हुआ था। विशेष रूप से इसका "दरबारे आम" बड़ा ही वैभवशाली था। इसमें ऐसे उच्चकोटि के कालीन, पर्दे, और गद्दे पड़े हुए थे जिनके तैयार करने में 'पूर्व' ने अपना पूर्ण कौशल लगा दिया था। खलीफा की रानी का नाम ज़ुबैदा था जो सम्बन्ध में उसकी चचेरी बहिन भी होती थी। आगे आने वाली पीढ़ी ने इस रानी की यश-कीर्ति को इसके सुविख्यात पति के साथ भागीदार माना है। कहते हैं कि यह रानी रत्नजटित स्वर्ण एवं रजत-पात्रों के अतिरिक्त किसी अन्य पात्र को अपने दस्तरख़ान पर नहीं देख सकती थी। यह वह प्रथम रानी थी जिसके जूते रत्नजटित होते थे। एक हज-यात्रा के अवसर पर, कहा जाता है, कि उसने ३० लाख दीनार व्यय किया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

था। इसमें उस पच्चीस मील लम्बी नहर बनवाने का व्यय भी सम्मिलित है जो उसके आदेश से मक्का तक पानी ले जाने के लिए खोदी गयी थी।

जुबेदा की एक प्रतिद्वन्द्विनी भी थी जो हारून की सौतेली बहन थी। इस सुन्दरी का नाम ओलैया (Ulayyah) था। इसने अपने ललाट के एक चिह्न को छिपाने के लिए एक रत्नजटित टीके का आविष्कार किया था। यह टीका "आला ओलैया" के नाम से फैशन-जगत् में उस समय के आभूषण के रूप में शीघ्र ही अपना लिया गया।

खलीफा के राज्यारोहण, विवाह, हज-यात्राओं और विदेशी राजदूतों के स्वागत के अवसरों पर शाही दरबार की सम्पत्ति एवं वैभव का पूर्ण रूप से प्रदर्शन किया जाता था। खलीफा अल-मामून ने अपने वज़ीर की अठारह वर्ष की पुत्री बूरान से विवाह किया। यह विवाहोत्सव सन् ८२५ ई० में बड़े ही उच्च स्तर पर मनाया गया। अरबी साहित्य में, इस विवाह में जो असाधारण व्यय हुए हैं, उनका वर्णन एक अविस्मरणीय कहानी है। कहा जाता है कि इस विवाह के अवसर पर वर-वधू को मोती एवं नीलमणि-जटित एक स्वर्णासन पर लाकर उनके ऊपर से एक स्वर्ण-थाली से विचित्र आकार के एक हजार मोती निछावर किये गये। एक फानूस, जिसमें अम्बर की २०० बत्तियाँ रोशन थीं, जगमगा कर रात्रि के अन्धकार को दिन में परिणत कर रहा था। कस्तूरी के गोले जिनमें से प्रत्येक पर किसी राज्य या दास का नाम लिखा था अथवा इसी प्रकार के अन्य उपहार राजकुमारों एवं अमीरों के ऊपर बरसाये गये। सन् ९१७ ई० में खलीफा अल-मुक्तदिर ने अपने प्रासाद में बड़ी शान व शौकत के साथ नवयुवक कुस्तुन्तीन सप्तम के राजदूतों का स्वागत किया था। प्रत्यक्षतः यह राजदूत, बन्दियों के आदान-प्रदान और मुक्ति-मूल्य देकर उन्हें छुड़ाने के लिए आये थे। खलीफा की सेना में १,६०,००० सवार और पैदल सिपाही, ७००० काले और गोरे नपुंसक और ७०० दरबारी अधिकारी (चैम्बरलेन) थे। परेड में एक सौ सिंहों ने भी भाग लिया था।

खलीफा के प्रासाद में ३८ हजार पर्दे **पड़े थे,** जिनमें से १२५०० पर्दों पर सोने-चाँदी का काम किया हुआ था। इसके अतिरिक्त २२ हजार कालीन थे। राजदूत इस दृश्य से इतने चकित हुए कि वे पहले चैम्बरलेन के कार्यालय को खलीफा का दरबार समझे। फिर उनको वजीर के कार्यालय में जाने पर भी इसी प्रकार का भ्रम हुआ। वे 'विटप-गृह' (Hall of the Tree) को देख कर विशेष रूप से प्रभावित हुए। इस भवन में स्वर्ण एवं रजत-निर्मित एक कृत्रिम वृक्ष था जिस का भार ५ लाख ड्राम था। इसकी शाखाओं पर, स्वतः गानेवाले सोने-चाँदी के पक्षी बैठाये गये थे। बाग़ में उन खजूर के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधों को देख कर उनको और भी आश्चर्य हुआ जो कृत्रिम रूप से बौने कर दिये गये थे और जो इस कुशलता से उगाये गये थे कि उनमें दुर्लभ प्रकार के फल उत्पन्न होते थे।

हारून इस्लामी शाहंशाहियत का बाँका नमूना था। इसकी और इसके उत्तराधिकारियों की शाहखर्ची, कवियों, विदूषकों, संगीतज्ञों, गायकों, नर्तकों, और कुत्तों, मुर्गों व दूसरे पशु-पक्षियों की लड़ाई की शिक्षा देने वाले उस्तादों तथा अन्यान्य मनोरंजन प्रदान करने वाले हुनरमन्दों को चुम्बक की भाँति आकर्षित कर राजधानी की ओर खींच लाती थी। स्वेच्छाचारी कवि अबूनुवास, अल-रशीद का मुँहलगा साथी था और विलासपूर्ण रात्रि की रंगरेलियों में भी उसका साथी होता था। उसने इस बादशाह के वैभवकाल के रंगपूर्ण दरबारी जीवन को इस तरह से चित्रित किया है जो अविस्मरणीय है। अल-आग़ानी (Al Aghani) नामक पुस्तक के पृष्ठ उन उद्धरण-गाथाओं से परिपूर्ण हैं जिनकी सत्यता को सिद्ध करना कठिन नहीं है। एक कहानी के अनुसार हारून के पुत्र खलीफा अल-अमीन ने एक दिन सन्ध्या समय अपने चचा इब्राहीम को, जो एक व्यवसायिक गायक भी था, तीन लाख दीनार केवल अबूनोवास के कतिपय पद्यों को गाकर सुनाने पर दिया था। इस प्रकार इब्राहीम को खलीफा के दरबार से जो पुरस्कार प्राप्त होते रहे उनकी कुल रकम दो करोड़ दीनार होती थी जो कुछ जिलों की भूमि के खिराज से अधिक न थी। अल-अमीन ने दजला नदी के तट पर अपने निजी जलसों के लिए विशेष प्रकार की कुछ नावें तैयार करवायी थीं जिनकी आकृतियाँ कुछ जानवरों की आकृतियों के सदृश थीं। उनमें से कोई नाव मछली की आकृति की, कोई सिंह के सदृश और कोई गरुड़ के स्वरूप की होती थीं। इनमें से प्रत्येक नाव के निर्माण में तीस-तीस लाख दिरहम व्यय हुए थे। अल-आग़ानी में एक स्थान पर इस बात का उल्लेख है कि एक बार अल-अमीन के निजी निर्देश पर रात्रि भर चलने वाले अपूर्व नाचरंग में, एक बड़ी संख्या में सुन्दरी नर्तकियों ने अपने मृदु संगीत के साथ ताल मिला कर जो नृत्य प्रस्तुत किया उसमें सभी उपस्थित दर्शक भी मस्त होकर उनके साथ ही स्वर मिला कर अलापने लगे थे। एक दूसरे लेखक का कथन है कि इब्राहीम द्वारा अपने भाई अल-रशीद को एक बार एक भोज दिये जाने के अवसर पर खलीफा को एक तश्तरी में मछलियाँ परोसी गयीं जो देखने में असाधारण रूप से छोटी प्रतीत होती थीं। इसके खुलासा करने में, मेज़मान इब्राहीम ने कहा कि यह टुकड़े मछली की जीभें हैं। इस पर सेवक ने कहा कि तश्तरी में रखी हुई १५० जिह्वाओं का मूल्य एक हजार दरहम से अधिक है। पूर्व की अतिरंजना-शैली के आवरण को हटाकर यदि देखा जाय तो भी बगदाद के दरबारी जीवन का वैभव हमें चकित करने के लिए पर्याप्त है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बगदाद के मीलों लम्बे बन्दरगाह में सैकड़ों जहाज खड़े रहते थे। उनमें युद्ध-पोत तथा सैर सपाटे वाली नावें, चपटे पेंदे वाले चीनी जहाज और भेड़ की खालों से लदे हुये लट्ठों के देसी बेड़े—जो आज भी देखे जा सकते हैं—जो मोसूल से बगदाद की ओर पानी में बहा दिये जाते थे, इन सब का जमघट रहता था। शहर के बाजारों में चीन से चीनी मिट्टी का सामान, रेशम, और कस्तूरी; भारत तथा मलाया प्रायद्वीप से गर्म मसाला, खनिजपदार्थ एवं रंग ; तुर्कों के देश मध्यएशिया से मूँगा, नीलम, वस्त्र तथा दास ; स्कैण्डेनेविया और रूस से शहद, मोम, समूर, एवं श्वेत दास, और पूर्वी अफ्रीका से हाथीदाँत, स्वर्ण-रेत, हब्शी गुलाम आया करते थे। चीनी मिट्टी के बरतनों के क्रय-विक्रय की एक विशेष बाजार लगा करती थी। साम्राज्य के विभिन्न प्रान्तों से स्थानीय पैदावार—यथा मिस्र से चावल, गल्ला, लिनेन, सीरिया से काँच, धातु के सामान और मेवा, अरब से किमखाब,मोती, और हथियार तथा ईरान से रेशम, सुगन्धित पदार्थ और तरकारियाँ आती थीं।

बगदाद तथा अन्य निर्यातकेन्द्रों से अरब के व्यापारी कपड़े, जवाहिरात तथा धातु-दर्पण, काँच के मोती एवं गर्म मसाले सुदूर पूर्व योरोप और अफ्रीका को भेजा करते थे। हाल ही में गड़े हुए सिक्कों के भण्डार उत्तरी रूस, फिनलैण्ड, स्वेडेन और जर्मनी जैसे दूरस्थ देशों में पाये गये हैं। ये भण्डार इस बात के प्रमाण हैं कि उस समय और उसके पश्चात् भी मुसलमानों का व्यापार समस्त संसार में फैला हुआ था। प्रसिद्ध नाविक सिन्दबाद की कहानी, जो अलिफलैला (थाउजेण्ड एण्ड वन नाइट्स) की उत्तम कहानियों में दी हुई है, केवल एक काल्पनिक कहानी नहीं है अपितु ज़माना हुआ कि यह स्वीकार किया जा चुका है कि इनका आधार वास्तविक विवरण हैं जिनका सम्बन्ध मुसलमान व्यापारियों की सामुद्रिक यात्राओं से है।

व्यापारियों ने बगदाद के समाज में प्रमुख भाग लिया है। आज की भाँति उस समय भी एक बाने के व्यापारियों की दुकानें एक ही बाजार में होती थीं। बाजार की यह एकरूपता, शादी या खतने के जुलूसों के गुजरने से कभी-कभी भंग हो जाया करती थी। पेशेवर लोग, यथा हकीम, वकील, अध्यापक, लेखक, और इसी प्रकार के अन्य लोग जन-जीवन में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त करने लगे थे। उस समय के एक जीवनीलेखक ने विद्वत्-समुदाय के एक सदस्य के दैनिक कार्य का जो चित्र चित्रित किया है, उससे यह ज्ञात होता है कि उन दिनों विद्वत्ता का मूल्य और सम्मान काफी हो चुका था। इस विवरण में हमें एक विद्वान व्यक्ति नित्य घोड़े की सवारी के उपरांत सार्वजनिक स्नानागार में सेवकों द्वारा नहलाये जाते दिखाया गया है। स्नान के बाद वह एक ढीली-ढाली एबा पहन कर बिस्कुट और पेय लेकर आराम करता है। कभी-कभी सो भी जाया करता है। इस अल्प निद्रा के पश्चात् वह सुगन्धित द्रव्यों को जलाकर उनकी सुगन्ध लेता है और भोजन लाने का आदेश देता है। उसके भोजन में सामान्यतया शोरबा, स्निग्ध चूजे और रोटी हुआ करती थीं। भोजन करने के पश्चात्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वह पुनः सो जाता है। सोकर उठने के बाद चार प्याले पुरानी शराब पीता है जिसके साथ वह सीरिया के सेब एवं ब्रिही का भी सेवन इच्छानुसार करता है।

बगदाद के इस ऐश्वर्यपूर्ण जीवन ने इतिहास एवं उपन्यासों में उस काल को बहुचर्चित बना दिया है। किन्तु विश्व की प्राचीन कथाओं में इस काल की विशिष्ट ख्याति होने का वास्तविक कारण तो यह है कि इस समय में ही, इस्लाम के इतिहास में, महत्वपूर्ण बौद्धिक जागरण का सहसा विकास हुआ। यह काल, विचार एवं संस्कृति के संपूर्ण इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह जागृति काफी हद तक विदेशी प्रभावों का परिणाम थी। इसमें कुछ इण्डो-ईरानी और सीरिया का प्रभाव था पर अधिक प्रभाव यूनान का था। उसी काल में, ईरानी, संस्कृत, सीरियायी तथा यूनानी भाषाओं से अरबी में हुये अनुवाद इसके प्रमाण हैं। मुसलमान अरबों के पास, विज्ञान, दर्शन और साहित्य की जो कुछ पूँजी थी वह बहुत ही सामान्य थी; लेकिन वह रेगिस्तान से, ज्ञान प्राप्त करने की उत्कट जिज्ञासा और अपने में अन्तर्निहित अन्य प्रतिभाओं को साथ ले कर आये थे। जैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, वे अरब मुस्लिम, अपनी इन्हीं प्रतिभाओं के कारण, पुरानी और अधिक सभ्य जातियों, जिनको उन्होंने जीता अथवा जिनसे उनका मुकाबिला हुआ, के लाभान्वित उत्तराधिकारी हुये। इसी प्रकार अरब मुसलमानों ने सीरिया में उत्तरकालीन यूनानियों से स्वयं प्रभावित आरामी, तथा ईराक में ईरानियों से पूर्वप्रभावित ईराकी सभ्यता को अपनाया। बगदाद नगर के निर्माण के बाद ७५ वर्ष के भीतर ही, अरबी भाषा-भाषी जगत, अरस्तू के मुख्य दार्शनिक ग्रन्थों, बड़े-बड़े नव-अफ़लातूनी (Neoplatonic) टीकाकारों के ग्रन्थों, गैलेन के मध्ययुगीन अनेक लेखों तथा ईरान एवं हिन्दुस्तान के वैज्ञानिक ग्रन्था का स्वामी बन बैठा। कुछ ही दशाब्दियों में अरबों ने वह सब कुछ अपने में पचा लिया जिसको अपनाने में यूनानियों को सदियाँ लग गयी थीं। यूनानी और ईरानी सभ्यताओं की मुख्य बातों को अपनाने में इस्लाम को अपने मौलिक चरित्र की उन बहुत सी बातों से हाथ धोना पड़ा जिनमें रेगिस्तानी आत्मा एवं अरब-राष्ट्रीयता की छाप प्रकाशमान थी। किन्तु यह भी तथ्य है कि इसके द्वारा, दक्षिणी योरोप और निकट पूर्व (Near East) को मिलाने वाली मध्ययुगीन सांस्कृतिक क्रिया-कलाप में इनका प्रमुख योगदान रहा। पर यह नहीं भूलना चाहिए कि यह संस्कृति भी उसी स्रोत से सींची गयी थी जो मिस्र, बाबुल, फोनेशिया, और जोडिया के स्रोतों से प्रवाहित हो कर यूनान में पहुँचा था। और अब वही स्रोत यूनानी जामा पहन कर पुनः पूर्व की ओर लौट रहा था। हम आगे चल कर यह भी देखेंगे कि इसी स्रोत के बहाव को किस तरह अरबों ने स्पेन और सिसली के द्वारा फिर योरोप की ओर मोड़ दिया, जिसके फलस्वरूप योरोप में विद्या, कला और संस्कृति का पुनर्जागरण हुआ।

आरम्भिक स्रोत के रूप में हिन्दुस्तान से बड़ी प्रेरणा मिली। विशेषतः दर्शन, और गणित के क्षेत्र में उसका बड़ा योगदान रहा। सन् ७७३ ई० के लगभग एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दुस्तानी यात्री ने बगदाद में ज्योतिष पर एक निबंध प्रस्तुत किया। खलीफा के आदेश से अलफ़ज़ारी (Al-Gazari) ने अरबी में इसका अनुवाद किया। रेगिस्तानी जीवनकाल से ही अरबों को सितारों से बड़ी दिलचस्पी थी। लेकिन अभी तक उनका वैज्ञानिक अध्ययन आरम्भ नहीं हुआ था। इस्लाम ने, नमाजों के लिए दिशाएँ निश्चित करने की गरज से, ज्योतिष के अध्ययन पर बल दिया। प्रसिद्ध अल ख्वारिज्मी ने जिसका देहावसान लगभग सन् ८५० ई० में हुआ था, अपनी ज्योतिष सम्बन्धी प्रसिद्ध सारिणी की नींव अल्फ़ज़ारी के इसी अनुवाद पर रखी थी। उसने हिन्दुस्तानी और यूनानी ज्योतिष-पद्धतियों का समन्वय किया है और उसने अपनी खोज से कुछ वृद्धि भी की है। यही भारतीय यात्री एक गणित सम्बन्धी लेख भी अपने साथ लाया था, जिसके द्वारा इस्लामी जगत में वह अंक प्रचलित हुए जो, योरोप में अरबी अंकों के नाम से पुकारे जाते हैं, और अरब में वे ही भारतीय अंकों (हिन्दुसा) के नाम से पुकारे जाते हैं। बाद को, ९वीं शती में, भारतीयों ने अरब-गणित-विज्ञान में एक अन्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योग प्रदान किया जो दाशमिक पद्धति (Decimal System) के नाम से विख्यात है।

जिस समय अरबों ने, द्वितीया के चन्द्रमा के सदृश उपजाऊ भूमि को जीता है, उस समय यूनानियों की बौद्धिक राशि, जो उनके हाथ आई, वह निस्सन्देह उनके पास अत्यंत मूल्यवान निधि थी। इस लिये अरबों के जीवन पर अन्य बाहरी प्रभावों की अपेक्षा यूनानी दर्शन का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा।

तर्क और विवेक की प्रवृत्तियों से प्रेरित खलीफा अल मामून ने यूनानियों के दार्शनिक ग्रन्थों का उपयोग, अपने इस विचार के औचित्य का समर्थन करने के लिये किया कि 'धार्मिक ग्रन्थों को तर्क का आधार प्राप्त हो'। सन् ८३० ई० में उसने अपने प्रसिद्ध "ज्ञान-मन्दिर" की नींव बगदाद में डाली, जहाँ पुस्तकालय, शिक्षा-निकेतन तथा अनुवाद-शाला की एकसाथ व्यवस्था की गयी। ई० पू० तीसरी शती के पूर्वार्द्ध में स्थापित, सिकन्दरिया के संग्रहालय के पश्चात्, यह "ज्ञान-मन्दिर" अनेक प्रकार से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शिक्षा-केन्द्र सिद्ध हुआ। इस समय तक, ईसाइयों, यहूदियों और नव-मुस्लिमों द्वारा, स्वतन्त्र रूप से, कुछ छुटपुट अनुवाद किये गये थे। अब वही कार्य, अल मामून के समय में आरंभ हो कर, उसके आरंभिक उत्तराधिकारियों के समय में भी इस नव-स्थापित 'ज्ञान-मन्दिर' में ही विशेषरूप से केन्द्रित हो गया। सन् ७५० ई० के पश्चात्, अब्बासियों का अनुवाद-युग लगभग १०० वर्ष तक रहा। अनुवादकों की बहुत बड़ी संख्या आरामी भाषा बोलती थी, अतः यूनानी भाषा के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद पहले (सीरियायी) भाषा में हुआ, उसके बाद अरबी भाषा में। आरामी वह भाषा थी जिसे हजरत ईसा बोला करते थे।

अरबी अनुवादकों ने यूनानी 'साहित्य' के ग्रन्थों में किसी प्रकार की रुचि नहीं ली। अरब मस्तिष्क ने यूनानी नाटक, यूनानी कविता तथा यूनानी इतिहास से कोई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निकट संपर्क नहीं स्थापित किया। इन विषयों में ईरानी प्रभाव ही प्रबल रहा। यूनानी दर्शन, जिसकी नींव प्लेटो और अरस्तू ने डाली थी और जिसको आगे चलकर प्लेटो के अनुयायियों ने विकसित किया, उसी की आधार-शिला पर अरबों ने ज्ञान की खोज का कार्य आरंभ किया। अरब हुनैन इब्न इसहाक (Joannitius, 809—873) को अरब लोग "अनुवादकों का शेख" कहते हैं। उसकी गणना उस समय के बड़े-बड़े विद्वानों और महापुरुषों में की जाती है। वह नस्तूरी ईसाई धर्म का अनुयायी था और अल-हीरा (Al-Hirah) का निवासी था। वह अपनी युवावस्था में एक हकीम के यहाँ एक कम्पाउण्डर के पद पर कार्य करता था। उसके स्वामी ने एक दिन उसे झिड़क कर कहा कि 'हीरा' के लोगों को दवा से क्या प्रयोजन, जाकर बाजार में कहीं रेज़गारी बदलने का धंधा करो। यह बात उसके दिल में बैठ गयी और उसने आँखों में आँसू भरे, खिन्न होकर अपने स्वामी के यहाँ से नौकरी छोड़ दी। उसने यह तय कर लिया कि वह यूनानी भाषा सीख कर ही रहेगा। अनुमान किया जाता है कि अरबी की दूसरी पुस्तकों के साथ-साथ हुनैन ने जालीनूस (Galen), बुक़रात (Hippocrates), देकोरीदस (Dioscorides) की पुस्तकों का अनुवाद और अफ्लातून (Plato) की रिपब्लिक, तथा अरस्तू की कैटेगोरीज (Categories) भौतिकशास्त्र और मैगनामोरैलिया (Magnamoralia) का अनुवाद किया था। इन समस्त कार्यों में विशेष महत्वपूर्ण उसके, जालीनूस की प्रायः समस्त वैज्ञानिक पुस्तकों के सीरियायी (syriac) तथा अरबी भाषाओं में अनुवाद हैं। जालीनूस की, शरीर-रचना-विज्ञान (Anatomy) पर सात पुस्तकें, यूनानी भाषा में अप्राप्य हैं, किन्तु सौभाग्य से वे अरबी भाषा में मिलती हैं। हुनैन ने इंजील (Old Testament) का यूनानी भाषा से अरबी में जो अनुवाद किया था, वह प्राप्य नहीं है।

एक अनुवादक के रूप में हुनैन की योग्यता की पुष्टि इस बात से भी होती है कि वह तथा अन्य अनुवादक ५०० दीनार [लगभग १२०० डालर] मासिक पाते थे और खलीफा अल-मामून, हुनैन को उसकी अनुवाद की हुई पुस्तकों के बराबर सोना तौलकर पारितोषिक के रूप में देता था। किन्तु वह अपनी ख्याति की पराकाष्ठा तक, एक अनुवादक के रूप में नहीं, अपितु एक चिकित्सक के रूप में उस समय पहुँचा जब खलीफा अल-मुतवक्किल ने उसको अपने निजी-चिकित्सक के रूप में नियुक्त किया। उसके संरक्षक ने उसको एक बार एक वर्ष तक बन्दीगृह में इस अपराध के कारण रखा था कि उसने एक बहुत बड़े पारितोषिक को ठुकरा कर उसके शत्रु के लिए विष तैयार करना अस्वीकार कर दिया था। जब वह पुनः खलीफा के समक्ष लाया गया और खलीफा ने उसे मृत्युदण्ड का भय दिखाया तो उसने उत्तर दिया कि मुझको तो केवल वह कला आती है जो कल्याणकारी है और इसके अतिरिक्त मैंने किसी अन्य वस्तु का अध्ययन नहीं किया है। खलीफा ने यह कह कर कि, वह केवल अपने चिकित्सक की ईमानदारी की परीक्षा ले रहा था, हुनैन से पूछा, "किस वस्तु ने तुम्हें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घातक विष तैयार करने से रोका"। हुनैन ने उत्तर दिया कि, "मेरा धर्म और मेरा पेशा—यही दो वस्तुएँ हैं जिन्होंने मुझे इससे रोका। मेरा धर्म यह आदेश देता है कि हमें अपने शत्रुओं के साथ भी भलाई करनी चाहिए, मित्रों की बात ही क्या ! मेरा पेशा तो मानव जाति की भलाई और उनके सुख और आरोग्य मात्र के लिये है। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक चिकित्संक को सौगन्ध खानी पड़ती है कि वह कभी भी किसी व्यक्ति को घातक औषधि नहीं देगा"। चिकित्सा-शास्त्र का एक आधुनिक फ्रान्सीसी इतिहासकार, हुनैन को नवीं शती की सबसे बड़ी विभूति मानता है।

अनुवाद-काल के समाप्त होने से पूर्व ही, अरस्तू की प्रायः सभी उपलब्ध पुस्तकें, अरबी पाठकों के हाथों में अनूदित होकर आ गयी थीं; यद्यपि उनमें से अच्छी खासी पुस्तकें जाली थीं। और वह सब अरब में उस समय हो रहा था, जब कि यूरोप, यूनानी विचार धारा और विज्ञान से बिलकुल अनभिज्ञ था। जिस काल में अल-रशीद और अल-मामून यूनानी और ईरानी दर्शन की गहराई में गोता लगा रहे थे, उस समय पश्चिम में उनके समकालीन शार्लिमान और उसके सामन्त अपने नाम लिखना सीखने में जुटे हुये थे। अरस्तू का तर्कशास्त्र (Organon) जिसके अरबी अनुवाद में अरस्तू के अलंकार शास्त्र एवं काव्य तथा परफेरी (Porphyry) की ईसागोजी (रत्नों का प्रभावविज्ञान) भी सम्मिलित हैं, ने, अरबी व्याकरण के समकक्ष ही, इस्लाम में, मानवचरित्र के अध्ययन का आधार प्रस्तुत किया। और आज भी अरस्तू के तर्कशास्त्र को वही सम्मान प्राप्त है। मुसलमानों ने नव-प्लेटोवादी टीकाकारों के इस विचार को स्वीकार कर लिया कि अरस्तू और प्लेटो के उपदेश लगभग एक से हैं। विशेष कर सूफीवाद—मुस्लिम रहस्यवाद में, नव-प्लेटोवाद का प्रभाव पूर्णरूप से प्रकट हो रहा है। अरब-विद्वानों, विशेष कर इब्न सेना (Avicenna) और इब्नरुस्त (Averroes) के द्वारा, प्लेटोवाद और अरस्तूवाद लैटिन भाषा में पहुँचा। हम आगे चल कर पढ़ेंगे कि इन्होंने मध्यकालीन यूरोपीय विचारधारा को अत्यधिक प्रभावित किया।

अब्बासियों के प्रारम्भिक शासनकाल में, अनुवाद के इस लम्बे और सफल युग की समाप्ति के बाद, मौलिक रचनाओं का समय आरम्भ हुआ, जिसकी चर्चा आगे के किसी अध्याय में की जायगी। अरबी, जो इस्लाम से पूर्व केवल कविता की भाषा थी और हजरत मुहम्मद साहब के पश्चात् भी जो विशेष रूप से दैवी संदेश और धर्म की भाषा मात्र थी, दसवीं शती में, अभूतपूर्व और आश्चर्यजनक रूप में वैज्ञानिक एवं दार्शनिक विचार-धाराओं की अभिव्यक्ति का सरल और सहज माध्यम बन गई। इसी काल में कूटनीति एवं शिष्ट लोकाचार की भाषा बनकर, मध्य एशिया से लेकर उत्तरी अफ्रीका के विस्तृत देशों को पार करती हुई, वह स्पेन तक फैल गयी। उस समय से लेकर अबतक ईराक, सीरिया, फिलिस्तीन, मिस्र, ट्यूनिस, अल्जीरिया, और मोरक्को के निवासी अरबों की ही भाषा में अपने भावों को व्यक्त करते आये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

११—जन-जीवन

अरब ऐतिहासिकों ने, खलीफाओं की अशांत और रक्तरञ्जित जीवनचर्या, उनके राजवंशों और सल्तनत के भूठे-दावेदारों के उत्थान और पतन, वजीरों, सेनापतियों तथा उस युग की राजनीति में प्रसिद्ध व्यक्तियों की विजयों तथा दुर्घटनाओं की कहानी का वर्णन करने में अपना अत्यधिक ध्यान केन्द्रित किया है। और इसी कारण उनके वर्णन में, जन-साधारण के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का कोई पर्याप्त चित्रण नहीं मिलता। किन्तु इनकी पुस्तकों में प्राप्त यत्र-तत्र कुछ प्रसंगवश आगये अंशों, अन्य साहित्यिक साधनों, तथा आज के पूर्वी मुस्लिम जगत में लगभग पहले जैसे ही चले आ रहे सामान्य जीवन के तथ्यों के आधार पर निस्सन्देह यह सम्भव हो जाता है कि हम उस समय के जन-जीवन के चित्र के ढाँचे की रचना कर लें।

नवीं शती में, स्त्री को उतनी ही अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी, जितनी उससे पूर्वकालीन स्त्रियों को मिली हुई थी। पर दसवीं शती के अन्त में स्त्रियों में कठिन पर्दा और पुरुष-समाज से पृथक रहने का आम चलन हो गया था। अब्बासियों के प्रारंभिक काल में उच्च श्रेणी की स्त्रियों के सम्बन्ध में हमने इतिहास में केवल यही नहीं पढ़ा है कि उन्होंने प्रतिष्ठा प्राप्त की है और राज्य के कार्यों को अपने प्रभावों से प्रभावित किया है, अपितु हमने यह भी पढ़ा है कि अरब महिलाएँ रणस्थल में जाती थीं, सेना का संचालन करती थीं, कविता करती थीं और साहित्यिक क्षेत्र में पुरुषों से प्रतियोगिता करती थीं, तथा अपनी कुशाग्र बुद्धि एवं गीत-वाद्य-प्रतिभा द्वारा समाज को स्फूर्ति और चेतना प्रदान करती थीं।

पतन को प्राप्त काल में, रखेलियाँ (लौंडियाँ)* रखने की प्रथा अत्यधिक प्रचलित हो गयी थी, चारित्रिक पतन हो गया था और लोग ऐश्वर्य-भोग-विलास में लिप्त हो गये थे। इसके फलस्वरूप, स्त्रियों की दशा उस दयनीय स्थिति को पहुँच गई जिसका चित्रण हम 'अरेबियन नाइट्स' में पाते हैं। इन कहानियों में स्त्रियों को मक्कारी और फरेब की प्रतिमूर्ति और गंदी भावनाओं तथा अवाञ्छनीय विचारों की खान दिखाया गया है।

लगभग समस्त इस्लामी जगत में विवाह को एक निश्चित कर्त्तव्य माना गया है और इसकी उपेक्षा करने वाले को बहुत ही बुरा कहा गया है। सन्तान, विशेष रूप से पुत्रों को ईश्वर का वरदान माना गया है। पत्नी का सर्वप्रथम

---

* लौंडियों से तात्पर्य उन स्त्रियों से है जो या तो खरीदी जाती थीं अथवा युद्ध-स्थल से बन्दी बना कर लायी जाती थीं। इन पर इनके स्वामियों का पूर्ण अधिकार होता था।—अनुवादक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर्त्तव्य अपने पति की सेवा, बच्चों का लालन-पालन और गृहकार्य की व्यवस्था करना समझा गया है। इससे जो समय शेष बचता उसको कातने एवं बुनने में व्यतीत करने का निर्देश है।

उस समय के कवियों की शृंगार रस की कविताओं से यह प्रकट होता है कि स्त्रियों के सौन्दर्य के सम्बन्ध में अरबों के पुराने आदर्श में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ था। उनकी दृष्टि में नारी का डीलडौल पौधों के मध्य में बाँस की तरह दर्शनीय, उसका मुख पूर्णचन्द्र की भाँति गोल, उसके केश काली रात्रि से अधिक काले, गाल श्वेत वर्ण और गुलाबी जिस पर श्वेत पाषाण-पात्र पर एक अम्बर बिन्दु के सदृश तिल विराजमान हो, काली पुतलियों वाले तथा जंगली मृगों के समान विशाल नेत्र, अलसायी पलकें, मूँगे पर जड़े मोतियों के समान दाँतों से युक्त छोटा मुँह, अनार के सदृश कुच और भारी नितम्ब, तथा उसकी अंगुलियाँ सुडौल नुकीली और नाखून मेहँदी से रचे हुए हों।

उस युग की स्त्रियाँ एक सुन्दर शिरो-वस्त्र धारण करती थीं जो एक गुम्बदाकार टोपी होती थी। इसके निचले भाग में एक पट्टी होती थी जिसको रत्नों से सुसज्जित किया जाता था। स्त्रियों के आभूषणों में दूसरी वस्तुओं के अतिरिक्त पायज़ेब और कंगन भी होते थे। पुरुषों की वेष-भूषा में परिवर्तन होता रहा लेकिन फिर भी उसमें कोई विशेष उल्लेखनीय हेर-फेर नहीं हुआ और अभी तक प्राचीन ढंग की पोशाक लेबनान तथा सीरिया के बड़े-बूढ़े पहने हुए दृष्टिगोचर होते हैं। पुरुष साधारण रूप से सिरों पर ऊँची नुकीली काली टोपी लगाते थे, जो फेल्ट अथवा ऊन की बनी हुई होती थी। वह ईरानी ढंग के पायजामे, कमीज, एबा, सदरी, और ऊपर से जुब्बा, का प्रयोग करते थे। जुब्बा अरबी शब्द है जो स्पेन में दसवीं शती के शब्दकोष में प्रथम बार प्रकट हुआ। यह स्पेन की भाषा से होकर लैटिन-कुल की विभिन्न भाषाओं में व्यवहृत हुआ और अंग्रेजी तथा अन्य जर्मनी, एवं स्लैवोनिक भाषाओं में प्रयुक्त होने लगा। अंग्रेजी भाषा में इस शब्द ने 'गिबट' (Gibbet) शब्द के रूप में अपनी एक मजेदार यादगार छोड़ी है जिसका अर्थ फाँसी है।

घर के फर्नीचर में प्रमुख वस्तु एक सोफा होता था जो कमरे के तीन ओर आरास्ता रहता था। इसे दीवान कहते थे। प्रारम्भिक राजवंशों के समय में कुर्सियों के सदृश ऊँची बैठकों की प्रथा चल पड़ी थी लेकिन साधारणतया छोटी-छोटी गद्दीदार चौकोर चटाइयों (अंग्रेजी में 'मैट्रेस' शब्द जिसका अर्थ चटाई है, अरबी शब्द 'मतरा' से निकला हुआ है) का प्रयोग आमतौर पर होता था। इनको भूमि पर बिछाकर लोग आराम से पाल्थी मार कर बैठते थे। हाथ के बुने हुए कालीन भूमि पर बिछाये जाते थे। पीतल की बड़ी गोल ट्रे में भोजन परोसा जाता था और दीवान या फर्श पर बिछे हुए गद्दों के सामने एक नीची मेज पर लगाया जाता था। सम्पन्न परिवार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में यह ट्रे चाँदी की और मेज़ लकड़ी की होती थी। मेज पर आबनूस, सीप अथवा कछुवे की खोल की पच्चीकारी होती थी। यह मेज़ें, ऐसी ही आज भी दमिश्क में बनती हैं। जो लोग किसी समय बिच्छू, टिड्डी और नेवले का शौक से आहार किया करते थे, चावल को विषैला भोजन समझते थे, और चपटी रोटियों पर लिखा करते थे, वे लोग अब सभ्य जगत के स्वादिष्ट व्यंजनों से भलीभाँति परिचित हो गये थे। ईरान के दो-प्याजे (एक प्रकार से तैयार किया हुआ मांस) और बढ़िया हलुवे अब उनको अति स्वादिष्ट जान पड़ने लगे थे। अब इनके चूज़े (जो इनके भोजन के लिए होते थे) भी, अखरोट तथा बादाम खाते और दूध पीते थे। गर्मी के दिनों में इनके घर बर्फ से शीतल किये जाते थे और अमादक द्रव्यों के शरबत जिनमें शक्कर की मिठास तथा बनफ्शा, केला, गुलाब और शहतूत के अर्कों की सुवास होती थी, पान किये जाते थे। पन्द्रहवीं शती तक 'काफी' का प्रचार नहीं हुआ था और नई दुनिया की खोज से पूर्व तम्बाकू का कोई नाम भी नहीं जानता था। नवीं से दसवीं शती के एक लेखक ने अपनी एक पुस्तक में उस समय के एक सुसंस्कृत भद्र पुरुष की भावनाओं एवं आचरण का एक सुन्दर चित्र हमारी जानकारी के लिये खींचा है। उसका यह कथन है कि वह व्यक्ति व्यवहार में अति विनम्र, पुरुषोचित प्रतिष्ठा वाला और शीलवान होता है। वह हँसी और मज़ाक से दूर रहता है, उपयुक्त संगत में ही उठता-बैठता है। उसकी सच्चाई का स्तर बहुत ही ऊँचा है, अपने वचनों का पालन करने का विशेष रूप से ध्यान रखता है। किसी का भेद नहीं खोलता है। उसके वस्त्र अत्यंत साफ-सुथरे, फटे-मैले का नाम नहीं। भोजन के समय, छोटे-छोटे ग्रास उठाता है, और वाजबी ही हँसता-बोलता है। वह धीरे-धीरे चबा-चबा कर भोजन करता है, उंगलियों को नहीं चाटता। लहसुन और प्याज के प्रयोग से बचता है। शृंगार-कक्षों स्नानागारों, जन-सभाओं और सड़कों पर दाँतों को खोदना अशिष्टता समझता है।

समाज में तथा एकान्त में मादक पेय का उपयोग प्रायः होने लगा था। 'आगानी' और 'अरेबियन नाइट्स' में वर्णित शराब की महफ़िलों की अगणित कथाओं और शराब की प्रशंसा में लिखे गये बहुत से गीत और कसीदों पर निगाह डालने पर, इस्लाम के प्रमुख अंग मद्य-निषेध का प्रभाव उससे अधिक नहीं प्रतीत होता जितना कि अमेरिका (यू० एस० ए०) के विधान के अठारहवें संशोधन से प्रभाव पड़ा। खलीफा, वज़ीर, शाहजादे और काज़ी तक इस शरई मुमानियत की उपेक्षा करते थे। खम्र (शराब जो खजूर से तैयार की जाती थी), उनका प्रिय पेय था।

दावतों और राग-रंग की महफ़िलों में "अंगूर की लता की पुत्री" (शराब) और गाने बजाने को विशेष स्थान प्राप्त था। पीने-पिलाने की इन महफिलों में मेजबान और मेहमान दोनो अपनी दाढ़ियों को कस्तूरी और गुलाबजल से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुवासित करते और विशेष प्रकार के भड़कीले वस्त्र धारण किया करते थे। अम्बर अथवा मुसब्बर की लकड़ी को धूपदान में जला कर कमरे को सुगंध-युक्त किया जाता था। गायिकाएँ भी इन महफिलों में भाग लेती थीं, और जैसा कि अनेक कहानियों से विदित है, ये अधिकतर चरित्रहीन दासियाँ हुआ करती थीं। ऐसी औरतें उस समय के युवकों की नैतिकता के लिए एक जबर्दस्त खतरा थीं। ईसाइयों के मठों में जन-सामान्य को शराब सुलभ थी। बड़े-बड़े मद्य-पान-गृहों का प्रबन्ध विशेष रूप से यहूदियों के हाथ में था। ईसाई और यहूदी दोनो उस समय मदिरा का तस्कर व्यापार करते थे।

"स्वच्छता ईमान का अंग है", यह हजरत मुहम्मद साहब की एक उक्ति है, और आज भी यह बात समस्त इस्लामी देशों में प्रत्येक जिह्वा पर है। हज़रत मुहम्मद साहब से पूर्व अरब में 'हम्माम' नहीं थे। कहा जाता है कि आप भी हम्मामों को पसन्द नहीं करते थे। आप ने लोगों को हम्मामों में केवल पवित्र होने के लिए एक वस्त्र धारण कर के जाने की अनुमति दी थी। जिस समय का हम यहाँ पर अध्ययन कर रहे हैं, उस समय सार्वजनिक स्नानागार लोकप्रिय हो चुके थे। उनका प्रचलन केवल वजू आदि धार्मिक कृत्यों और उनके शुभ प्रतिफल के लिए ही नहीं था, अपितु ये स्नानागार मनोरंजन और ऐश के अड्डे हो गये थे। स्त्रियाँ भी अपने लिये निश्चित दिनों में इनका उपयोग कर सकती थीं। दसवीं शती के आरम्भ में बगदाद में लगभग २७ हजार स्नानागार थे और आगे चल कर इनकी संख्या ६० हजार तक हो गयी थी। लेकिन अरबी स्रोतों के आधार पर प्राप्त अनेक अन्य संख्याओं की भाँति यह संख्या भी अत्यंत अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होती है। एक मुसलमान स्पेनी-यात्री ने सन् १३२७ ई० में बगदाद की यात्रा की थी। उस समय इस शहर के पश्चिमी भाग में १३ मुहल्ले थे और प्रत्येक मुहल्ले में उसको दो-तीन ऐसे उच्च कोटि के स्नानागार मिले, जिनमें शीतल और गर्म जल के फौव्वारे चलते थे।

आज की भाँति उस समय के स्नानागारों में भी कई कमरे हुआ करते थे जिनमें संग मूसा का फर्श और भीतरी दीवारों पर, संगमरमर जड़ा हुआ होता था, जो एक लम्बे-चौड़े मध्यवर्त्ती कमरे के चारो ओर होती थीं। इस अन्तर्कक्ष के ऊपर एक गुम्बद बना होता था जिस में प्रकाश आने के लिए गोल और चमकीले रोशनदान होते थे।

कमरे के बीचोबीच एक हौज में गर्म जल के एक फौव्वारे की भाप से पूरा कमरा गरम रहा करता था। बाहरी कमरों में, विश्राम, मद्यपान और भोजन आदि की व्यवस्था रहती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समस्त इतिहास में, ललित-कलाओं की भाँति खेल-कूद में भी सामी सभ्यता की अपेक्षा इण्डो-योरोपीय सभ्यता की प्रमुखता रही है। अरब के बद्दू को खेल-कूद पसन्द नहीं है। दिन की भयानक रेगिस्तानी गरमी से बचने की अभिलाषा और उसकी भावुक मनोदशा, उसको खेलकूद में शरीर को व्यर्थ थकाने से विमुख रखती है।

मैदानी खेलों की सूची में बाण चलाना, चौगान (पोलो), एक प्रकार का हाकी-खेल, तलवार और भाला चलाना, घुड़सवारी तथा सब से बढ़कर आखेट का उल्लेख मिलता है। उस युग के लेखकों का यह कथन है कि उस समय किसी व्यक्ति को किसी का अनुग्रह प्राप्त करने या साहचर्य पाने के लिये, धनुर्विद्या, आखेट, गेंद फेंकने और शतरंज खेलने में इतना दक्ष होना आवश्यक था कि अपने शाही प्रभु के मुकाबले में निर्भय होकर आमने-सामने आसके। खलीफाओं में अल मोतस्सिम (Al-Mutassim) विशेष रूप से पोलो का बड़ा शौकीन था। उसके एक तुर्की सेनापति ने एक बार उसकी प्रतियोगिता में पोलो खेलने से यह कहकर इनकार कर दिया था कि मैं मुसलमानों के खलीफा के विरुद्ध खेल में भी खड़ा होना नहीं पसन्द करता। एक प्रकार के गेंद के खेल का बड़ा ही रुचिकर वर्णन मिलता है, जिसके खेलने में एक चौड़ा तख्ता प्रयोग में लाया जाता था। क्या यह टेनिस का प्रारम्भिक रूप तो न था? साधारणतः यह समझा जाता है कि टेनिस शब्द फ्रान्सीसी क्रिया 'टेनिज़' से निकला है जिसका अर्थ 'टेक हीड' अर्थात् 'सावधान हो जाओ' होता है। सम्भवतः यह शब्द एक मिस्र के किसी नगर के अरबी नाम 'तिन्नीस' से लिया गया है। यह नगर नील नदी के दोआबा में स्थित था और मध्ययुग में 'लिनेन' के व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध था। हो सकता है कि यह वस्त्र टेनिस के गेंदों के बनाने के प्रयोग में लाया जाता रहा हो।

अरबी भाषा में आखेट करने, जाल डालने, और 'बाज' के द्वारा आखेट खेलने पर आरंभ में जितनी पुस्तकों की रचना हुई है, उनसे यह भलीभाँति ज्ञात हो जाता है कि वे लोग इस तरह के खेलों से कितनी रुचि रखते थे। इन खेलों के सम्बन्ध में जो शब्द हमें अरबी भाषा में मिलते हैं, उनसे ज्ञात होता है कि अरबों ने शाहीनबाजी (Hawking) और बाजबाजी (Falconry) ईरान से सीखी थी। यह खेल खिलाफ़त के अन्तिम काल और धार्मिक युद्धकाल (Crusades) में अत्यधिक प्रचलित हुए। ईरान, ईराक़ और सीरिया में आज भी शाहीन और बाज़ के जरिये शिकार खेला जाता है, और इसका ढंग बिलकुल वही है जैसा कि अरेबियन-नाइट्स में वर्णित है। शिकार को पकड़ लेने के पश्चात् मुसलमान शिकारी सर्व-प्रथम शिकार को ज़बह करता है। यदि शिकार ज़बह करने के पूर्व मर जाता है तो उसको खाना इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुसार हराम है।

सामाजिक सूची में, सर्वोपरि खलीफा, उसका वंश, फिर सरकारी कर्मचारी और इन सबके अनुयायी गिने जाते थे। इस अन्तिम वर्ग 'अनुयायियों' में हम सिपाहियों,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अंगरक्षकों और उनके प्रिय मित्रों तथा मुँहलगे साथियों के साथ-साथ उनके सेवकों को भी सम्मिलित कर सकते हैं। ये सेवक प्रायः ग़ुलाम ही हुआ करते थे, जो गैरमुस्लिमों में से भर्ती किये जाते थे। ये या तो जबरदस्ती पकड़ लिये जाते थे या युद्ध-बन्दी होते थे; अथवा शान्ति के समय क्रय कर लिये जाते थे। इनमें कुछ हब्शी, कुछ तुर्क और कुछ गौरवर्ण के होते थे। गौरवर्ण वाले दास विशेष रूप से यूनानी, सलाकी (Slevs), आर्मीनी और बर्बर हुआ करते थे। इन में कुछ हिजड़े होते थे जो हरम (अन्तःपुर) की सेवाओं के लिए नियुक्त किये जाते थे। कुछ दासों को 'ग़िलमान' के नाम से पुकारा जाता था जिनमें हिजड़े भी होते थे। इन पर इनके स्वामियों की विशेष कृपादृष्टि रहती थी। ये मूल्यवान और आकर्षक वस्त्र धारण करते तथा अपने शरीर को अक्सर स्त्रियों की भाँति सँवारते और सुगन्धित द्रव्यों से युक्त रहते थे। ग़िलमाओं का वर्णन हमें हारून रशीद के काल में मिलता है; लेकिन वस्तुतः यह खलीफा अल-अमीन था जिसके द्वारा ईरानियों के अनुकरण पर, अरबी जगत में गिलमाओं का प्रचार, अप्राकृतिक व्यभिचार के हेतु हुआ। एक काजी से सम्बन्धित कागजों से पता चलता है कि वह ऐसे ४०० नवयुवक रखता था। उस काल में कविगण, बिना दाढ़ी-मूँछ वाले इन ग़िलमाओं को लक्ष्यकर अश्लील शृंगारी कविताओं को सार्वजनिक अवसरों पर भी निस्संकोच पढ़ने और अपनी दूषित वासना का परिचय देने में नहीं हिचकते थे।

दासों में जो कुमारियाँ होती थीं उनसे नाचने, गाने का काम लिया जाता था और रखैल वेश्याओं की भाँति वे रखी जाती थीं। इनमें से कोई-कोई अपने प्रभु खलीफाओं पर अत्यधिक प्रभाव रखती थीं। हारून-रशीद की दासी जातुलखाल—तिलवाली (She of the Mole) एक ऐसी ही दासी थी। हारून-रशीद ने इसको ७०, ००० दरहम में खरीदा था और डाहवश उसको अपने एक दास को दे दिया था। किसी समय वह एक अन्य गानेवाली लड़की पर लट्टू होगया था। हारून-रशीद की मलिका जुबेदा ने उसका ध्यान उसकी ओर से हटाने के लिए उसकी सेवा में दस दासियाँ लगा दी थीं ताकि वह उस गणिका को भूल जाय। इन दासियों में से दो को आगे चलकर खलीफाओं की मा होने का सौभाग्य हुआ। अरेबियन-नाइट्स में एक रूपवती एवं गुणवती दास-पुत्री तवद्दुद की एक प्राचीन कहानी का उल्लेख है। अलंकार, व्याकरण, कविता, इतिहास और कुरान की तो बात ही क्या, वह सुन्दरी, खलीफा के दरबार में उसके सामन्तों के सामने चिकित्सा, न्याय, दर्शन, संगीत, खगोलशास्त्र, और गणित में परीक्षा ली जाने पर, इन सभी में दक्ष निकली। खलीफा हारून ने इसे एक लाख दीनार में खरीदना चाहा था। इस कहानी से यह प्रकट होता है कि इनमें से कुछ दासियाँ कितनी अधिक सभ्य और संस्कृत होती थीं। खलीफा अल अमीन की यह देन थी कि उसने सेविकाओं का एक दल तैयार किया था। ये दासियाँ, लड़कों की भाँति जुल्फें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कटातीं, मरदाना लिबास पहनतीं और रेशमी पगड़ियाँ बाँधती थीं। यह नया चलन शीघ्र ही समाज के ऊँच-नीच सभी वर्गों में फैल गया। एक प्रत्यक्षदर्शी का कथन है कि वह एक रविवार को खलीफा अलमामून के दरबार में उपस्थित हुआ। उसने खलीफा के सामने बीस यूनानी कुमारियों को देखा जो बनी-ठनी और जेवरों से लदी हुई थीं। वह गले में सोने का क्रास लटकाये और हाथों में खजूर, ताड़पत्र तथा जैतून की टहनियाँ लिये नृत्य कर रही थीं। इन नर्तकियों को खलीफा ने तीन हजार दीनार देकर इस प्रदर्शन को शानदार ढंग से समाप्त किया।

एक विवरण के आधार पर यह कहा जाता है कि खलीफा अल मुतवक्किल के महल में ४००० रखैलें थीं और हमसे कहा जाता है कि हम विश्वास करें कि वह सब उसके सहवास में रहती थीं। सूबे के गवर्नरों और लश्कर के सरदारों का यह कायदा था कि वे खलीफा के दरबार में नजराने भेजा करें जिनमें लड़कियाँ भी होती थीं, जो प्रजा से प्राप्त होती अथवा बलपूर्वक ले ली जातीं थीं और खलीफा तथा वजीर की सेवा में प्रस्तुत की जाती थीं। यदि कोई ऐसा न करता तो उसके इस कार्य को विद्रोह का लक्षण समझा जाता था।

जनता में दो वर्ग के लोग थे। एक तो श्रेष्ठ शासकीय तथा शिक्षित वर्ग था, जिसमें विद्वान, कलाकार, व्यापारी, तथा दस्तकार और नौकर पेशा लोग थे। और दूसरे निम्न श्रेणी के लोगों में, जिनका राष्ट्र में बहुमत था, किसान, गड़रिये, तथा देहाती, वहाँ के मूल निवासी थे जिनको जिम्मियों का अधिकार प्राप्त था।

साम्राज्य के विस्तार और उसकी सभ्यता के उच्च स्तर ने विवश किया कि वे अपने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को अत्यधिक विस्तृत करें। आरंभ में व्यापार के क्षेत्र में ईसाइयों, यहूदियों और जुरदास्तियों (Zoroastrians) का बोलबाला था। लेकिन आगे चलकर मुसलमानों और अरबों ने उनका स्थान ले लिया। ये लोग व्यापार को उतना बुरा नहीं मानते थे जितना खेती को। अब बगदाद, बसरा, सीराफ़ (Siraf) काहिरा और सिकन्दरिया ने शीघ्र ही व्यापारिक दृष्टि से उन्नति कर ली और ये नगर जल और स्थल-व्यापार के बड़े-बड़े केन्द्र बन गये।

पूर्व की ओर मुसलमान व्यापारी चीन तक पहुँच गये थे। यहाँ वे रेशम का व्यापार करते थे। चीन ने सर्वप्रथम पश्चिम को जो शानदार उपहार दिये हैं, उनमें से एक रेशम भी है। फलतः इसी आधार पर जो मार्ग समरकन्द और चीनी तुर्किस्तान से होता हुआ चीन को जाता है, वह "महान रेशम-मार्ग" के नाम से विख्यात हुआ। आज कल सभ्य जगत का व्यक्ति, आबाद दुनिया के किसी दूसरे भाग की अपेक्षा, इस मार्ग पर बहुत ही कम आता-जाता है। व्यापारिक सामान बहुधा घोड़ों द्वारा भेजा जाता था। ये घोड़े मार्ग में कायम डाक-चौकियों पर बदल दिये जाया करते थे; और मुश्किल से ही कोई कारवाँ इस मार्ग को पूरा तय कर पाता था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यापारी अपने साथ इस्लाम को कुछ द्वीपों में ले गये। इन्हीं द्वीपों ने सन् १९४९ ई० में, 'इण्डोनेशिया के गणतंत्र' की स्थापना की है।

पश्चिम की ओर मुसलमान व्यापारी मोरक्को और स्पेन तक पहुँच चुके थे। वर्तमान स्वेज नहर की नींव डालने वाले डी० लेसेप्स से १००० वर्ष पूर्व, एक अरब खलीफा हारून के मस्तिष्क में स्वेज के स्थलडमरूमध्य में एक नहर खुदवाने का विचार उत्पन्न हुआ था। फिर भी भूमध्यसागर में अरबों का व्यापार कभी भी अधिक प्रमुखता न प्राप्त कर सका। यद्यपि उत्तर की ओर, दसवीं शती में, वालगा के क्षेत्र के साथ व्यापार स्थल मार्ग द्वारा तेजी से होता था, फिर भी कालासागर अरबों के सामुद्रिक व्यापार में सहायक न सिद्ध हो सका। कैस्पियन सागर ईरान के व्यापारिक केन्द्रों और समरकन्द, बुखारा जैसे समुन्नत नगरों तथा उनके आस-पास के क्षेत्रों से अत्यधिक निकट स्थित था। इस कारण यह व्यापारिक आवागमन का एक महान केन्द्र बन गया। मुसलमान व्यापारी अपने साथ खजूर, शक्कर, रुई, ऊनी कपड़े, लोहे के औजार और काँच का सामान ले जाया करते थे। और दूसरी वस्तुओं के साथ, वे अपने मुल्क में गरम मसाले, कपूर, सुदूर एशिया से रेशम, तथा अफ्रीका से हाथीदाँत, आबनूस एवं हब्शी गुलाम लाया करते थे।

बगदाद के केवल एक जौहरी इब्नल जस्सास की ही कहानी से उस समय के कुबेर रोथशील्डों (Rothschilds) और राकफेलरों (Rockefellers) की संग्रहीत अपार सम्पत्ति का अनुमान किया जा सकता है। इस जौहरी के पास इतना धन था कि एक बार खलीफा ने एक करोड़ साठ लाख दीनार की उसकी जायदाद जब्त कर ली, किन्तु फिर भी उसके धनाढ्य होने में कोई अन्तर नहीं आया और वह प्रसिद्ध जौहरी-परिवारों में सबसे सम्पन्न समझा जाता रहा। बसरे के कुछ व्यापारियों, जिनके जहाज विश्व के दूरस्थ भागों में अपनी व्यापारिक सामग्री ले जाते थे, की वार्षिक आय दस लाख दरहम से भी अधिक थी। बसरा और बगदाद के अनपढ़ चक्कीवाले भी असहायों को दान के रूप में १०० दीनार प्रतिदिन दे दिया करते थे। सिराफ के सामान्य व्यापारी वंश का वार्षिक व्यय दस हजार दीनार से भी अधिक था। उनमें से कुछ तीस हजार दीनार से भी अधिक व्यय करते थे। बहुत से समुद्री व्यापारियों में प्रत्येक की आय चालीस लाख तक होती थी। एक दीनार २·४० डालर के बराबर होता था।

व्यापार का इतना विस्तार कदापि नहीं हो सकता था, यदि उसको गृह-उद्योग और कृषि का आधार और बल न प्राप्त होता। साम्राज्य के विभिन्न भागों में दस्तकारी की बड़ी उन्नति थी। पश्चिमी एशिया में जिन कुटीर-उद्योगों की अधिक उन्नति हुई थी, उनमें कम्बल, कालीन, रेशमी सूती और ऊनी कपड़े, 'सैटिन' ब्रोकेड (किमखाब), सोफे, गद्दों के गिलाफ़, के अतिरिक्त लकड़ी का अन्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सामान, व बरतनों का व्यवसाय भी सम्मिलित था। ईरान और ईराक़ के अधिकांश करघाघरों में उच्च कोटि के कालीन एवं वस्त्र बनाये जाते थे, और उनका उच्च स्तर व्यक्त करने के लिए उन पर भिन्न-भिन्न व्यापारिक चिह्न (मार्का) भी लगाये जाते थे। एक खलीफा की मा ने अपने लिए एक दुशाला तैयार कराया था। उसके तैयार कराने में तेरह करोड़ दरहम व्यय हुए थे। इस पर हर प्रकार की चिड़ियों की आकृतियाँ सोने की बनी हुई थीं, और इन चिड़ियों के नेत्रों में लाल तथा अन्य बहुमूल्य रत्न जड़े हुए थे। बगदाद की एक बस्ती का नाम एक अमवी शाहजादे के नाम पर 'अत्ताब' रखा गया था जो इस मुहल्ले का सब से प्रतिष्ठित निवासि था। इस मुहल्ले में एक विशेष प्रकार का धारीदार कपड़ा बुना जाता था जो सबसे पहले इसी मुहल्ले में बारहवीं शती में तैयार होने के नाते 'अत्ताबी' नाम से विख्यात हुआ। स्पेन के अरबों ने भी इसी नमूने का वस्त्र तैयार किया और यह वस्त्र 'ताबी' के नाम से फ्रान्स, इटली और योरोप के दूसरे भागों में लोकप्रिय हो गया था। यह शब्द, आज भी तैबी (Tabby) के रूप में विद्यमान है। तैबी धारीदार बिल्ली को कहते हैं। कूफ़ा में रेशम पैदा होता था। और यहाँ सिर में बाँधने के लिये रेशमी रूमाल भी बुने जाते थे जो आज भी 'कूफ़िया' के नाम से व्यवहृत होते हैं।

प्राचीन नगर सोसियान में कई कारखाने ऐसे थे, जो 'दमस्क' (एक तरह का कपड़ा जो आरंभ में दमिश्क में तैयार किया गया था) की जरदोजी और रेशम के पर्दों के लिए प्रसिद्ध थे। यहाँ के बुने हुये रेशमी एबाओं तथा ऊँट और बकरों के बालों से बने हुए कपड़ों की दूर-दूर तक प्रसिद्धि थी। शीराज में ऊन की धारीदार एबाओं के अतिरिक्त जालीदार वस्त्र और कीमखाब भी तैयार किये जाते थे। मध्य-कालीन योरोप की स्त्रियाँ अपने नगर की दूकानों में पारसी सिल्क के इस वस्त्र को ताफता के नाम से क्रय किया करती थीं।

इतिहास में, मिस्र के बाद प्रचीनतम् मानी जाने वाली, फोनेशिया के काँच-उद्योग के पुनर्जीवन-स्वरूप, सीडन (Sidon), टायर तथा दूसरे लेबनानी और शामी (सीरीयन) नगरों का काँच अपनी स्वच्छता एवं बारीकी की दृष्टि से आदर्श माना जाता था। धर्मयुद्धों (Crusades) के फलस्वरूप शामी आइने योरोप के प्रमुख गिरजाघरों के भद्दे आइनों को हटाकर, शोभित हुये। सीरियायी शिल्प के काँच और धातु के गुलदानों की, उपयोग एवं उपभोग की दृष्टि से अत्यधिक मांग थी।

कागज का व्यवसाय विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह व्यवसाय आठवीं शती के मध्य में चीन से समरक़न्द में आया था। समरक़न्द, जो सन् ७०४ ई० में मुसलमानों द्वारा जीत लिया गया था, का कागज अद्वितीय माना जाता था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आठवीं शती के समाप्त होने के पूर्व बगदाद के प्रथम कागज-मिल की स्थापना हुई। धीरे-धीरे दूसरे देशों में भी कागज बनाने के कारखाने स्थापित होते गये। मिस्र में ९०० ई० में या इससे कुछ पूर्व, मोरक्को में लगभग ११०० ई० में तथा स्पेन में ११५० ई० के आस-पास कागज के कारखाने स्थापित हुए। इनमें विभिन्न प्रकार के सफेद और रंगीन कागज तैयार किये जाते थे। इस्लामी स्पेन और इटली से बारहवीं और तेरहवीं शती में, कागज बनाने का उद्योग ईसाई-योरोप में पहुँचा, जहाँ, जैसा कि हम आगे पढ़ेंगे, सन् १४५०-५५ में टाइप और मुद्रणकला के आविष्कार ने कागज-उद्योग से मिलकर उस व्यापक शिक्षा को सम्भव बना दिया, जिससे समस्त योरोप और अमेरिका आज लाभ उठा रहे हैं।

आरंभ के अब्बासी खलीफाओं की संरक्षकता में कृषि की बड़ी ही प्रगति हुई, क्योंकि कृषि के लिए अत्यन्त उपयुक्त, बाढ़ की मिट्टी वाले क्षेत्र में उन अब्बासियों की राजधानी स्थित थी, और खलीफा यह अनुभव करते थे कि खेती राज्य की आमदनी का मुख्य साधन है। एक कारण यह भी था कि कृषि-कार्य लगभग पूर्णरूप से देशी लोगों के ही हाथ में था और किसी सीमा तक नई हुकूमत में इन लोगों की दशा अपेक्षाकृत सुधर गयी थी। साम्राज्य के विभिन्न भागों में जो उजड़े हुए फार्म और नष्ट गाँव पड़े हुए थे, उनको धीरे-धीरे फिर से बसाया गया। मिस्र को छोड़ कर, दजला और फरात की घाटियों का निचला भाग सारे साम्राज्य में सर्वाधिक उपजाऊ क्षेत्र था। सदा से दर्शनीय, अदन के उद्यान की ओर केन्द्रीय सरकार का विशेष ध्यान रहा। फरात नदी से जो नहरें निकाली गयी थीं उनका एक जाल सा बिछ गया था। अरब के भूगोलवेत्ता इन खलीफाओं के नहरें खुदवाने या निकलवाने का जो वर्णन करते हैं उसके सम्बन्ध में वास्तविकता यह है कि इनमें अधिकांश नहरें वही थीं जो बाबुल साम्राज्य के समय में खुदवायी गयी थीं और अब उनका जीर्णोद्धार किया जारहा था। वैसेही ईराक और मिस्र में नहरों की प्राचीन व्यवस्था को बदस्तूर मात्र रखा गया था। यहाँ तक कि प्रथम विश्व-युद्ध के पूर्व भी, जब उस्मानिया सरकार ने सर विलियम विल काक्स (Sir William Will Cocks) को ईराक में सिंचाई की समस्या का अध्ययन करने के लिए नियुक्त किया था, तो उसने अपनी रिपोर्ट में नयी नहरें खुदवाने के बजाय पानी के इन प्राचीन मार्गों को साफ कराने पर ही अधिक बल दिया था, जबकि अब्बासीकाल से अब तक इस बाढ़वाले क्षेत्र की स्थिति में बड़ा परिवर्तन हो गया है और दजला और फरात ने काफ़ी हद तक अपना मार्ग बदल दिया है।

पश्चिमी एशिया में आज कल होने वाली अधिकांश तरकारियों और फलों के वृक्षों से, उस समय के लोग भली भाँति परिचित थे। वे लोग आम, आलू, टमाटर तथा इस प्रकार के दूसरे पौधों से परिचित न थे जो बाद में, नयी दुनिया और दूरस्थ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

योरोपीय उपनिवेशों से लाये गये थे। नींबू और चकोतरे का सजातीय—नारंगी का वृक्ष, मूलतः उत्तरी भारत और मलाया की उपज है। यहीं से ये पौधे पश्चिमी एशिया और भूमध्यसागर के निकटवर्ती क्षेत्रों में फैले और आखिर में अरबों द्वारा स्पेन में पहुँच कर योरोप में फैल गये। दक्षिण-पश्चिमी ईरान के गन्ने के खेत और चीनी के कारखानों के समान ही उस समय तक सीरिया के तट पर भी इनकी स्थापना हो चुकी थी। वहीं से ईसाई क्रुसेडर्स द्वारा गन्ने और चीनी का योरोप में प्रसार हुआ। इस प्रकार यह मधुर वस्तु, जिसकी जन्मभूमि शायद बंगाल है और जो उस समय से अब तक सभ्य लोगों के दैनिक भोजन का अनिवार्य अंग है, पूर्व से पश्चिम में फैली।

साम्राज्य की अधिकांश जनसंख्या खेतिहर थी जो साम्राज्य की आय का प्रमुख साधन थे। यही लोग देश के मूल निवासी थे, जो अब घटकर जिम्मियों की स्थिति में थे, जिनके साथ धार्मिक सहिष्णुता का समझौता किया गया था। अरब लोग खेती को अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझते थे। आरम्भ में जिम्मियों के वर्ग में 'किताब वाले' अर्थात् ईसाई व यहूदी, और साबी भी सम्मिलित थे। पर आगे चल कर इस वर्ग में दूसरी जातियों को मिलाकर जिम्मियों का क्षेत्र विस्तृत कर दिया गया। वे जिम्मी जो देहातों और फार्मों पर रहते थे, अपनी प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा पर दृढ़ थे तथा अपनी जातीय भाषा को भी कायम रखते आ रहे थे। उनसे की गयी प्रतिज्ञाओं का सामान्यतः भली प्रकार पालन किया जाता था। पर कभी-कभी ऐसा समय भी आता था जबकि उनको धर्मोन्मादवश उत्पीड़ित भी किया जाता था।

नगरों में ईसाई और यहूदी महत्त्वपूर्ण लिपिकों और आर्थिक तथा अन्य पेशे वाले पदों पर नियुक्त होते थे। इस वजह से मुसलमानों में उन लोगों के विरुद्ध ईर्ष्या भी उत्पन्न हो गयी थी और वह सरकारी अध्यादेशों में भी स्पष्ट झलकने लगी थी। लेकिन इस प्रकार के भेद-भाव उत्पन्न करने वाले अधिनियम कागज पर ही बने रहे और उनका लगातार पालन नहीं हुआ। अमवी वंश के पाक खलीफा उमर द्वितीय ने यह आदेश जारी किया था कि ईसाई और यहूदी विशेष प्रकार की पोशाक पहना करें। उन्होंने इन लोगों के लिये सरकारी नौकरियों पर रोक लगा दी थी। हारूँ रशीद वस्तुतः प्रथम खलीफा है जिसने कुछ पुराने नियमों को फिर से लागू करवाया। खलीफा अल मुतवक्किल ने सन् ८५० ई० और ८५४ ई० में यह घोषणा की थी कि ईसाई और यहूदी अपने घरों पर भूतों की लकड़ी की मूर्तियाँ लटकाये रहा करें और अपनी कब्रों को जमीन के बराबर कर दें, अपनी एबा शहद के रंग अर्थात् पीले रंग की बनवायें और अपने दासों के कपड़ों में पीले रंग के दो पेवन्द आगे तथा पीछे लगवायें। केवल खच्चरों एवं गदहों पर बैठें, तथा इन पर लकड़ी की काठी, जिसके पिछले भाग में दो गोले उभरे हुए हों, का प्रयोग करें। इस भेद-भाव उत्पन्न करने वाली पोशाक के ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कारण जिम्मियों का नाम 'धब्बे वाले' (Spotted) पड़ गया था। जिम्मियों की एक बहुत बड़ी कठिनाई, उस समय के क़ाज़ियों के इस निर्णय के कारण उत्पन्न हो गयी थी, कि मुसलमान के विरुद्ध किसी ईसाई या यहूदी की गवाही इसलिये मान्य नहीं हो सकती क्योंकि कुरान के मत से इन लोगों ने अपने धार्मिक ग्रन्थ (बाइबिल) में एक बार काट-छाँट की है, और इसलिये इन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। पर इन पाबन्दियों के होते हुए भी, ईसाई लोग खलीफाओं की संरक्षकता में उनकी सहिष्णुता का बहुत कुछ लाभ उठा रहे थे, यहाँ तक कि नवीं शती के उत्तरार्ध में कुछ ईसाई वजारत के उच्च पद पर नियुक्त पाये जाते हैं। ऐसे ईसाई उच्चाधिकारियों का समुचित सम्मान किया जाता था, क्योंकि ऐसा उल्लेख मिलता है जबकि कुछ मुसलमानों ने ईसाइयों के हाथ चूमने से सामान्यतः इन्कार कर दिया। खलीफाओं की अधीनता में भी ईसाई धर्म में यह एक अद्भुत विशेषता रही कि, उसने अपने में इतनी शक्ति कायम रखी कि धर्म-प्रचार के हेतु अपने प्रचारकों को भारत तथा चीन तक भेजता रहा।

यहूदी, जिम्मी होते हुये भी ईसाइयों की अपेक्षा और अधिक अच्छी स्थिति में थे, खास तौर पर जबकि उनके प्रति कुरान में अनेक विरोधी आयतें मिलती हैं। कई खलीफाओं के शासनकाल में एक से अधिक यहूदी रियासत के दायित्वपूर्ण पदों पर रहे पाये जाते हैं। बगदाद में भी यहूदियों की एक अच्छी खासी बस्ती थी जो नगर के पतन के समय तक बनी रही। टूडिला का बेंजमिन, जो एक रब्बी * था, सन् ११७० ई० में इस बस्ती में आया था। उस समय यहाँ दस रब्बानी स्कूल और तेईस यहूदियों के धर्ममठ थे। सबसे बड़ा मठ रंगबिरंगे संगमरमर से सुसज्जित और सोने-चाँदी से भरपूर अलंकृत था। यहाँ के सब से प्रमुख रब्बी का जैसा आदर किया जाता था, बेंजमिन ने उसका वर्णन बड़े ही ओजपूर्ण ढंग से किया है। उसको, पैगम्बर हजरत दाऊद की सन्तान समझा जाता था। बगदाद के खलीफा के प्रति पूर्ण निष्ठा के रखने के साथही वह समस्त यहूदियों का प्रधान माना जाता था। खलीफा के दरबार में जाते समय, उसके बदन पर जरदोजी के रेशमी वस्त्र, जवाहिरात से जगमगाती श्वेत पगड़ी और अश्वारोही अंगरक्षकों का एक दल साथ चलता था। उसके आगे-आगे एक व्यक्ति घोषणा करता हुआ चलता था कि, "हमारे स्वामी इब्ने दाऊद के लिये मार्ग खाली करो।"

खिलाफतकाल की जनता के जीवन और उनके पारस्परिक सम्बन्ध का यह एक चित्र है। अब हम अरबों की विजय की तीसरी मंजिल पर पहुँच गये हैं। प्रथम मंजिल जैसा कि हम देख चुके हैं, सैनिक एवं राजनीतिक थी। यह अरबों के फौजी अभियान का काल था। दूसरी मंजिल धार्मिक थी जिसका आरम्भ अब्बासी खिलाफत की प्रथम शताब्दी से होता है। इस काल में, साम्राज्य की आबादी का बहुत बड़ा भाग इस्लाम स्वीकार कर चुका था। तीसरी मंजिल का सम्बन्ध भाषा से है। इस काल में,

*यहूदियों के विधि-विधान का पण्डित।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरबी भाषा की, विजित देशों की देशी भाषाओं पर विजय हुई। इसकी प्रगति सबसे धीमी रही और पराजित जातियों ने इस क्षेत्र में कड़ा प्रतिरोध किया। प्रत्यक्षतः मनुष्य अपनी राजनीतिक और धार्मिक मान्यताओं को भी छोड़ने को तत्पर हो जाता है, लेकिन भाषा के मामले में ऐसा नहीं है।

अरबी, जन-भाषा होने से पूर्व, विद्वानों की भाषा के रूप में पहले सफल रही। पिछले पाठ में हम यह देख चुके हैं कि आठवीं शती के बगदाद में, यूनानी, ईरानी और हिन्दुस्तानी सभ्यताओं के नवस्रोतों से नये विचारों का आगमन हुआ और उनसे एक नवीन सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ। अरबी भाषा, अब अरब सभ्यता के माध्यम के रूप में प्रकट हुई और इसने इस्लाम के बौद्धिक स्वर्ण-युग को प्रस्तुत कर दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१२—विज्ञान और साहित्य

अब हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं जिसमें अरबी भाषा-विज्ञान और विशेष रूप से चिकित्साशास्त्र, खगोलशास्त्र, रससिद्धि (जो रसायनशास्त्र का पूर्व रूप था), भूगोल, गणित, यहाँ तक कि दर्शन, इतिहास, आचारशास्त्र तथा साहित्य के भी नए एवं मौलिक ग्रन्थों की भाषा बन गयी। इस काल का आरम्भ नवीं शती के उत्तरार्ध में, अनुवाद-काल के पश्चात् होता है, जो लगभग १०० वर्ष तक (७५०-८५०) रहा था। इस काल की ख्याति कुछ उन पुरुषरत्नों के नाम पर है, जिनमें से भले ही पश्चिम की आम जनता कुछ ही से परिचित हो, परन्तु वर्तमान युग के कला एवं विज्ञान के छात्र उनसे न केवल भलीभाँति परिचित हैं अपितु उनका बड़ा आदर करते हैं। हम इनमें से केवल कुछ नामों का ही वर्णन कर पायेंगे। यह लोग इस्लाम के उन महान् पुरुषों में से हैं जिन्होंने उस सभ्यता को बहुत कुछ दिया है।

इस समय तक अरबों ने केवल ईरान के प्राचीन ज्ञान और यूनान के सर्वोत्कृष्ट साहित्य के उत्तराधिकार पर ही पूर्ण रूप से अधिकार नहीं कर लिया था, अपितु उसको अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं और विचार-धाराओं के अनुकूल साँचों में भी ढाल लिया था। यूनान और ईरान से प्राप्त इस ज्ञानराशि के अनुवाद, अरब-मस्तिष्क द्वारा सदियों तक होते रहे। नये योगदानों सहित, सीरिया, स्पेन और सिसिली से होते हुए योरोप में पहुँचे, और इस प्रकार उन्होंने उस ज्ञान की नींव डाली जिसका मध्ययुगीन योरोपीय विचार-धारा पर पूरा प्रभाव रहा। सांस्कृतिक इतिहास के दृष्टिकोण से अनुवाद-कार्य, मौलिक ग्रन्थों से, किसी प्रकार कम महत्व नहीं रखता है। क्योंकि अरस्तू, गैलेन और टाल्मी (Ptolemy) के अन्वेषण, यदि आगे आने वाली पीढ़ियों तक न पहुँचते तो संसार ऐसा ही मौताज रह जाता जैसा कि उनकी उत्पत्ति के अभाव में होता। अनुवादों एवं मौलिक ग्रन्थों के बीच सदैव मर्यादा का भेद नहीं रखा जा सकता। अनेक ऐसे अनुवादक हुए हैं जिन्होंने अपने अनुवादों द्वारा नवीन योगदान किये हैं।

स्वास्थ्यविज्ञान के प्रति अरबों की अभिरुचि पैगम्बरों की परम्परागत कथाओं में स्पष्टतः व्यक्त है जिसके अनुसार उन्होंने चिकित्साशास्त्र के, आध्यात्मिक और औषधोपचार—ये दो पक्ष प्रस्तुत किये। चिकित्सक अपनी कला में दक्ष होने के अतिरिक्त तत्वज्ञ, दार्शनिक और संत भी होता था। औषधियों के प्रयोग के सम्बन्ध में इस काल में उन्होंने कुछ उल्लेखनीय प्रगति की थी। अरबों ही ने सर्व-प्रथम औषधियों की दूकानें खोलीं, औषधि-निर्माण के प्रथम शिक्षणकेन्द्र की नींव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डाली तथा प्रथम भेषजनिघंटु—मखज़न (Pharmacopoeia) को तैयार किया। खलीफा अलमामून के समय में ही औषधि-निर्माताओं के लिये परीक्षा उत्तीर्ण करना आवश्यक हो गया था। औषधि बेचने वालों की भाँति चिकित्सक को भी एक परीक्षा उतीर्ण करनी पड़ती थी। एक गलत इलाज के परिणामस्वरूप, खलीफा की आज्ञा से, सन् ९३१ ई० में एक प्रतिष्ठित चिकित्सक को यह आदेश दिया गया था कि वह समस्त चिकित्सकों की परीक्षा ले और केवल उन्हीं लोगों को जो स्तर के अनुकूल हों, प्रमाण-पत्र प्रदान करे। ८६० से कुछ अधिक चिकित्सकों ने बगदाद में परीक्षा उत्तीर्ण की और इस प्रकार राजधानी ने नीमहकीमों से छुटकारा पाया। आजकल की ग्राम-स्वास्थ्य-सेवा की भाँति एक प्रकार का संगठन, खलीफा के वजीर की आज्ञा से कायम किया गया जिसमें चिकित्सकों का एक दल स्थान-स्थान पर औषधियाँ लेकर जाता और बीमार जनता की चिकित्सा का प्रबन्ध करता था। कुछ चिकित्सक नित्यप्रति बन्दीगृहों की देख-भाल करते थे। इन तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि उस समय सार्वजनिक स्वास्थ्य के हित में जितनी निपुणता से अरब ने दिलचस्पी ली थी उसका दर्शन उस युग में संसार के अन्य भागों को सुलभ नहीं था। इस्लाम के इतिहास में पहला अस्पताल हारूँ रशीद ने नवीं शती के आरंभ में ईरानी अस्पतालों के आदर्श पर स्थापित किया था। इस्लामी जगत् में, इसके कुछ ही पश्चात्, ३४ अस्पताल और स्थापित हो गये। काहिरा में प्रथम अस्पताल सन् ८७२ ई० में स्थापित हुआ जो पन्द्रहवीं शती तक चलता रहा। ग्यारहवीं शती में चल-औषधालय भी कायम होने लगे। मुस्लिम अस्पतालों में औरतों के लिए प्रथक् कक्ष हुआ करते थे जिनमें औषधि मिलने का उनका इन्तज़ाम भी प्रथक् रहता था। कुछ अस्पतालों के साथ चिकित्सा-पुस्तकालय भी थे जो चिकित्सा के पाठ्य-क्रम को भी निर्धारित किया करते थे। चिकित्सा-शास्त्र के अत्यंत उल्लेखनीय ग्रन्थकार, जो महान अनुवादकों के युग के पश्चात् हुए, राष्ट्रीयता की दृष्टि से ईरानी किन्तु भाषा के दृष्टिकोण से अरब थे। इनमें से आज भी राज़ी (Rhazes) और इब्न सेना (Avicenna) इन दो के चित्र पेरिस विश्वविद्यालय के मेडिकल कालेज के बड़े हाल को सुशोभित कर रहे हैं।

राज़ी सन् ८६५ ई० में उत्पन्न हुआ और सन् ९२५ ई० में उसका देहान्त हो गया। वह केवल इस्लामी जगत का ही नहीं अपितु मध्ययुग के सर्वोच्च मौलिक विचारकों एवं महान चिकित्सकों में से एक था। बगदाद के बड़े अस्पताल, जहाँ का वह प्रमुख चिकित्सक था, के लिए नया स्थान तय करते समय, कहा जाता है कि, उसने विभिन्न स्थानों पर मांस के टुकड़े लटकवा दिये थे और उस स्थान को चुन लिया था, जहाँ मांस में सड़ने के बहुत कम चिह्न प्रतीत हुए। शल्यशास्त्र में 'बत्ती' (सेटन) का प्रयोग उसी का आविष्कार माना जाता है। रसायनशास्त्र पर उसके मौलिक ग्रन्थों में से उसका एक ग्रन्थ 'किताबुल असरार' (Book of Secret) कालान्तर में अनेक सम्पादकों के हाथों से निकल कर बारहवीं शती के अन्त में सेरीमोना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के प्रसिद्ध अनुवादक जेराड के हाथों में पहुँचा। उसने इस का अनुवाद लैटिन भाषा में किया जो चौदहवीं शती तक रसायनविद्या का प्रमुख स्रोत बना रहा। रोजर बेकन (Roger Bacon) ने डे-स्प्रिटिबस-एट-कारपोरिबस (De Sipritibus Et-Corporibus) के नाम से इस किताब के उद्धरण दिये हैं। राज़ी का अत्यधिक प्रसिद्ध वह लेख है, जो उसने चेचक और खसरा पर लिखा है। यह लेख अपने ढंग का निराला और अरबों के चिकित्सा-साहित्य का वस्तुतः एक आभूषण समझा जाता है। उसकी सबसे महत्त्वपूर्ण पुस्तक, 'अल-हावी' है जो अत्यन्त विस्तृत पुस्तक है। अंजू के चार्ल्स प्रथम के संरक्षकत्व में सिसली के एक यहूदी चिकित्सक फर्ज बिन सलीम द्वारा इसका सर्वप्रथम लैटिन में अनुवाद सन् १२७६ ई० में किया गया था। सन् १४८६ ई० से लगातार यह पुस्तक योरोप में 'कान्टिनेन्स' के नाम से मुद्रित होती रही और सन् १५४२ ई० में वेनिस में इसका पाँचवाँ संस्करण प्रकाशित हुआ। जैसा कि इसके नाम से प्रकट है, यह पुस्तक औषधियों की जानकारी के निमित्त एक विश्व-कोष के रूप में मुद्रित हुई थी। इस पुस्तक में अरबों के निजी मौलिक योगदान के साथ ही, उस समस्त ज्ञान का वर्णन है जो उस समय तक अरबों ने यूनानी, ईरानी और भारतीय औषधिविज्ञान के सम्बन्ध में प्राप्त किया था। राज़ी की ये पुस्तकें उस समय मुद्रित हुईं जिस समय मुद्रणकला अपनी शैशवावस्था में थी। राज़ी की ये पुस्तकें शतियों तक पश्चिमी लैटिन जगत के मस्तिष्क पर उल्लेखनीय प्रभाव डालती रहीं।

अरबी औषधि-शास्त्र के इतिहास में राज़ी के पश्चात् सर्वप्रख्यात लेखक इब्नसेना हुआ है। उसके औषधि-विश्वकोष जैसे ग्रंथ, जिसका अनुवाद "कानून" के नाम से किया गया है, ने उस समय के चिकित्सा-साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था और वह उस समय के योरोप के मेडिकल कालेजों में पाठ्य पुस्तक के रूप में पढ़ाया जाता था। पन्द्रहवीं शती के अन्तिम ३० वर्षों में इसका एक संस्करण हेब्रू भाषा में और १५ संस्करण लैटिन भाषा में प्रकाशित हुये। हाल में ही अंग्रेजी भाषा में इसके एक अंश का अनुवाद हुआ है। इसकी मैटेरिया-मेडिका (मख़जन-निघंटु) में लगभग ७६० वनस्पतियों का वर्णन हुआ है। बारहवीं शती से लेकर सत्रहवीं शती तक यह पुस्तक पश्चिमी जगत में औषधि-विज्ञान की मुख्य प्रदर्शिका के रूप में व्यवहृत होती रही है। मुस्लिम पूर्व में तो अभी तक इसका यदा-कदा प्रयोग हो रहा है। डा० विलियम आस्लर के शब्दों में यह पुस्तक समस्त चिकित्सा-ग्रन्थों की तुलना में सर्वाधिक काल तक 'मेडिकल बाइबिल' के सदृश मान्य बनी रही।

दर्शन के क्षेत्र में, अरबों की सब से बड़ी देन यह थी कि उन्होंने यूनानी और इस्लामी विचार-धाराओं का समन्वय कर दिया। निस्सन्देह यह कार्य बड़े ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महत्त्व का था। अरबों के निकट दर्शन वह शास्त्र था जिसके द्वारा मानवीय शक्ति की सीमा तक वस्तुओं के वास्तविक कारणों का ज्ञान प्राप्त किया जाय। निश्चय ही यह यूनानी दृष्टिकोण था जो विजितों के विचारों तथा अन्य पूर्वीय प्रभावों से रूपान्तरित होता हुआ अरबों के द्वारा, इस्लाम की मानसिक वृत्तियों के अनुकूल ढल कर अपनाया गया और फिर वही अरबी भाषा के माध्यम से व्यक्त हुआ। यूनानी ज्ञान के विद्यार्थी के रूप में अरबों ने अरस्तू के ग्रन्थों को दार्शनिक विद्या की पूर्ण संहिता समझा और गैलेन के ग्रन्थों को चिकित्साशास्त्र का संपूर्ण कोष माना। यूनानी दर्शन और चिकित्सा से तात्पर्य उस सर्वस्व से है जो उस समय पश्चिम के पास था। और मुसलमान होने के नाते अरबों का यह विश्वास था कि कुरान और इस्लामी धर्मशास्त्रों, धार्मिक कानून और अनुभव का समुच्चय है। इसलिए एक ओर दर्शन एवं धर्म और दूसरी ओर दर्शन तथा चिकित्साशास्त्र—इन दोनो का समन्वय ही अरबों की मौलिक देन है। एकेश्वरवाद प्रचीन सामी जगत् की सब से बड़ी देन है और यूनानी दर्शन प्राचीन इण्डोयोरोपीय जगत् की सब से बड़ी कृति है। मध्य-युगीन इस्लाम की यह अमर कीर्ति है कि उसने मानव-विचारधारा के इतिहास में सर्वप्रथम इन दोनो में सामञ्जस्य स्थापित कर दिया। इस प्रकार इस्लाम ने ईसाई योरोप को आधुनिक दृष्टिकोण की ओर मार्ग-प्रदर्शन किया।

प्राचीन एवं मध्ययुगीन जगत् में—विशेष कर इस्लामी जगत् में—आजकल की तरह, ज्ञान के विविध विषयों का बटवारा नहीं था। दार्शनिक, गणित और संगीत के आचार्य हो सकते थे; खगोलवेत्ता, काव्य के पण्डित हो सकते थे। उदाहरणार्थ आधुनिक पश्चिमी पाठकों को इस्लाम के अत्यन्त प्रख्यात खगोलशास्त्रियों में उमर अल-खैयाम का नाम देखकर आश्चर्य होगा जबकि दूसरी ओर और भी अधिक प्रसिद्धि-प्राप्त, रुबाइयों के रचयिता के रूप में वे उन्हें पायेंगे। वह निस्सन्देह एक ईरानी कवि और एक स्वतंत्र विचारक था। वह प्रथम श्रेणी का गणितज्ञ और नक्षत्र-विज्ञान-वेत्ता भी था। 'अल किन्दी' का कार्य भी अनोखा था। एक दार्शनिक के नाते उसने नव-अफलातूनी ढंग पर, प्लेटो और अरस्तू के विचारों में सामञ्जस्य स्थापित करने का यत्न किया और उसने नव-पायथागोरसवादी गणित (Neo-Pythagorean Mathematics) को संपूर्ण विज्ञान का आधार माना। किन्तु वह केवल दार्शनिक मात्र ही नहीं था, अपितु एक ज्योतिषी, कीमियागर, नेत्र-विशेषज्ञ और संगीत के सिद्धान्तों का ज्ञाता भी था। जिन पुस्तकों का उसे लेखक बताया जाता है, उनकी संख्या २६५ से कम नहीं है, पर दुःख इस बात का है कि उनमें से अधिकांश नष्ट हो गयी हैं। उसकी मुख्य पुस्तक, जो प्रकाश-विज्ञान पर है, यूक्लिड (Euclid) के सिद्धान्तों के आधार पर लिखी गयी है। वह पूर्व एवं पश्चिम में अत्यधिक व्यवहृत होती रही। रोजर बेकन भी इस पुस्तक से प्रभावित हुआ था। अलकिन्दी की संगीत-कला सम्बन्धी पुस्तकों से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह ज्ञात होता है कि संगीत में लय-ताल से, मुसलमान, योरोप के ईसाइयों की अपेक्षा सदियों पूर्व, परिचित हो चुके थे !

इस्लाम में खगोलविद्या का वैज्ञानिक अध्ययन "सिद्धान्त" नाम की एक भारतीय पुस्तक (जो सन् ७७१ ई० में बगदाद में लायी गयी थी), से प्रभावित होकर आरम्भ हुआ था। नवीं शती के आरंभ में, काफ़ी हद तक सही यंत्रों द्वारा प्रथम नियमित निरीक्षण, दक्षिणी-पश्चिमी ईरान में किये गये थे। इस शती के मध्य के पूर्व ही, खलीफा अलमामून ने, बगदाद में, तथा दमिश्क के बाहर भी, वेधशालाओं की स्थापना की थी। इस युग की वेधशालाओं के उपकरण में, परकार, धूप-घड़ी (Dial), धरातल की ऊँचाई नापने के यंत्र, और पृथ्वी का मानचित्र (Globe) होता था। खलीफा के खगोलशास्त्रियों ने भूमि नापने के लिए एक विचित्र ढंग निकाला था। वह भूमि के कोण के एक अंश की लम्बाई ज्ञात करते थे। वह, इस विचार से कि पृथ्वी गोल है, उसके आकार तथा उसकी परिधि का ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे। यह नाप-जोख फरात नदी के उत्तरी क्षेत्र तथा पामीरा के निकट की गयी थी। इसके द्वारा यह ज्ञात हुआ था कि मध्याह्न रेखा के अंश की लम्बाई ५६ २/३ अरबी मील है। यह परिणाम अत्यन्त शुद्ध साबित हुआ। इस स्थान पर एक अंश की जो वास्तविक लम्बाई है, उससे इन नक्षत्र-विज्ञान-वेत्ताओं द्वारा ज्ञात लम्बाई केवल २८७७ फीट अधिक है।

जिन नक्षत्र-विज्ञान-वेत्ताओं ने इस नाप-जोख में भाग लिया था, उनमें अल्-ख्वारिज्मी भी सम्मिलित था। उसकी गणना इस्लाम के महान वैज्ञानिकों में होती है। इस व्यक्ति ने उस समय की गणित-सम्बन्धी विचार-धारा को सबसे अधिक प्रभावित किया था। इसने अत्यन्त प्राचीन नक्षत्र-सारिणी का संग्रह करने के अतिरिक्त, प्राचीनतम् गणित तथा बीजगणित पर भी प्राचीनतम्-ग्रन्थ तैयार किया जिसका अनुवाद लैटिन में हुआ। यह ग्रन्थ योरोपीय विश्वविद्यालयों में सोलहवीं सदी तक गणित की प्रमुख पाठ्य-पुस्तक रहा। इस अनुवाद के फलस्वरूप योरोप 'बीजगणित' के विज्ञान और उसके नाम से परिचित हुआ। ख्वारिज्मी की पुस्तक के द्वारा ही अरबी अंकों का पश्चिम में प्रचलन हुआ और उसी के नाम पर ये अंक अलगोरिज्म (Algorism) कहलाये।

भेषज-विज्ञान, नक्षत्र-विज्ञान एवं गणित के पश्चात् अरबों ने रसायनशास्त्र में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण खोज की है। रसायनशास्त्र एवं अन्य भौतिक विज्ञानों की खोज के क्रम में उन्होंने विश्व को ऐसे क्रियात्मक प्रयोगों से परिचित कराया जिनसे यूनानियों की धुँधली कल्पनाओं पर निश्चय प्रगति हुई। यद्यपि अरबों ने गोचर पदार्थों का पर्यवेक्षण परिश्रम के साथ किया और तथ्यों को खोजपूर्ण ढंग से एकत्र किया, किन्तु उन खोजों के परिणामों का सही-सही अनुमान मूल्यांकन तथा उनसे विशुद्ध

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने में उनको बड़ी कठिनाई हुई। किसी भी प्रयोग के विस्तार को अन्तिम रूप न दे पाना, यह अरबों की सब से बड़ी कमजोरी थी।

अरब की कीमियागीरी के जन्मदाता जाबिर-बिन-हैयान (Geber) की कीर्ति, सन् ७७६ ई० के आस-पास कूफ़ा में जगमगाई। कीमिया (Alchemy) यहाँ प्राचीन मिस्री भाषा से निकला हुआ एक शब्द है जिसका अर्थ 'काला' है। यह शब्द यूनानी भाषा के माध्यम से अरबी में आया। जाबिर भी अपने मिस्री और यूनानी अग्रजों की भाँति इसी बात को मानकर आगे बढ़ा कि मूल धातुओं यथा टीन, सीसा, लोहा और ताँबों को एक अद्भुत पदार्थ के द्वारा सोना तथा चाँदी में परिवर्तित किया जा सकता है। इसी खोज में उसने अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दी। उसने, दूसरे प्राचीन कीमियागरों की तुलना में 'प्रयोग' के महत्त्व को अधिक स्पष्ट रूप से स्वीकार किया और उसका उल्लेख भी किया। इसके अतिरिक्त उसने रसायन-शास्त्र के सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक दोनो दिशाओं में उल्लेखनीय प्रगति की। पश्चिमी इतिहासकार जाबिर को, उन विभिन्न प्रकार के रासायनिक मिश्रणों की खोज का भी श्रेय प्रदान करते हैं, जिनका जिक्र उनकी २२ उपलब्ध पुस्तकों में नहीं मिलता। यह स्पष्ट है कि अरबी और लैटिन भाषाओं में उसके नाम से कीमियागीरी पर प्राप्त सौ पुस्तकों में से अधिकांश जाली हैं। फिर भी वे समस्त पुस्तकें जो उसके नाम से सम्बन्धित थीं, १४ वीं शती के पश्चात्, योरोप और एशिया में अत्यन्त प्रभावकारी रासायनिक पुस्तकें मानी जाती थीं। कुछ पुस्तकों के सम्बन्ध में हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि वह उसी की अपनी रचनाएँ हैं। जाबिर ने, धातुओं के भस्मीकरण (कुश्ता) और रूपपरिवर्तन (कीमिया), इन दो महत्त्वपूर्ण रासायनिक प्रक्रियाओं की वैज्ञानिक व्याख्या की। उसने वाष्पीकरण, शोधन, पिघलाने और रवा बनाने की प्रक्रियाओं में कुछ सुधार किया। वह कच्चे सल्फ्यूरिक एसिड (गन्धक का अम्ल) और नाइट्रिक एसिड (शोरे का अम्ल) बनाने के ढंग से परिचित था और इन दोनो को मिलाकर एकुआ रिजा* बनाना जानता था, जिसमें सोने तथा चाँदी को सुविधापूर्वक विलीन किया जा सकता था। सामान्यतः जाबिर ने, अरस्तू के 'धातुओं के तत्व' के सिद्धान्त में कुछ इस प्रकार का सुधार किया कि वह सिद्धान्त थोड़े से परिवर्तन के साथ, अठारहवीं शती में आधुनिक रसायनशास्त्र के आरंभ होने तक, वैसे ही स्थिर रहा।

पवित्र 'हज' यात्रा, मस्जिदों का मक्का की ओर रुख रख कर निर्माण करना, और नमाजों के समय काबा की दिशा को निश्चित करने की आवश्यकता—इन सबने मिल कर मुसलमानों का ध्यान एक धार्मिक भावना के साथ-साथ भौगोलिक अध्ययन की ओर आकर्षित किया। ज्योतिष, जिसने समस्त संसार के सभी स्थानों के अक्षांश

---

* (Aqua regia) तीन भाग नमक का तेजाब और एक भाग शोरे का तेजाब मिला कर यह द्रव बनाया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और देशान्तरों को निश्चित करने की आवश्यकता को उत्पन्न किया था, ने भी अपना वैज्ञानिक प्रभाव डाला। सातवीं और नवीं शती के दौरान में मुसलमान व्यापारी पूर्व में स्थल और जल दोनो मार्गों से चीन पहुँचे; दक्षिण में जंजीबार के द्वीप एवं अफ्रीका के दूरस्थ दक्षिणी तट की खबर ली; उत्तर में रूस तक में दाखिल हो गये। केवल पश्चिम में उनका बढ़ाव, अतलान्तक—भयंकर अन्ध महासागर के कारण अवरुद्ध हो गया। इन व्यापारियों के वापस आने पर उनके वर्णन ने सहज ही, देश-वासियों में, उन सुदूर देशों और वहाँ के निवासियों के प्रति, आम दिलचस्पी पैदा कर दी। 'टाल्मी' की भूगोल पर पुस्तक का अनुवाद, सीरियायी के माध्यम से अथवा सीधे यूनानी भाषा से कई बार अरबी भाषा में किया गया। इसे आदर्श मान कर, प्रसिद्ध ख्वारिज्मी ने भूमि का एक मानचित्र तैयार किया। वस्तुतः यह विश्व का एक ऐसा मानचित्र था जिसे ख्वारिज्मी ने दूसरे ६६ विद्वानों के सहयोग से तैयार किया था। यह इस्लाम में भूमि और आकाश का सबसे पहला मानचित्र था। प्रारंभिक अरब-भौगोलिकों ने भारत से यह विचार लिया था कि "संसार का एक केन्द्र है।" उन्होंने इस केन्द्र का नाम 'एरिन' रखा था। वह एक भारतीय नगर का विगड़ा हुआ नाम है जिसका टाल्मी के भूगोल में उल्लेख है। इस नगर में एक वेधशाला थी जिसकी मध्याह्न रेखा पर संसार का गुम्बज या संसार की चोटी का होना माना गया था। इस की स्थिति पूर्व एवं पश्चिम के सीमान्त मध्य में भूमध्यरेखा पर निर्धारित की गयी थी। वे यह समझते थे कि इस कल्पित स्थान से पश्चिमी मध्याह्न-रेख ६० अंश पर स्थित है। मुसलमान भूगोलवेत्ता साधारणतया देशान्तर की गणना उसी स्थान की मध्याह्न रेखा से किया करते थे जहाँ से टाल्मी किया करता था और यह वही स्थान है जिसे अब हम कनारी द्वीप (Canaries) कहते हैं।

जिस प्रकार अरब-दर्शन और चिकित्सा पर यूनानी-प्रभाव की छाप थी, उसी प्रकार साहित्यिक एवं ऐतिहासिक रचनाओं में, जिनका हम वर्णन करने जा रहे हैं, ईरानियों का अनुकरण किया गया था; अलबत्ता इनके वर्णन करने की शैली बिलकुल इस्लामी परम्परा के अनुरूप थी। इस शैली में प्रत्येक घटना, किसी प्रत्यक्षदर्शी या तत्कालीन व्यक्ति के मुँह से कहलाई जाती है और फिर वही वर्णन अनेक मध्यवर्ती व्यक्तियों द्वारा अन्ततः ग्रंथों के रचयिता तक पहुँचाया जाता है। वर्णन की इस पद्धति ने उन वर्णनों की यथार्थता और प्रामाणिकता को बल दिया, ठीक वैसे ही, जैसे घटनाक्रमों के साथ निश्चित दिन और महीना का उल्लेख कर देने से हुआ। किन्तु इन वर्णित तथ्यों की प्रामाणिकता की कसौटी, आलोचनात्मक परीक्षण के बजाय इस बात पर निर्भर हो गयी कि उन वर्णनकर्ताओं का सिलसिला एक दूसरे से जुड़ा हुआ है या नहीं और यह कि वर्णनकर्ताओं की ईमानदारी में जन-साधारण का अटूट विश्वास भी है? वर्णन के लिये, घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व समकालीनों के सिलसिले में उनको चुनने तथा तथ्यों को एक तारतम्य में रखने में निर्णय लेने के अलावा, अरब इतिहासकारों ने अपनी विश्लेषण, आलोचना, तुलना, अथवा अनुमान की शक्तियों का बहुत ही कम प्रयोग किया।

यद्यपि अरब ऐतिहासकों ने उस काल की घटनाओं का चित्रण विस्तारपूर्वक किया है, फिर भी उनकी वर्णनशैली की सही झलक हदीसों में मिलती है, जिन्हें हम धार्मिक परम्पराओं के विज्ञान की संज्ञा दे सकते हैं। हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् आरंभ के २५० वर्षों में, उनके उपदेशों और कार्यों का वर्णन, संख्या तथा विस्तार की दृष्टि से काफ़ी बढ़ गया था। प्रत्येक मसले पर, चाहे वह धार्मिक हो या राजनीतिक अथवा सामाजिक, प्रत्येक दल अपने विचारों, चाहे वे विचार सच्च हों अथवा मनगढ़न्त, सब को समर्थन प्राप्त कराने के लिए, हजरत मुहम्मद साहब के किसी शब्द या निर्णय को प्रमाण में पेश करने का यत्न करता था।

प्रत्येक पूर्ण हदीस में दो अंग होते हैं। प्रथम अंग में रवायत (वर्णन) करने वालों की श्रृंखला तथा दूसरे में मूल विषय। श्रृंखला के बाद मूल-पाठ रहता है जिसके वर्णन का तरीका इस प्रकार होता है— "'अ' ने मुझसे कहा 'ब' की रवायत (कथन) के अनुसार जो 'ब' ने 'स' से 'द' की रवायत (कथन) के अनुसार सुना। 'द' से यह वर्णन 'य' ने किया था कि यह रवायत उसको हज़रत मुहम्मद साहब की तरफ़ से हुई कि··········)।" इसी सिद्धान्त का पालन इतिहास, दर्शन और साहित्य में किया गया है। इन समस्त क्षेत्रों में आलोचना मूल विषय के संबंध में न होकर साधारतः बाह्य होती थी। यह केवल इसी सीमा तक कि, सहाबा (रवायत करने वाले व्यक्ति) की ख्याति कितनी है, क्योंकि वही लोग उन तथ्यों की सत्यता के प्रमाण होते थे। और यह भी देखा जाता था कि रवायत (वर्णन) करने वालों की, हजरत मुहम्मद साहब तक पहुँचने वाली श्रृंखला को अखण्ड बनाए रखने की क्षमता उनमें है या नहीं।

रोमनों के पश्चात् मध्ययुग में केवल अरब ही वे लोग थे जिन्होंने विधि-विज्ञान (Science of Jurisprudence) की स्वतंत्र पद्धति प्रस्तुत की। इस पद्धति की नींव प्रधानतः कुरान और हदीस पर आधारित थी और यूनानी-रूमी-पद्धति से किसी कदर प्रभावित थी। ईश्वर के समस्त आदेश, जो कुरान में अवतरित हैं और हदीस में जिनकी विस्तृत व्याख्या है, वे इस्लामी विधि-विधान के द्वारा भावी पीढ़ियों तक पहुँचा दिये गये।

इस्लामी-विधि-विधान के आदेश मुसलमानों के सम्पूर्ण जीवन के धार्मिक राजनीतिक एवं सामाजिक पहलुओं का संचालन करते हैं। वे मुसलमानों के वैवाहिक एवं नागरिक सम्बन्धों के अतिरिक्त, उनके गैर-मुसलमानों के साथ कैसे सम्बन्ध रहें,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसका भी संचालन करते हैं। उनके आचार-सम्बन्धी जीवन में 'विधि और निषेध' इसी पवित्र विधान से मिलते हैं। व्यक्ति के सभी कार्य निम्नलिखित पाँच श्रेणियों में विभक्त किये गये हैं:—

[१] वे लाज़मी कार्य जिनके करने से पुरस्कार मिलता है और जिनके न करने से दण्ड मिलता है।—Absolute Duty.

[२] वे कार्य जिनके करने से पुरस्कार मिलता है लेकिन न करने पर दण्ड नहीं मिलता।—Meritorious Actions.

[३] वे कार्य जिनको करने की अनुमति है। करने अथवा न करने पर पुरस्कार अथवा दण्ड की व्यवस्था नहीं है।—Permissible Actions.

[४] वे कार्य जिनकी अनुमति न होते हुये भी, उनके करने पर दण्ड नहीं दिया जाता।—Reprehensible Actions.

[५] ऐसे कार्य जो वर्जित और दण्डनीय हैं।—Forbidden Actions.

आचार-शास्त्र पर जो पुस्तकें कुरान और हदीस के आधार पर लिखी गयी हैं, यद्यपि वे अगणित हैं, फिर भी नैतिकता पर लिखे गये अरबी साहित्य की सामग्री की इति यहीं नहीं है। इन समस्त मुसलमानी दर्शनों में त्याग, सन्तोष एवं सहिष्णुता के गुणों की प्रशंसा की गयी है। बुराइयों को रूह का विकार और नैतिक दार्शनिकता को इसका चिकित्सक माना है। यह वर्गीकरण मानसिक शक्तियों के विश्लेषण के आधार पर किया गया है। गुण और दोष दोनों ही सबमें रहते हैं।

साहित्य (अदब) की दृष्टि से अरबी साहित्य, जो सन् १००० ई० के लगभग अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था, में फारसी के अलंकारपूर्ण साहित्य का प्रभाव उत्पन्न हो गया था। पूर्वकाल की संक्षिप्त, प्रभावोत्पादक एवं सरल अभिव्यक्ति सदैव के लिए विदा हो गयी थी। उसका स्थान एक अलंकृत और ललित शैली ने ले लिया था। वह शैली उपयुक्त उपमाओं और अनुप्रासों से सम्पन्न थी। पश्चिम ने उस समय के साहित्य से केवल एक पुस्तक चुनी और उसी पर अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर दिया। यह पुस्तक 'अल्फलैला-व-लैला'—'एक हजार और एक रातें' है, जो अरेबियन नाइट्स के नाम से सुविख्यात है। अल जहशियारी (Al-Jahshiyari), जिसकी मृत्यु सन् ६४२ ई० में हुई थी, ने एक प्राचीन फारसी कहानी के आधार पर एक कथानक की रचना की थी। अन्य कहानियों और नायिका शहरज़ादी के नाम को स्थानीय कहानी कहने वालों ने बाद में जोड़ दिया। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे-वैसे इस पुस्तक में, हिन्दुस्तानी, यूनानी, हेब्रू, मिस्री, आदि अगणित स्रोतों के द्वारा हर प्रकार की पूर्वीय लोक-कथाओं की वृद्धि होती गयी। खलीफा हारूँ रशीद के काल्पनिक दरबार ने भी इस पुस्तक के लिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विनोदपूर्ण कथाओं और प्रेम-कहानियों की प्रचुर संख्या प्रदान की। इस पुस्तक का संकलन १४ वीं शती तक पूर्ण नहीं हुआ था और संयोगवश इस पुस्तक की ख्याति पूर्व की अपेक्षा, पश्चिम में कहीं अधिक हुई।

जिस समय यह 'अरेबियन नाइट्स' अपने अन्तिम पूर्णरूप में अरबी भाषा में आयी, उस समय में मुस्लिम वैज्ञानिक एवं साहित्यिक स्वर्णयुग की प्रगति रुक चुकी थी। अब्बासियों के पश्चात् भौतिकविज्ञान अथवा विशुद्ध विज्ञान की किसी भी शाखा में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। यदि आजकल के मुसलमान केवल अपनी ही पुस्तकों पर आश्रित रहते तो उनकी पूंजी उससे कम होती जो ग्यारहवीं शती में उनके पूर्वजों के पास थी। चिकित्सा, दर्शन, गणित, बनस्पति तथा अन्य शास्त्रों में उस युग के मुसलमान एक विशेष स्थान पर पहुँच चुके थे। उस समय के बाद से इस्लाम के मस्तिष्क में निष्क्रियता आती प्रतीत होती है। धार्मिक व वैज्ञानिक अतीत व उसकी परम्पराओं के प्रति आदर ने अरबों की बुद्धि को कुण्ठित कर दिया था और अब आज इस वर्तमान युग में कुछ जागृति के लक्षण पुनः दिखाई देने लगे हैं।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१३—ललित कलाएँ

कविता की तरह कला में भी, सामी अरब को, अपने एक विशिष्ट दृष्टिकोण में रुचि रही। इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं कि कला को विशद रूप में विस्तृत करने की मृदु भावना उनमें थी, किन्तु विभिन्न अंगों में सामञ्जस्य स्थापित करके उनको सम्पूर्णता प्रदान करने की विशेष क्षमता वे नहीं रखते थे। जो भी हो, उनको भवन-निर्माण-कला तथा विशेष रूप से चित्रकला में उतनी भी सफलता न मिल सकी, जितनी उन्हें विज्ञान में एक सीमा तक प्राप्त हुई, भलेही आगे चलकर वह अवरुद्ध हो गई हो। शिल्पकला सम्बन्धी स्मारकों, जिनसे किसी समय बगदाद जगमगा रहा था, का अब नामो-निशान भी नहीं बाकी है। इस्लाम के दो सर्वोत्तम भवन—दमिश्क की अमवी मस्जिद और जेरुसलम का "डोम आफ राक" जैसा कि हम लिख आये हैं, प्रारम्भिक युग की स्मृति हैं। यह ठीक है कि किसी समय बगदाद नामक नगर को बड़ा वैभव प्राप्त था किन्तु खलीफा अलअमीन और अलमामून के गृह-युद्ध ने इसे पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया तथा सन् १२५८ ई० में मुगलों के आक्रमण ने रही-सही कसर पूरी कर इसे अन्तिम रूप से नष्ट कर दिया। इन तबाहियों और दूसरे प्राकृतिक कारणों ने इस नगर को किसी सीमा तक यहाँ तक मिटा दिया कि आज यह भी पता नहीं चलता कि इनमें से अधिकांश प्रासाद कहाँ पर स्थित थे।

बगदाद की राजधानी के बाहर अब्बासी काल के जितने भी ऐतिहासिक चिह्न पाये जाते हैं उनमें से एक भी भवन ऐसा नहीं मिलता जो खलीफा मुतवक्किल के समय (८४७—८६१ ई०) से पूर्व के हों। सामिरा की जुमा-मस्जिद इसी खलीफा की बनवाई हुई थी। विशाल आयताकार इस मस्जिद के निर्माण में सात लाख दीनार व्यय हुए थे। इसकी मेहराबों पर जो चित्रकारी की हुई है, उस पर भारतीय निर्माण-कला के प्रभाव का अनुमान होता है। अमवी-काल के भवनों पर सीरिया के रोमनों की भवननिर्माण-कला का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है, किन्तु इसके विपरीत "रक्का" (उत्तरी सीरिया) में आठवीं शती के लगभग अब्बासियों ने जिन भवनों का निर्माण कराया था उनमें से जो अवशेष हैं, उन पर एशियाई और विशेष रूप से ईरानी भवन निर्माण-कला की छाप पाई जाती है।

मुस्लिम धर्मशास्त्र-वेत्ता प्रत्येक प्रकार की मूर्ति-कला के विरोधी थे, कुरान में इसका निषेध है। किन्तु उनकी इस अस्वीकृति के होने पर भी इसका विकास रुक न सका। जैसे कुरान के स्पष्ट आदेशों के होने पर भी मुस्लिम समाज से मद्य-पान दूर न हुआ, वैसे ही इस कला का विकास भी रुक न सका। इसके पूर्व हम देख चुके हैं कि एक खलीफा ने अपने प्रासाद के गुम्बद पर एक अश्वारोही की प्रतिमा बनवायी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

थी जो सम्भवतः वायु की दिशा बतलाने का कार्य करती थी। दूसरे खलीफा ने अपने लिए दजला नदी में शेरों, गरुड़ों और मछलियों की आकृति की मनोरंजन-नौकाएँ डाल रखी थीं तथा एक अन्य खलीफा ने चाँदी और सोने का एक वृक्ष बनवाया था जिसकी १८ शाखाएं थीं तथा जो प्रासाद के एक बड़े हौज में लगाया गया था। इस हौज के दोनो किनारों पर अश्वारोहियों की पन्द्रह प्रतिमाएँ निर्मित थीं, जो कमखाब की पोशाक धारण किये हुए थीं। इनके हाथों में बर्छियाँ थीं जो प्रत्येक समय इस प्रकार हिलती थीं मानो उनमें आपस में युद्ध हो रहा हो।

सामरा नगर के निर्माता खलीफा अल मोतसिन ने अपने प्रासाद की दीवारों को नंगी औरतों तथा आखेट-दृश्यों की तस्वीरों से सुसज्जित किया था। ये सम्भवतः ईसाई कलाकारों द्वारा निर्मित थीं। उसके दूसरे उत्तराधिकारी अल मुतवक्किल के समय में यह अस्थायी राजधानी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गयी थी। इसने अपने प्रासाद की दीवारों को सुसज्जित कराने के लिए वेजेन्तीनी चित्रकारों को नियुक्त किया था। उनको अनेक चित्रों के साथ एक स्थान पर एक गिरजाघर तथा उसके भिक्षुओं के चित्र को बनाने में कोई दोष नहीं जान पड़ा।

इस्लाम में चित्रकारी को धर्म की सेवा के लिए बहुत समय पश्चात् प्रयुक्त किया गया, किन्तु इस कला से बौद्ध और ईसाई धर्मों ने जिस रूप में सेवा ली, चित्रकला का वह रूप इस्लाम में कभी भी ग्राह्य न हो सका। हजरत मुहम्मद साहब के प्राचीनतम चित्र को नवीं शती में एक अरब यात्री ने एक चीनी दरबार में देखा था। और यह चित्र भी सम्भवतः नस्तूरी ईसाइयों द्वारा निर्मित था। मुसलमानों की धार्मिक चित्रकारी चौदहवीं शती के आरम्भ तक पूर्ण रूप से सामने नहीं आयी थी। चित्रकारी का यह रूप प्रत्यक्षतः पूर्वी ईसाई गिरजाघरों और विशेष रूप से याकूबी तथा नस्तूरी गिरजाघरों की चित्रकारी से लिया गया था। यह कला पुस्तकों को सुसज्जित करने की कला से विकसित हुई थी।

अत्यन्त प्राचीन काल से ईरानियों, जिनकी सभ्यता को अरबों ने अपना लिया था, ने सुसज्जित करने वाली डिजाइनों एवं रंगों में अपना पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया था। उनके यत्नों के फलस्वरूप इस्लाम की व्यावसायिक कलाओं ने अत्यंत श्रेष्ठता प्राप्त कर ली। विशेष रूप से कालीन बुनने की कला, जो उतनी ही प्राचीन है, जितना, कि मिस्र में फिरऔनों का समय, वह मुसलमानों की संरक्षकता में खूब समुन्नत हुई। इन कालीनों पर विशेष रूप से आखेट एवं उद्यान-दृश्य पसंद किये जाते थे। विभिन्न प्रकार के रंगों को पक्का करने के ध्येय से रंग बनाने में फिटकिरी का प्रयोग होता था। चित्रित रेशमी वस्त्र जो मिस्र और सीरिया में मुसलमानों के करघाघरों में तैयार होते थे, को योरोप में इतना बहुमूल्य समझा जाता था कि धर्मयुद्ध के सैनिक (Crusaders) तथा अन्य पश्चिमी लोग अपने सन्तों के स्मारकों व समाधियों पर ओढ़ाने के लिए, अन्य वस्त्रों की अपेक्षा उन्हीं का प्रयोग करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुलालविज्ञान (Ceramics) का कार्य भी उतना ही प्राचीन था जितना मिस्र और सूसा (Susa)। इनमें रेखाचित्र और शिलालेख (Epigraphic) तथा मनुष्यों और पशुओं एवं वृक्षों की आकृतियाँ इतनी सफ़ाई, सुन्दरता और सजावट के साथ तैयार होती थीं कि उस शैली की तुलना में अन्य कोई भी इस्लामी कला समुन्नत न हो सकी। काशानी फर्शी-खपरैलों पर फूल-पत्तियों के चित्र बनाये जाते थे। यह कला ईरान से दमिश्क में आई थी। यहाँ पर पच्चीकारी की कला के साथ-साथ यह अत्यधिक लोकप्रिय होकर भवनों की आन्तरिक एवं बाह्य सजावटों में प्रयुक्त होने लगे। सर्वोपरि अरबी वर्णमाला के लिखने की अलंकृत शैली ने इस्लामी कला में शक्तिशाली कल्पनाओं को जन्म दिया। विशेष रूप से अन्ताकिया (Antioch), हलब, दमिश्क, तथा टायर जैसे अन्य प्राचीन फ़ोनेशियन नगरों में मीनाकारी, और काँच पर कलई की कलाएं अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची थीं। लावरे (Louvre) ब्रिटिश अजायबघर और काहिरा के अरब अजायबघर के बहुमूल्य कोषों में रखी हुई सामरा और फुस्तात की अनुपम चीजों में तश्तरियाँ, प्याले, गुलदान, सुराहियाँ तथा घरों एवं मस्जिदों के लैम्प भी दृष्टिगोचर होते हैं। ये लैम्प (फानूस) अपनी रंग-बिरंगी चमक-दमक से इस प्रकार शोभायमान हैं या उन पर धातु का पानी इस प्रकार चढ़ाया गया है कि मानो इन्द्रधनुष बदल-बदल कर अपना रंग दिखा रहा हो।

सुलेख लेखन-कला का इसलिए आदर किया गया था कि इसके द्वारा कुरान को लिखकर इस ईश्वर वाक्य को सुरक्षित रखना था। कुरान में इस कला के लिए स्वीकृति प्रदान की गयी है। यह कला द्वितीय-तृतीय शती हिजरी में विकसित हुई और इसने शीघ्र ही अत्यन्त बहुमूल्य कला का रूप धारण कर लिया। यह पूर्णरूप से इस्लामी ही कला थी और चित्रकारी पर इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। इस्लाम ने जीवधारियों को चित्रित करना उचित नहीं माना है। इसलिए मुसलमानों ने अपनी सौन्दर्य सम्बन्धी रुचि को व्यक्त करने के लिए सुलेख-लेखन-कला को अपनाया था। चित्रकारों की अपेक्षा सुलेखक कहीं अधिक प्रतिष्ठित एवं सम्मानित थे। शासक भी पुण्य प्राप्त करने की दृष्टि से कुरान की किताबत (लिखाई) किया करते थे। अरबी की ऐतिहासिक एवं साहित्यिक पुस्तकों में अनेक सुलेखकों (कातिबों) का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया गया है, किन्तु ये पुस्तकें, भवन-निर्माताओं चित्रकारों तथा धातु के शिल्पियों के सम्बन्ध में बिल्कुल मौन हैं। सुलेख-लेखन-कला ही एक ऐसी अरब कला है जिसमें ईसाई और मुस्लिम कलाकार आज भी कुस्तुन्तुनिया काहिरा, बेरूत और दमिश्क में विद्यमान हैं। उनकी आज की कृतियाँ सौन्दर्य में, प्राचीन काल के उच्कोटि की कृतियों को भी मात देती हैं।

केवल सुलेख-लेखन-कला ही नहीं अपितु उसकी सहयोगी अन्य कलाओं यथा रंगने, सजाने तथा जिल्दसाजी की संपूर्ण कला का आरंभ और उसकी उन्नति केवल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पवित्र ग्रन्थ कुरान से संबन्धित होने के ही कारण हुई। अब्बासियों के समय में पुस्तकों को सजाने और कुरान की सजावट का कार्य आरंभ हुआ और यह कला पन्द्रहवीं शती ईस्वी में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी।

बगदाद में भी, विधान-वेत्ताओं द्वारा अमान्य होने पर भी संगीत पर उसी प्रकार कोई प्रभाव नहीं पड़ा जैसा कि इसके पूर्व दमिश्क में नहीं पड़ा था। हारूँ रशीद के सुसंस्कृत और वैभवशाली दरबार ने संगीत-कला को उसी प्रकार संरक्षण प्रदान किया, जिस प्रकार विज्ञान एवं कला को। यहाँ तक कि उसका दरबार संगीत के कला-कारों के रत्न-समूह का केन्द्र बन गया था। वेतन-प्राप्त संगीतज्ञ अपने गायक दासों एवं दासियों के सहित, इस दरबार में फल-फूल रहे थे। इन लोगों से, संसार को उन अगणित काल्पनिक कथा-तरंगों के लिये, जो अरेबियन नाइट्स् के पृष्ठों में स्थान पाकर अमर हो गयी हैं, आधार प्रस्तुत किया। खलीफा के संरक्षण में गायकों के एक समारोह में ऐसे दो हजार गायकों ने भाग लिया था। इसी- खलीफा के पुत्र अल-अमीन ने अपने प्रासाद में एक रात एक ऐसे ही मनोरञ्जक समारोह का आयोजन किया था जिसमें प्रासाद में रहनेवाले समस्त स्त्री एवं पुरुष भी, प्रातःकाल तक स्वयं भी नाचते रहे।

हारूँ रशीद का एक आश्रित, जिसका नाम मुखारिक था, उस समय का एक अनोखा गायक हुआ है। वह एक दास था जिसको एक गायिका ने उसकी किशोरावस्था में क्रय कर लिया था जबकि वह अपने पिता की दूकान पर बैठा हुआ मधुर उँचे स्वर में, पुकार-पुकार कर मांस बेंच रहा था। आगे चल कर यह लड़का हारूँ रशीद के अधिकार में आया जब कि उसने उसे खरीद कर गुलामी से मुक्त कर दिया था। उसको एक लाख दीनार इनाम में देकर, उसको अपने (खलीफा के) बगल में बैठने का सम्मान दिया। एक रात मुखारिक ने दजला नदी के तट पर पहुँच कर अपना गाना छेड़ दिया। थोड़े ही समय में बगदाद की सड़कों पर मशालें इधर-उधर डोलती दृष्टिगोचर होने लगीं। बगदाद नगर-निवासी बेचैन होकर इस गायक की ओर खिंचते हुये चले आ रहे थे।

यह युग सुख एवं शान्ति का युग था। इसमें मुखारिक तथा अन्य ललित-कलाविदों ने खलीफा के साथ में अमिट ख्याति पायी थी। ये लोग केवल संगीतज्ञ ही न थे, अपितु प्रकृति ने इन्हें बुद्धिविलास एवं अद्भुत मेधा शक्ति भी प्रदान की थी। इन लोगों के पास चुने हुए अगणित कंठस्थ रोचक दास्तानों का खजाना था। ये लोग गायक, रागों के प्रवर्त्तक, कवि, एवं विद्वान और उस युग के वैज्ञानिक प्रगति के मर्मज्ञ भी थे। महत्त्व की दृष्टि से, इन गायकों के पश्चात् साज बजाने वालों की गणना होती थी। इन लोगों में आम तौर पर एक प्रकार के सितार (Lute) का अत्यधिक प्रचलन था। निम्नकोटि के वादक सारंगी (Viol) बजाया करते थे। इनके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पश्चात् गायिकाओं का स्थान था जो नियमतः पर्दों के पीछे बैठ कर गाया करती थीं। इस प्रकार की गायिकाएँ अन्तःपुर की शोभा का एक आवश्यक अंग बन गयी थीं और उनकी शिक्षा-दीक्षा और रख-रखाव ने एक महत्त्वपूर्ण व्यवसाय का रूप धारण कर लिया था। इस प्रकार की एक गायिका के लिए मिस्र के गवर्नर के एक दूत ने तीस हजार दीनार मूल्य लगाया था। बेजेण्टाइन के सम्राट् के राजदूत ने भी इतना ही मूल्य लगाया। और आगे चलकर खुरासान के शासक के एक दूत ने दस हजार दीनार और अधिक बढ़ा कर ४०००० में इस गायिका को क्रय करना चाहा। पर इस गायिका के स्वामी ने दो कदम और आगे बढ़ कर बेचने के स्थान पर उसे गुलामी से मुक्ति देकर, उससे विवाह कर लिया।

अब्बासियों के स्वर्ण-युग में यूनानी पुस्तकों के जो अनुवाद हुए, उनमें कुछ ऐसी पुस्तकें भी थीं जिनमें संगीत के विचारपूर्ण सिद्धांतों की कल्पना की गई थी। अरब लेखकों ने संगीत के सम्बन्ध में अपने प्रथम वैज्ञानिक विचार इन्हीं पुस्तकों से लिये थे और स्वर-सिद्धान्त के शारीरिक रचना और क्रिया सम्बन्धी तत्त्वों के विषय में शिक्षा भी इन्हीं से ग्रहण की थी। पर जहाँ तक संगीत के क्रियात्मक पक्ष का प्रश्न है, विशुद्ध अरबी आदर्श ही उनके समक्ष था। लगभग उसी युग में 'मुसीक़ी' का शब्द जो बाद में 'मुसिक़ा' हो गया था, यूनानी भाषा के म्युज़िक शब्द से लिया गया था और अरबी का प्राचीन शब्द 'ग़ोना' जो उस समय तक गीत एवं संगीत दोनों ही के लिए प्रयुक्त होता था, अब गाने के प्रायोगिक पक्ष के लिए निर्धारित कर दिया गया। इसके अतिरिक्त क़ितार (Guitar) और अरगन (Organ) जैसे बाजों के यूनानी नाम और ग्रीक उत्पत्ति के दूसरे पारिभाषिक शब्द भी अरबी भाषा में दृष्टि-गोचर होने लगे। इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है कि 'अर्गन' बाजा बेजेन्टाइनियों से लिया गया था।

दुर्भाग्य से संगीत-सम्बन्धी प्रायः सभी मौलिक ग्रन्थ नष्ट हो गये हैं। अरबी संगीत अपनी स्वर-लिपि और उसके दो अंग 'नग़म' (लय) तथा 'एक़ा' (ताल) सहित, जो केवल मौखिक रूप से व्यक्त किया जाता था, अब बिलकुल नष्ट हो गया है। आज के अरबी नगमे यद्यपि माधुर्य-रहित हैं, किन्तु वे लय-ताल से पूर्ण हैं। अरबी भाषा में शास्त्रीय संगीत पर जो कुछ पुस्तकें बच भी गयी हैं, इस युग का पाठक न तो भली भाँति उनकी व्याख्या ही कर सकता है, और न तो उनमें प्रयुक्त लय और तालों के नाम तथा वैज्ञानिक शब्दावली को ही समझ सकता है।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१४—विश्वरत्न कर्त्तबा (काडवा)

जिस समय मुस्लिम साम्राज्य की पूर्वी शाखा अपने स्वर्णयुग में पदार्पण कर रही थी, उसी समय स्पेन में उसकी सुदूरस्थ पश्चिमी शाखा भी इसी प्रकार के ऐश्वर्य का उपभोग कर रही थी। हमारे लिए यह युग अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि अरबी सभ्यता अधिकांशतः मुस्लिम स्पेन के ही द्वारा पश्चिम में पहुँची और मध्ययुग के आरंभ की ईसाई सभ्यता से घुल-मिल कर उसने उस सभ्यता को जन्म दिया जो हमें उत्तराधिकार में प्राप्त हुई है। पश्चिम की इस्लामी सभ्यता नवीं और ग्यारहवीं शती के बीच में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची किन्तु इसके संबन्ध में विचार करने के पहले हमें कुछ पीछे की कहानी, सन् ७५० ई० की ओर मुड़ना होगा।

जैसा कि हमने देखा है, सन् ७५० ई० में दमिश्क के अमवी वंश को अब्बासी परिवार ने गद्दी से हटा दिया था और हम यह भी देख चुके हैं कि अब्बासियों ने खलीफा के सिंहासन पर अधिकार पाते ही पराजित वंश के प्रत्येक व्यक्ति को, जो उनके हाथ आ सके, अत्यन्त निर्दयतापूर्वक मौत के घाट उतार दिया था।

उन कुछ लोगों में, जो अपनी प्राण-रक्षा कर सके थे, एक बीस-वर्षीय युवक अब्दुलरहमान भी था। यह आकर्षक युवक दुबला-पतला, लम्बा और गरुड़ के सदृश तीक्ष्ण मुखाकृति तथा लाल बालों वाला व्यक्ति था। उसमें असाधारण योग्यता और असीम साहस था। उसने स्पेन तक धावा किया और विजयी हो कर स्पेन पर अमवी वंश के शासन को, जो पूर्व में नष्ट हो चुका था, पुनः स्थापित किया।

उसके निकल भागने की कहानी बड़ी ही नाटकीय है। एक दिन जब वह एक बद्दूई (Bedouin) पड़ाव में दजला नदी के बाँयें तट पर ठहरा हुआ था, उसने कुछ घुड़सवारों को अब्बासियों का काला झण्डा लिये हुए अचानक आते देखा। उनको देखते ही अब्दुलरहमान अपने तेरह-वर्षीय भाई को लेकर नदी में कूद पड़ा। वह भाई, जो भलीभाँति तैरना नहीं जानता था, भयभीत हो गया और नदी के तट पर खड़े शत्रु चिल्ला कर जो आश्वासन दे रहे थे, उनको सुनने लगा। वे कह रहे थे कि, यदि तुम लौट आओ तो तुम्हें किसी भी प्रकार की हानि न पहुँचाई जायगी। वह बालक उनके कहने में आगया और वापस तैर आया। शत्रुओं ने उसे मार डाला। किन्तु बड़ा भाई आगे बढ़ता गया और नदी के दूसरे तट पर जा पहुँचा।

पैदल, एकाकी और निर्धन अब्दुलरहमान दक्षिण-पश्चिम की ओर बढ़ता गया तथा घोर कठिनाइयों का सामना करते हुए फिलिस्तीन पहुँचा। यहाँ उसे एक मित्र मिल गया और वे दोनो पश्चिम की ओर चल पड़े। उत्तरी अफ्रीका में वह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वहाँ के गवर्नर के हाथों कत्ल होते-होते बाल-बाल बचा। वह एक कबीले से दूसरे कबीले में मारा-मारा फिरता रहा। नये वंश के जासूस बराबर उसका पीछा कर रहे थे। पाँच वर्ष तक मारे-मारे फिरने के पश्चात् अन्त में वह स्यूटा (Ceuta) पहुँचा। वह दमिश्क के दसवें अमवी खलीफा का पौत्र था और उत्तरी अफ्रीका के उसी जिले में एक बर्बर परिवार में उसका ननिहाल था। ननिहाल पहुँचने पर उन लोगों ने उसे शरण दी।

स्पेन के दक्षिण में स्यूटा जलडमरू-मध्य के उस पार दमिश्क की सीरियन सेना पड़ाव डाले हुए पड़ी थी। अब्दुलरहमान ने लोगों से साँठ-गाँठ की और उन्होंने उसे अपना सरदार मान लिया। इसके पश्चात् दक्षिणी स्पेन में एक नगर के बाद दूसरा नगर उसके लिए अपना फाटक खोलता गया। पूरे स्पेन को जीतने में उसे कई वर्ष और लगे किन्तु उसका साहस कम न हुआ। बगदाद के अब्बासी खलीफा ने स्पेन के लिए एक गवर्नर को इसलिए नियुक्त किया कि वह अब्दुलरहमान के शासन से टक्कर ले। किन्तु दो वर्ष पश्चात् बगदाद के खलीफा को, अब्दुलरहमान की ओर से, उस गवर्नर का सिर, जिसे नमक तथा कपूर लगा कर सुरक्षित किया गया था और जो एक काले झण्डे एवं उसके नियुक्ति-पत्र (Diploma of Appointment) में लपेटा हुआ था, उपहार स्वरूप भेजा गया। खलीफा ने इस उपहार को देखते ही कहा कि, "ईश्वर की कृपा है कि उसने हमारे और ऐसे शत्रु के मध्य में एक समुद्र स्थापित कर दिया है।"

एक युद्ध में, जिसका वर्णन पश्चिमी साहित्य में अमर है, फ्रैंकों (Franks) के बादशाह शार्लीमान को भी अपने भयंकर शत्रु की असीम शक्ति का अनुभव हुआ। अब्बासी खलीफा के मित्र-राज्य होने के नाते शार्लीमान स्वाभाविक ही स्पेन के नये अमीर या सुल्तान (जैसा कि अब्दुलरहमान अपने आप को कहता था।) का शत्रु बन गया था। शार्लीमान ने सन् ७७८ ई० में अपनी सेना स्पेन की उत्तरी-पूर्वी सीमा से सरगोसा तक बढ़ा दी थी। किन्तु जब सरगोसा-निवासियों ने उसके लिए अपने फाटक बंद कर दिये और स्वयं उसके राज्य में उसके घरेलू शत्रु उठ खड़े हुए तो उसे पीछे हटना पड़ा। इस प्रकार पीछे हटने में उसे, पेरीनीज पहाड़ के तंग दर्रे से होकर जाते समय, बास्कू तथा अन्य पहाड़ी कबीलों ने उसकी सेना के पिछले भाग पर आक्रमण कर दिया। इस प्रकार उसको सेना के जन-धन की अपार क्षति उठानी पड़ी। इस युद्ध में जो सरदार मारे गये उनमें रोलान भी था। इस सरदार ने जिस वीरतापूर्ण ढंग से अपनी सुरक्षा की थी उसकी गाथा को 'चान्सन डि रोलैण्ड' शीर्षक कविता में अमरत्व प्रदान कर दिया गया है। यह फ्रान्सीसी साहित्य की उच्च कोटि की रचना ही नहीं, अपितु मध्ययुग के अद्भुत् महाकाव्यों में सर्वश्रेष्ठ समझी जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपने शत्रुओं को नीचा दिखाने के दौरान में अब्दुलरहमान ने बर्बरों की भली-भाँति अनुशासित एवं सुशिक्षित सेना तैयार कर ली थी जिसकी संख्या ४०००० से अधिक थी। वह यह अच्छी तरह जानता था कि उदार वेतन देकर सैनिकों की स्वामिभक्ति प्राप्त की जा सकती है। अभी तक शुक्रवार को खुतबे (जुमा की नमाज के समय का उपदेश) में अब्बासी खलीफा का नाम लिया जाता था किन्तु सन् ७७५ ई० में अब्दुलरहमान ने उस नाम का लिया जाना रोक दिया, किन्तु उसने स्वयं खलीफा की उपाधि नहीं धारण की। उसके वंश में अब्दुलरहमान तृतीय तक सबके सब अमीर ही कहलाते रहे, यद्यपि वे पूर्ण स्वतंत्र शासक थे। अब्दुलरहमान प्रथम के अधीन स्पेन वह प्रथम प्रान्त था जिसने इस्लाम के मान्य खलीफा के प्रभुत्व का जुवाँ अपने कन्धों से उतार फेंका था।

जब राज्य की स्थिति सुदृढ़ हो गयी और अस्थायी रूप से शान्ति स्थापित हो गयी तो अब्दुलरहमान ने उन कलाओं की ओर अपना ध्यान लगाया जो शान्ति के समय पनपती हैं। उसने इस क्षेत्र में भी अपने को उतना ही महान सिद्ध कर दिया जितना कि वह युद्ध-कला में सिद्ध हो चुका था। उसने अपने राज्य के नगरों को सुरम्य बनाया। उसने अपनी राजधानी में विशुद्ध जल प्रदान करने के लिए एक नहर खुदवायी। उसने नगर के चारो ओर एक शहरपनाह (चहारदीवारी) तथा अपने किसी पूर्वज के बनवाए हुये उत्तरी-पूर्वी सीरिया के प्रासाद के अनुकरण पर उसने अपने लिये कर्तबा के बाहर एक प्रासाद का निर्माण कराया और उसमें बाग भी लगवाया। अपने, इस मनोरंजन-निवास में पानी पहुँचाने के पश्चात् विदेशी पौधे जैसे शफ्तालू और अनार आदि लगवाये। इसमें खजूर का भी एक वृक्ष था। कहा जाता है कि स्पेन की भूमि पर यह प्रथम वृक्ष था जो सीरिया से लाया गया था। अब्दुलरहमान ने इस वृक्ष को सम्बोधित कर अपने वतन की याद में कुछ कोमल और भावुकतापूर्ण अत्यन्त सुन्दर पद्य कहे हैं।

अपनी मृत्यु से दो वर्ष पूर्व, सन् ७८८ ई० में अब्दुलरहमान ने कर्त्तबा की बड़ी मस्जिद की नींव डाली। यह मस्जिद मक्का और जेरूसलम की मस्जिदों के मुकाबले पर बनवायी गई थी। इस मस्जिद का पूर्ण निर्माण एवं उसका विस्तार उसके उत्तराधिकारियों ने किया और अत्यन्त शीघ्र ही यह मस्जिद पश्चिमी इस्लामी जगत् का पवित्र तीर्थ बन गयी। किन्तु सन् १२३६ ई० में ईसाइयों ने इस स्मारक को उसके विस्तृत प्रांगण तथा वैभवशाली स्तम्भों सहित एक गिरजाघर के रूप में परिवर्तित कर दिया। आज भी यह मस्जिद अपने प्रचलित नाम "ला मेजक्विटा" के नाम से विख्यात है। जुमा मस्जिद के अतिरिक्त अब्दुलरहमान ने गौडलक्विविर नामक नदी (यह अरबी नाम वादिल कबीर या महान नदी का बिगड़ा हुआ रूप है) के ऊपर एक पुल का भी निर्माण कराया था। आगे चल कर इस पुल में बढ़कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सत्रह मेहराबें हो गयीं। स्पेन में अमवी शासन के पवर्त्तकों की रुचि अपनी प्रजा की भातिक समृद्धि तक ही सीमित न रही अपितु उसने विभिन्न प्रकार से अरबों, सीरिया-निवासियों, बर्बरों, नोमेडियों, स्पेनी अरबों तथा गाथों—इन सबको मिला कर एक राष्ट्र बनाने का महान यत्न किया। पर इसमें उनको विशेष सफलता न हुई। कई मानों में उसने उस बौद्धिक जागरण के लिये आन्दोलन चलाया जिस के फलस्वरूप, नवीं एवं ग्यारहवीं शती के बीच विश्व के दो सांस्कृतिक केन्द्रों में से एक, इस्लामी स्पेन हो गया।

समस्त यूरोप में खलीफा अब्दुलरहमान तृतीय का दरबार सबसे अधिक वैभवशाली था। बैजन्तीनी सम्राट् तथा जर्मनी, इटली और फ्रान्स के बादशाहों के राजदूत उसके दरबार में नियुक्त थे। उसकी राजधानी कर्त्तबा, जहाँ की जन-संख्या लगभग पाँच लाख थी और जिसमें ७०० मस्जिदें तथा ३०० सार्वजनिक स्नानागार थे, के वैभव का स्थान बगदाद और कुस्तुन्तुनिया के बाद सर्वप्रथम था। नगर के उत्तर-पश्चिम में गौडलक्विविर नदी के तट पर सीरा-मोरेना की एक चोटी पर स्थित राजकीय प्रासाद में, ४०० कमरे थे जिनमें सहस्रों गुलाम एवं रक्षक रहा करते थे। कहा जाता है कि अब्दुलरहमान तृतीय की एक दासी बहुत सी सम्पत्ति छोड़ कर मरी थी। उसने मरते समय यह कहा था कि उसके धन को उन मुसलमान बन्दियों को मुक्त कराने में व्यय किया जाय जो ईसाइयों के बन्दीगृहों में बंद थे। जब इस बात पर पूर्ण विश्वास कर लिया गया कि ईसाइयों के बन्दीगृह में कोई मुसलमान नहीं है तो खलीफा ने सन् ९३६ ई० में अपनी एक अन्य दासी अल-ज़हरा के सुझाव पर इस वैभवशाली प्रासाद का निर्माण करवाया और उसी के नाम पर इस प्रासाद का नाम रखा। इस प्रासाद के लिए संगमरमर नोमेदिया और कार्थेज से लाया गया था। इसके स्तम्भ तथा हौज अपनी स्वर्ण-मूर्तियों के सहित, कुस्तुन्तुनिया से उपहारस्वरूप मिले अथवा मंगवाये गये थे। दस हजार कारीगर, डेढ़ हजार लद्दू जानवरों के साथ निरन्तर बीस वर्ष तक इस महल के निर्माण में लगे रहे। बाद के खलीफा ने भी इस महल की वृद्धि और उसकी सज-धज में अत्यधिक योग दिया। इस अल-ज़हरा के चारो ओर, अन्य मकान बनते गये; यहाँ तक कि यह महल एक शाही बस्ती के रूप में हो गया। इस नगर के अवशेष का कुछ अंश, सन् १९१० ई० में तथा उसके बाद की खुदाई में निकला जो आज भी देखा जा सकता है।

खलीफा ने 'अलजहरा' नामक महल की देख-रेख के लिए सलावी रक्षकों (Slavs) को नियुक्त किया था। इनकी संख्या ३७५० थी। यह खलीफा की एक लाख स्थायी सेना के सरदार थे। ये लोग सलावी कहलाते थे। सर्वप्रथम सलावी उन दासों एवं कैदियों को कहते थे जिन्हें जर्मन तथा अन्य लोग स्लैवोनिक कबीलों से पकड़ कर उनको अरबों के हाथ बेंच डालते थे। किन्तु आगे चल कर समस्त खरीदे हुए विदेशी दासों को सलावी कहने लगे। इनमें फ्रान्क,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गैलेशियिन, लम्बार्डों और इस प्रकार की जातियों के दास होते थे। साधारणतया उन्हें बचपन ही में प्राप्त कर अरब बना लिया जाता था। स्पेन के इन जाँनिसारियों*या ममलूकों की सहायता से खलीफा केवल आततायियों और डाकुओं पर ही नियंत्रण नहीं रखता था वरन् वह अरब अमीरों के प्रभाव को भी कम करता रहता था। उस समय कृषि एवं व्यापार की अत्यधिक उन्नति हुई और राज्य की आय के साधन कई गुना बढ़ गये। राजकीय आय ६४२५००० दीनार तक हो गयी थी। इसका तिहाई भाग सैनिक आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त होता था और एक तिहाई भाग सार्वजनिक निर्माण-कार्यों के लिए व्यय किया जाता था, शेष सुरक्षित रखा जाता था। कर्त्तवा को इससे पूर्व कभी भी ऐसी समृद्धि नहीं प्राप्त हुई थी। न अण्डलूसिया (स्पेन) कभी इतना समृद्धशाली हुआ और न तो स्पेन का राज्य इतना वैभवशाली ही हुआ। केवल एक व्यक्ति की असाधारण प्रतिभा के कारण इस प्रकार उन्नति हुई थी। यह व्यक्ति अच्छी खासी ७३ वर्ष की आयु का होकर मरा। कहा जाता है कि वह अपनी मृत्यु के पश्चात् एक लेख छोड़ गया था जिसमें यह लिखा हुआ था कि अपने सम्पूर्ण जीवन में शांति के केवल १४ दिन ही मुझे प्राप्त हुए हैं।

पूर्व एवं पश्चिम में इस्लामी जगत् किसी भी वंश के शासन के अन्तर्गत रहा हो पर उसका प्रभुत्व सदैव अस्थिर और डाँवाँडोल रहा है। अब्दुलरहमान प्रथम द्वारा प्रभुत्व स्थापित करने के बाद, अमवी वंश का शासन पूरे स्पेन पर आगे चलकर नाम मात्र को ही रह गया था। बल्कि जब इस वंश की अन्य महान विभूति अब्दुल-रहमान तृतीय सन् ९१२ ई० में सिंहासनारूढ़ हुआ तो उस समय गृह-युद्धों, कबीलों के विद्रोह और अमीरों की आम राजनीतिक अयोग्यता के फलस्वरूप स्पेन का सुसंगठित इस्लामी साम्राज्य घट कर कर्त्तवा और उसके आस-पास के क्षेत्र तक ही सीमित होकर रह गया था।

अब्दुलरहमान तृतीय ने भी अपने प्रसिद्ध पूर्वज (अब्दुलरहमान प्रथम) की भाँति अपनी युवावस्था में जब कि वह केवल तेईस वर्ष का था, शासन-सूत्र संभाला था और वह उसी की तरह तीक्ष्ण बुद्धि एवं दृढ़ सकल्प का युवक था। उसने साम्राज्य के खोये हुए सूबों को एक-एक करके नये सिरे से जीता। उसमें शान्ति स्थापित की और उनपर अत्यन्त सूझ-बूझ के साथ शासन किया। उसका शासन सन् ९१२ ई० से लेकर सन् ९६१ ई० लगभग ५० वर्ष तक चलता रहा। उस समय के लिए इतनी अवधि निस्सन्देह अत्यधिक थी। राजनीतिक दृष्टिकोण से इस समय की प्रधान विशेषता यह है कि अमीर अब्दुलरहमान ने अपने आपको अमीर के स्थान पर खलीफा घोषित किया। उसी के नाम से स्पेन में अमवी खिलाफत का काल आरंभ होता है। उसका

* (Janissaries)—जाँनिसार सेना का सैनिक जो तुर्की के सुल्तान का विशेष अंगरक्षक होता था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और उसके तत्काल बाद के उत्तराधिकारियों के शासन-काल में पश्चिम में मुस्लिमशासन शिखरोन्नति पर पहुँच चुका था। उसी समय अर्थात् दसवीं शती के आस-पास अमवी राजधानी कर्त्तबा, योरोप में एक सर्वाधिक सुसंस्कृत नगर माना जाने लगा। कुस्तुन्तुनिया और बगदाद के साथ संसार के तीन सांस्कृतिक केन्द्रों में इस नगर की गणना होती थी। इस नगर में ११३००० मकान, २१ उपनगर, ७० पुस्तकालय, बहुत सी पुस्तकों की दुकानें, मस्जिदें और महल थे। इस नगर को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो गयी थी और इसका नाम सुनकर यात्रियों के मन पर श्रद्धा और आदर की भावना तथा रोब उत्पन्न हो जाता था। यहाँ मीलों लम्बी पक्की सड़कें बनी हुई थीं, जिन पर आस पास के घरों का प्रकाश फैला रहता था, जबकि इस समय के ७०० वर्ष के बाद तक भी लन्दन नगर की किसी सड़क पर एक भी सार्वजनिक लैम्प नहीं था और पेरिस में तो और भी कई सदियों तक यह दशा रही कि वर्षाकाल में चौखट से बाहर पग निकालते ही घुटने तक पाँव कीचड़ में सन जाया करते थे। नार्डिक (Nordic) वहशियों (उत्तरी योरोप के जर्मन कबीलों) को अरब जिस दृष्टि से देखते थे, उसका अनुमान टोलिडो के एक विद्वान न्यायाधीश सईद के इस कथन से भली भाँति हो सकता है कि "चूँकि इन लोगों के सिरों पर सूर्य की किरणें सीधी नहीं पड़ती हैं, उनके देश की जलवायु शीतल और वायुमण्डल मेघाच्छन्न रहता है, इसलिए उनके स्वभाव भी ठंढे हो गये हैं। उनकी प्रकृति उद्धत, शरीर भारी-भरकम किन्तु मुखाकृति श्रीहीन, और उनके बाल लम्बे हो गये हैं। साथही उनमें बुद्धि-चातुरी एवं दूरदर्शिता का सर्वथा अभाव है और उन पर सदैव अज्ञान तथा मूर्खता छायी रहती है।" जब कभी भी लीयन, नावारा तथा बार्सीलोना के शासकों को किसी शल्य-चिकित्सक, शिल्पकार, संगीताचार्य, या पोशाक तैयार करने वाले की आवश्यकता होती थी तो वे कर्त्तबा के दरबार से ही इसके लिए निवेदन करते थे। इस मुस्लिम राजधानी की ख्याति जब सुदूर जर्मनी में पहुँची तो वहाँ की एक सैक्सन भिक्षुणी ने उसको "विश्व के रत्न" की उपाधि प्रदान की।

खलीफाओं के शासनकाल में स्पेन योरोप का सर्वाधिक समृद्धिशाली और अत्यधिक घना बसा हुआ देश समझा जाता था। इसकी राजधानी में लगभग १३००० जुलाहे बुनकर रहते थे। चमड़े का व्यवसाय भी उन्नति पर था। स्पेन से ही चमड़ा सिझाने और उस पर बेल-बूटे बनाने की कला मोरक्को पहुँची थी। इन्हीं दो देशों से यह कला फ्रान्स और इंगलैंड पहुँची। इसका प्रमाण 'कार्डोवन' 'कार्ड वेनर' और 'मोरक्को'—इन शब्दों से मिलता है जिनका प्रयोग स्पेन के चमड़े के लिए होता है। ऊनी एवं रेशमी वस्त्र कर्त्तबा के अतिरिक्त मलागा (Malaga), अलमेरिया तथा अन्य केन्द्रों में भी बुने जाते थे। रेशम के कीड़ों के पालन पर आरंभ में चीनियों का एकाधिकार था। मुसलमानों ने इनका स्पेन में प्रचार किया और यहाँ इस व्यवसाय ने खूब उन्नति की। अलमेरिया में काँच और पीतल का सामान तैयार होता था। वेलेंशिया का पैटर्ना नामक नगर कुलाल-विज्ञान (कुम्हारी) का केन्द्र था। जेयान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Jaen और अलगर्व (Algarve) सोना-चाँदी की खानों, कर्त्तबा लोहा तथा सीसा की खानों और मलागा माणिक्य की खानों के लिए प्रसिद्ध था। दमिश्क की भाँति टोलेडो भी समस्त विश्व में अपनी तलवारों के लिए प्रसिद्ध था। लोहे और अन्य धातुओं पर सोने एवं चाँदी से काम बनाने की कला स्पेन में दमिश्क से आई और स्पेन तथा योरोप के अन्य केन्द्रों में भी इसकी उन्नति हुई। आज भी भाषा की वंशानुगत सम्पत्ति में दमिश्क के नाम पर दमैसीन तथा दमस्कीन जैसे शब्द भाषा में विद्यमान हैं।

स्पेन के अरबों ने पश्चिमी एशिया में प्रचलित खेती के तरीकों का स्पेन में प्रचार किया। इन लोगों ने वहाँ नहरें खोदीं, अंगूर के बाग लगाये, और दूसरे पौधों एवं फलों के साथ-साथ चावल, खुबानी, शफ्तालू, अनार, नारंगी, गन्ना, कपास और केशर का प्रचार किया। प्रायद्वीप के दक्षिणी-पूर्वी मैदानों को प्रकृति की ओर से विशेष रूप से उत्तम जलवायु एवं भूमि मिली हुई है। यहीं पर ग्रामीण और नागरिक कार्य-कलापों के महत्वपूर्ण केन्द्र विकसित होते रहे हैं। यहाँ गेहूँ तथा अन्य अनाजों के साथ जैतून तथा अन्य सूखे मेवों की भी खेती करने वाले कृषक, जमीदारों से बटाई पर भूमि लिया करते थे।

कृषि का यह विकास मुस्लिम स्पेन के वैभवों में से एक है और यहाँ की भूमि के लिए वह अरबों का एक अमिट उपहार है। स्पेन के बागों में आज भी "मूरों" की विशिष्ट बाग़बानी की छाप है। यहाँ के प्रसिद्ध बागों में एक बाग़ 'जेनरेलिफ' है। यह शब्द अरबी शब्द "जन्नुतुल अरीफ" का विकृत रूप है जिसका अर्थ है "दर्शकों का वैकुंठ"। यह बाग तेरहवीं शताब्दी की यादगार है, जिसका उद्यान-भवन 'अलहमरा' के बाहरी भवनों में से एक था। यह बाग अपनी विस्तृत छाया, झरनों और मन्द समीर के लिए अद्वितीय था। एक रंगभूमि के मञ्च के रूप में निर्मित कर, इसको ऐसे स्रोतों से सींचा जाता था जो अनेक झरनों का रूप धारण कर फूलों, कुञ्जों एवं झाड़ियों के मध्य विलीन हो जाया करते थे। आज भी इस बाग में थोड़े से विशाल सरों के वृक्ष और मेंहदी के तरु खड़े हुए उस युग का स्मरण कराते हैं।

मुस्लिम स्पेन की औद्योगिक एवं कृषि सम्बन्धी उपज इसकी आवश्यकता से अधिक हुआ करती थी। सेविले स्पेन का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह है जहाँ से रुई, जैतून, और तेल बाहर भेजे जाते थे। मिस्र से वस्त्र एवं दास, तथा योरोप और एशिया से गायिकाओं का आयात होता था। मलागा और जेयान के बन्दरगाहों से जो वस्तुएँ जाया करती थीं, उनमें केसर, अंजीर, संगमरमर और शक्कर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सिकन्दरिया तथा कुस्तुन्तुनिया के द्वारा स्पेन की उपज ने हिन्दुस्तान और मध्यएशिया जैसे दूरस्थ क्षेत्रों में अपना बाजार पैदा कर लिया था। मक्का, बगदाद और दमिश्क से, विशेषरूप से, बड़े अच्छे पैमाने पर व्यापार होता था। वर्तमान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काल की अन्तर्राष्ट्रीय पोत-संचालन की शब्द-सूची में ऐसे शब्दों की संख्या कम नहीं है, जिनसे ज्ञात होता है कि पूर्वी अरबों को समुद्री व्यापार में प्राधान्य प्राप्त था। ये अरबी से निकले हुए शब्द इस प्रकार हैं—

एडमिरल, आर्सिनल, एवरेज, केबुल, और शैलप (Shallop)

शासन के पास बाक़ायदे एक डाक-विभाग था। उसने अपने सिक्के पूर्वी सिक्कों के आदर्श पर ढलवाये थे। सोने का सिक्का दीनार और चाँदी का दिरहम कहलाता था। उत्तरी ईसाई राज्यों में अरबों के सिक्के चलते थे और लगभग ४०० वर्ष तक इनमें अरबी या फ्रान्सीसी सिक्कों के अतिरिक्त और कोई सिक्का प्रचलित न था।

इस काल का वास्तविक वैभव, राजनीतिक क्षेत्र को छोड़ कर अन्य क्षेत्रों में दृष्टि-गोचर होता है। अब्दुलरहमान तृतीय का उत्तराधिकारी अल हकम स्वयं बड़ा ही विद्वान और विद्या का बड़ा ही आश्रयदाता था। उसने विद्वानों को बड़ी ही अच्छी-अच्छी वृत्तियाँ प्रदान कीं और राजधानी में २७ ऐसे विद्यालय खोले जिनमें निःशुल्क शिक्षा दी जाती थी। इसके समय में कर्त्तबा-विश्वविद्यालय को, जो अब्दुलरहमान तृतीय द्वारा निर्मित जुमा मस्जिद में स्थापित किया गया था, संसार की शैक्षिक संस्थाओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त हो गया था। यह विश्वविद्यालय काहिरा के अल-अज़हर विश्वविद्यालय और बगदाद के निजामिया विश्वविद्यालय से आगे बढ़ गया था। यहाँ केवल स्पेन ही के मुसलमान और ईसाई छात्र शिक्षा ग्रहण करने नहीं आते थे वरन् योरोप, अफ्रीका, तथा एशिया आदि से भी विद्यार्थी यहाँ आने लगे थे। अल-हकम ने मस्जिद का विस्तृत किया और उसी में विश्वविद्यालय की स्थापना की। उसमें पानी पहुँचाने के लिए सीसे के नलों का प्रबन्ध किया और बैजिन्तीनी कलाकारों द्वारा लाये हुए पच्चीकारी के सामान से सुसज्जित किया। उसने विश्वविद्यालय में कार्य करने के लिए पूर्व से प्राध्यापकों को बुलाया और उनके वेतन के लिए बहुत सी जायदाद नियत कर दी।

विश्वविद्यालय के अतिरिक्त, कर्त्तबा नगर में एक उच्च कोटि का पुस्तकालय भी था। खलीफा हकम पुस्तकों का अत्यन्त प्रेमी था। उसके एजेंट सिकन्दरिया, दमिश्क और बगदाद की पुस्तकों की दुकानों को टटोलते रहते थे जिससे वे पुस्तकें खरीदें या पाण्डुलिपियों की प्रतियों को प्राप्त करें। इस प्रकार से अलहकम ने लगभग ४ लाख पुस्तकें एकत्र कर ली थीं। इन पुस्तकों के नाम ४२ जिल्दों की पुस्तक-सूची में दर्ज थे। प्रत्येक में बीस पृष्ठ केवल काव्य ग्रन्थों के लिए ही होते थे। मुसलमान खलीफाओं में अल-हकम सम्भवतः सर्वाधिक विद्वान खलीफा हुआ है और वह इनमें से अनेक पुस्तकें स्वयं भी पढ़ा करता था। अनेक पाण्डुलिपियों के हाशियों पर उसने टिप्पणियाँ भी लिखी हैं जिनके कारण भावी पुस्तक-संग्रह करने वालों की दृष्टि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में इन पाण्डुलिपियों का मूल्य अत्यधिक बढ़ गया है। इसने 'आग़ानी' की प्रथम प्रति प्राप्त करने के लिए उसके लेखक अल-अस्फहानी के पास एक हजार दीनार भेजे थे। अस्फहानी अमवी वंश का था और ईराक में उस समय अपनी पुस्तक की रचना कर रहा था। उस समय स्पेन का सामान्य सांस्कृतिक स्तर इतना ऊँचा हो गया था कि हालैंड के प्रसिद्ध विद्वान डोज़ी ने बड़े आवेश में आकर यहाँ तक लिख दिया कि "स्पेन का प्रायः प्रत्येक व्यक्ति लिखना-पढ़ना जानता है।" और यह उस समय की बात है कि जब ईसाई योरोप में शिक्षा का प्रारंभ ही हुआ था और वह भी गिरजाघर के कुछ पादरियों तक ही सीमित था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१५—पश्चिम को अरबों की देन

मुस्लिम स्पेन के एक महाविद्यालय के द्वार पर एक प्रिय लेख में इस प्रकार खुदा हुआ है,—"संसार केवल चार वस्तुओं पर आधारित है—(१) आलिमों का इल्म (ज्ञान), (२) महापुरुषों की न्याय-परायणता, (३) धर्मात्माओं की प्रार्थनाएँ, और (४) वीरों का पराक्रम।"

यह महत्त्वपूर्ण बात है कि मुसलमानों के आदर्शों के विषय में इस योरोपीय उल्लेख में ज्ञान को प्रथम स्थान दिया गया है। अरबों की सैनिक शक्ति ने पश्चिमी जगत पर अपनी वीरता का अत्यधिक प्रभाव डाला था; पर यह प्रभाव टिकाऊ न रहा। यद्यपि अरबों का धर्म योरोपीय विचारधारा को कभी अधिक प्रभावित न कर सका और अरबों का न्याय भी थोड़ा ही प्रभाव डाल सका। किन्तु मुस्लिम-ज्ञानपत्त ने पश्चिमी जगत् की विचार-धारा को अनेक स्थलों पर प्रभावित किया। मध्ययुगीन योरोप के बौद्धिक इतिहास में मुस्लिम स्पेन ने एक उज्ज्वलतम् पाठ लिखा है। आठवीं शती के मध्य से लेकर तेरहवीं शती के प्रारंभ तक, जैसा कि हम इस के पूर्व पढ़ चुके हैं, अरबी भाषाभाषी ही सारे विश्व में संस्कृति एवं सभ्यता का प्रकाश फैलाने वालों में प्रमुख थे। अरबी ही वह भाषा है जिसके माध्यम से प्राचीन विज्ञान और दर्शन पुनर्जीवित और समुन्नत हो कर पश्चिमी योरोप में प्रसारित हुये और वहाँ के बहुमुखी जागरण के निमित्त बने। मुस्लिम स्पेन का सबसे बड़ा विद्वान और महान् विचारक अली इब्न हज्म हुआ है। यह सन् ९९४ ई० से १०६४ ई० तक जीवित रहा। इसकी गणना इस्लाम के ऐसे दो-तीन लेखकों में होती है जिनका मस्तिष्क अत्यन्त उर्वर था और जिन्होंने अगणित पुस्तकों की रचना की है। जीवनी-लेखकों ने इतिहास, धर्मशास्त्र, तर्कशास्त्र, काव्य एवं अन्य विषयों पर लगभग ४०० पुस्तकों का रचयिता उसको माना है। इसकी उपलब्ध पुस्तकों में सर्वाधिक मूल्यवान वह पुस्तक है जिसने उसको धर्मों की तुलनात्मक समीक्षा का प्रथम विद्वान होने का गौरव प्रदान किया है। इस पुस्तक में इब्न-हज्म ने बाइबिल के उद्धरणों की उन उलझनों की ओर संकेत किये हैं, जिनकी ओर सोलहवीं सदी में उच्च कोटि की आलोचना का जन्म होने के पूर्व तक किसी का ध्यान भी नहीं गया था।

तेरहवीं शती में पश्चिमी योरोप में प्रचलित गद्य में दन्तकथाएँ और उपाख्यान, तथा पूर्वकालीन अरबी भाषा के कहानी-साहित्य में स्पष्ट समानता दिखाई देती है। और ये अरबी कहानियाँ स्वयं भारतीय एवं ईरानी कहानियों से ली गयी थीं। 'कलीला व दिमना' (Kalilah-wa-Dimnah) की मनोहर कहानियों का अनुवाद कैस्टिले तथा लियन के बुद्धिमान बादशाह अल्फान्सू (Alfonso the

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Wise— १२५२ से १२८४) के लिए स्पेन की भाषा में किया गया था। इसके कुछ समय पश्चात् एक यहूदी ने, जो नया ईसाई हुआ था, इसका अनुवाद लैटिन भाषा में किया। इन किस्सों का फारसी से फ्रान्सीसी भाषा में अनुवाद, ला-फाण्टेन [La-Fontaine] के लिये एक साधन साबित हुआ। ऐसा कवि ने स्वयं स्वीकार किया है। मक़ामा (Maqamah) अनुप्रास तथा अलंकारयुक्त गद्य-काव्य में लिखा गया है, जिसमें नाना प्रकार के अद्भुत शब्द-विन्यास का प्रयोग है। इसका उद्देश्य यह है कि उसके नायक एक वीर सवार की साहसिक कहानी के द्वारा कुछ नैतिक शिक्षा दी जाय। इस मक़ामा तथा स्पेन के उन समुद्री लुटेरों सम्बन्धी उपन्यासों में बड़ी समानता पायी जाती है। मध्ययुगीन योरोप के साहित्य पर अरबी भाषा का सबसे बड़ा प्रभाव उसके सौन्दर्य और लालित्य का पड़ा जिसके फलस्वरूप पश्चिमी कल्पना संकीर्ण रूढ़िवादी दायरे से मुक्त हो गई। स्पेन की साहित्यिक कल्पना अरबी आदर्शों से प्रभावित है। सरवान्टेस की डान क्युक्जोट (Cervantes' Don Quixote) नामक पुस्तक की वाक्चातुरी में भी यह रंग दिखाई देता है। इस पुस्तक का लेखक एक बार अल्जीरिया में गिरफ्तार हो गया था और उसने उपहास रूप में ही यह प्रसिद्ध कर दिया था कि इस पुस्तक का मूल अरबी भाषा में है।

जहाँ कहीं भी और जब कभी भी अरबी भाषा का प्रचार हुआ, काव्यमय रचनाओं के प्रति अत्यधिक जोश उत्पन्न हुआ। असंख्य पद्य एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचते और छोटे-बड़े सभी उनको पसन्द करते थे। शब्दों की सुन्दरता एवं उनकी स्वर-माधुरी से विमुग्ध होने का अरब भाषा-भाषियों का विशेष स्वभाव स्पेन की भूमि पर भी प्रत्यक्ष हुआ। अमवी वंश का प्रथम बादशाह और उसके अनेक उत्तराधिकारी भी कवि थे। अधिकांश बादशाहों ने अपने दरबारों में राजकवि नियुक्त कर रखे थे जिनको वे अपनी युद्ध-यात्राओं में सदैव अपने साथ रखते थे। सिविले नगर को गर्व था कि वहाँ अन्य नगरों की अपेक्षा प्रतिभावान और जोशीले कवि कहीं अधिक संख्या में थे। किन्तु कर्त्तबा में काफी पहले ही कविता का दीपक प्रज्ज्वलित हो चुका था, और बाद में यह दीपक ग्राएडा में उस समय तक प्रकाशित होता रहा जब तक यह नगर इस्लाम का गढ़ बना रहा।

इब्न जैदून (१००३ से १०७१ ई०) एक महत्त्वपूर्ण और विलक्षण कवि हुआ है। इसका सम्बन्ध एक भद्र अरब परिवार से था। आरंभ में यह कर्त्तबा के अल्प-जन-शासित (Oligarchy) राज्य के मुखिया का विश्वस्त प्रतिनिधि था। इसके पश्चात् यह पदच्युत कर दिया गया। शायद यह घटना खलीफा की लड़की अल-वल्लादा से उत्कट प्रेम करने के कारण घटी थी। अल-वल्लादा भी कवयित्री थी। कई वर्ष तक कैद और देश-निकाला के पश्चात् वह मुख्य मंत्री

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और सेनापति इन दोनो पदों पर फिर नियुक्त हुआ और 'दो वजारत वाले' अर्थात् तलवार और कलम दोनो के मंत्रित्व की उपाधि उसको प्रदान की गई। सुन्दरी एवं प्रतिभासम्पन्न अल-वल्लादा की सन् १०८७ ई० में मृत्यु हो गयी। उसके आकर्षक व्यक्तित्व एवं साहित्यिक प्रतिभा दोनो ही की समान ख्याति थी। इस प्रकार उसको स्पेन की 'सैफो' (Sappho) कहा जा सकता है। ऐसा जान पड़ता है कि स्पेन में अरबों की औरतों में कविता एवं साहित्य के प्रति विशेष अनुराग तथा क्षमता थी।

परम्पराओं के बन्धन से किसी सीमा तक मुक्त, स्पेन की अरबी कविता ने नये-नये छन्दों के रूपों को ग्रहण किया और प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति उसमें लगभग वैसा ही अनुराग उत्पन्न हुआ जैसा कि आधुनिक कविता में पाया जाता है। यह कविताएँ अपने अपने छोटे-छोटे आल्हों और प्रेम-गीतों के द्वारा उन कुतूहलपूर्ण कल्पनाओं को व्यक्त करती थीं जिनमें मध्ययुगीन वीरता की झलक रहती थी। संगीत एवं गीत ने प्रत्येक स्थान पर कविता के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित किया और इसे सदैव बनाये रखा।

सामान्य रूप से अरबी कविता, तथा विशेष कर मधुर लय में गाई जाने योग्य कविताओं ने देशवासी ईसाइयों की प्रशंसा अर्जित की और इसी ने ईसाइयों को अरबी साहित्य को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया। इन गीतों की दो शैलियाँ विकसित हो कर कैस्टिलेन की व्यापक पद्य-शैली—विलेन्सीको (Villancico) के रूप में प्रकट हुईं। यह ईसाई प्रार्थनाओं और हजरत ईसा के जन्म के अवसर पर कहे जाने वाले पद्यों में प्रयुक्त होती थी।

स्पेन की भाषा में आध्यात्मिक प्रेम की साहित्यिक कल्पना का प्रत्यक्ष रूप, जो आठवीं शती में आरम्भ हुआ था, उस पर अरबी कविता की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है। ग्यारहवीं शती के अन्त में, दक्षिणी फ्रान्स के, आरम्भ के प्रेमातुर कवि अपनी मनमौजी कल्पनाओं के खजाने के साथ जोर-शोर से सामने आते हैं। मध्ययुगीन शृंगारी कवियों, जो बारहवीं शती में हुए थे, ने अपने समकालीन दक्षिणी 'ग़ज़ल-सिंगर' (गजल-गायकों) का अनुकरण किया। अरबी अनुकरण पर ही, दक्षिणी-पश्चिमी योरोप में नायिका-सम्प्रदाय (Cult of The Dame) की सहसा उत्पत्ति हुई। योरोप के प्रारम्भिक साहित्य की सर्वोत्कृष्ट स्मृति 'चान्सन डि रोलाँ' की रचना सन् १०८० ई० से पूर्व हुई थी। जिस प्रकार होमर के पद्यों से यूनान के इतिहास के आरम्भ की जानकारी होती है, उसी प्रकार 'चान्सन डि रोलाँ' का रचना-काल भी पश्चिमी योरोप की उस नवीन सभ्यता के आरम्भ का आभास देता है, जो मुस्लिम स्पेन के साथ सैनिक संघर्ष के फलस्वरूप उत्पन्न हुई।

जैसा कि हम देख आये हैं, स्पेन में प्रारम्भिक शिक्षा चारो ओर फैली हुई थी और समस्त इस्लामी देशों की भाँति उसकी नींव कुरान पढ़ने-लिखने और अरबी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्याकरण तथा कविता के अध्ययन पर डाली गयी थी। पढ़े-लिखे समाज में स्त्रियों की जो स्थिति थी, उससे यह प्रमाणित होता है कि मुस्लिम स्पेन में उन सिद्धान्तों पर बहुत कम अमल होता था, जिनमें स्त्रियों को पढ़ने-लिखने की मनाही थी। उच्च शिक्षा की नींव कुरान की टीकाओं, धर्मशास्त्र, दर्शन, अरबी व्याकरण, कविता, कोष, इतिहास, और भूगोल पर डाली जाती थी। अनेक प्रमुख नगरों में ऐसी संस्थाएँ थीं जिन्हें विश्वविद्यालय की संज्ञा प्रदान की जा सकती है। इनमें कर्त्तबा, सेविले, मलागा (Malaga) और ग्राण्डा के विश्वविद्यालय अत्यन्त उच्च कोटि के थे। कर्त्तबा के विश्वविद्यालय में धर्मशास्त्र और विधिशास्त्र के अतिरिक्त खगोल-विज्ञान, गणित, और चिकित्साशास्त्र के अलग-अलग विभाग थे। इस विश्वविद्यालय में सहस्रों विद्यार्थी विद्याध्ययन करते थे और यहाँ की उपाधियाँ शासन के सर्वोत्कृष्ट पदों को प्राप्त करने के लिए सर्वोपरि मान्य समझी जाती थीं। ग्राण्डा विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में धर्म-शास्त्र, विधिविज्ञान, चिकित्साविज्ञान, रसायनशास्त्र, दर्शनशास्त्र तथा खगोल-विज्ञान सम्मिलित थे। कैस्टीलियन (Castilian) तथा अन्य विदेशी छात्र इस संस्था में बड़े प्रेम से पढ़ने के लिए आते थे।

विश्वविद्यालयों के साथ पुस्तकालय भी फल-फूल रहे थे। कर्त्तबा का शाही पुस्तकालय इनमें सबसे बड़ा और अच्छा पुस्तकालय था। बहुत से लोगों के पास, जिनमें कुछ औरतें भी थीं, अनेक निजी पुस्तकालय होते थे। राजनीतिक सभाएँ, तथा नाट्यशालाएँ यूनान और रोम के जीवन की विशेषताएँ थीं। इस्लामी जीवन में इनको कोई उचित स्थान न प्राप्त हो सका था। इसलिए इस्लामी जीवन ने केवल पुस्तकों को ही ज्ञानार्जन का एक मात्र साधन बनाया।

जैसा कि हम बगदाद के अध्ययन में देख चुके हैं, वहाँ कागज का व्यवसाय पर्याप्त मात्रा में उन्नति कर चुका था। इस्लाम की योरोप को जो देन हैं उनमें से प्रमुख एक यह भी है कि उन्होंने कागज निर्माण-कला का योरोप में प्रचार किया। स्पेन में स्थानीय ढंग से कागज बनाया जाता था। और इसीलिये यहाँ पर पुस्तकें अत्यधिक संख्या में तैयार की जा सकीं। कागज के व्यवसाय के बिना कभी भी यह कार्य सम्भव नहीं हो सकता था। मोरक्को ने कागज के व्यवसाय को पूर्व से सीखा और बारहवीं शती के मध्य में यह व्यवसाय यहाँ से स्पेन में आया। अंग्रेजी भाषा में इस ऐतिहासिक तथ्य का साक्षी एक शब्द 'रीम' विद्यमान है। यह शब्द प्राचीन फ्रान्सीसी शब्द Rayme से लिया गया है। फ्रान्सीसी भाषा ने यह शब्द स्पेन की भाषा के रेज्मा(Resma) शब्द से लिया है। और स्वयं स्पेन की भाषा ने यह शब्द अरबी 'रेज्मह' से प्राप्त किया है जिसका अर्थ अरबी में 'गठरी' होता है। स्पेन के पश्चात्, कागज-निर्माण का व्यवसाय सन् १२७० ई० के आस-पास मुस्लिम प्रभाव के परिणामस्वरूप सम्भवतः सिसिली से आकर इटली में पनपा। कुछ लोगों का मत है कि फ्रान्स में कागज बनाने के कारखाने सबसे पहले क्रूसेडर्स

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ने स्थापित किये थे,। किन्तु तथ्य तो यह है कि फ्रान्स को यह स्पेन की देन है। इन देशों ने कागज-उद्योग को समस्त योरप में फैला दिया। अब्दुलरहमान का एक सचिव अपने घर पर सरकारी पत्र-व्यवहार को लिखा करता था। और उसकी अधिक प्रतियाँ तैयार कराने के लिए एक विशेष कार्यालय में, जो मुद्रण का लीथो (Lithographing) द्वारा एक प्राचीन रूप था, भेज दिया करता था। तदनन्तर वहाँ से विभिन्न राजकीय प्रतिनिधियों के पास उसकी प्रतियाँ भेज दी जाती थीं।

स्पेन में इस्लामी साम्राज्य के पतन के पश्चात् फिलिप द्वितीय (१५५६-१५६८) और उसके उत्तराधिकारियों ने जो अवशिष्ट पुस्तकें अरबी पुस्तकालयों से एकत्र की थीं उनकी संख्या लगभग २००० थी। इन्हीं पुस्तकों पर स्कोरियाल (Escurial) पुस्तकालय की बुनियाद पड़ी। यह पुस्तकालय मेड्रिड (Madrid) नगर से थोड़ी ही दूर पर आज भी विद्यमान है। इन पुस्तकों के संग्रह करने की कहानी बड़ी रोचक है। कहते हैं कि सत्रहवीं शती के आरम्भ में, मोरक्को का सुल्तान अपने सामान के साथ कहीं भाग रहा था, उसने अपना पुस्तकालय भी एक जहाज पर लदवा दिया लेकिन इस जहाज के कप्तान को पूरी मजदूरी पेशगी नहीं मिल पाई, इसलिए उसने इन पुस्तकों को उनके गन्तव्य स्थान पर उतारने से इनकार कर दिया और मार्सेलीज जाते हुए यह जहाज समुद्री डाकुओं के हाथ लगा। इन लूट की पुस्तकों की संख्या लगभग तीन-चार हजार थी। फिलिप तृतीय की आज्ञा से इस लूट की सम्पत्ति को स्कोरियाल के पुस्तकालय में जमा कर दिया गया और इस प्रकार यह पुस्तकालय अरबी पाण्डुलिपि का सर्वोत्तम पुस्तकालय बन गया।

पश्चिमी मुसलमानों ने साहित्य और इतिहास के क्षेत्र में जो कमाल दिखाये हैं, उनमें दो मित्रों-इब्नुल खतीब और इब्ने खल्दून का सर्वोत्तम स्थान है। सन् १३७१ई० में इब्नेखतीब जो उस समय वजीर था, दरबार के षड्यंत्रों से तंग आकर ग्रणडा से भाग खड़ा हुआ और इसके तीन वर्ष पश्चात् फैस Fas में एक घरेलू झगड़े के परिणामस्वरूप गला घोंट कर मार डाला गया। इसकी मृत्यु से अरब-स्पेन का न सही, लेकिन ग्राणडा का अन्तिम महत्त्वपूर्ण लेखक, कवि एवं राजनीतिज्ञ समाप्त हो गया। उन ६० अद्वितीय पुस्तकों में से, जो इब्ने खतीब ने कविता, इतिहास, भूगोल, चिकित्सा तथा दर्शनशास्त्र पर लिखीं, लगभग एक तिहाई पुस्तकें प्राप्य हैं। इन बची हुई पुस्तकों में अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक 'ग्राणडा का विस्तृत इतिहास' है।

इब्नेखल्दून की सर्वाधिक ख्याति उसके 'मुकद्दमा' नामक रचना के कारण है, जो इतिहास की एक प्रकार की भूमिका है। इस 'मुकद्दमा' में, इब्ने खल्दून ने ऐतिहासिक विकास के उस सिद्धान्त को सब से पहले विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है, जिसमें भौतिक तथ्य, जलवायु तथा भूगोल के अतिरिक्त नैतिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा इतिहास के विकास पर प्रभाव पड़ने की चर्चा है। इब्ने खल्दून वह प्रथम लेखक है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिसने राष्ट्रीय-उत्थान एवं पतन के नियमों का ज्ञान प्राप्त करने और उनको सिद्धान्तरूप में व्यवस्थित करने का यत्न किया है। इसलिए, जैसा कि इब्ने खल्दून की स्वयं गर्वोक्ति है, उसको इतिहास के यथार्थ रूप और उसके विस्तार का ज्ञाता अथवा कम से कम उसको सामाजिक विज्ञान का वास्तविक प्रवर्तक कहा जा सकता है। यह तथ्य है कि इब्ने खल्दून से पूर्व, इतिहास पर ऐसा विस्तृत एवं दार्शनिक दृष्टिकोण, योरोप वालों का तो कहना ही क्या है, किसी अरब लेखक ने भी नहीं अपनाया था। समस्त आलोचनाओं का सार यह है कि इब्नेखल्दून कभी इस्लाम में सर्वप्रधान ही नहीं, अपितु समस्त महानतम् ऐतिहासिक तत्वज्ञानियों में से एक था। इसका सन् १४०६ ई० में देहान्त हो गया।

अरबों के भौगोलिक अध्ययन का प्रभाव पश्चिम पर बहुत कम पड़ा है। किन्तु इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि पृथ्वी के गोल होने के प्राचीन सिद्धान्त को अरबों ने जीवित रखा। हम इसके पूर्व हिन्दुओं की इस विचारधारा की ओर संकेत कर चुके हैं कि ज्ञात पृथ्वी के गोलार्ध का एक केन्द्र (World Cupola) है, जो चारों ओर से समान दूरी पर स्थित है। इसको "एरिन" कहते हैं। इससे सम्बन्धित सिद्धान्त का सन् १४१० ई० में मुद्रित एक लैटिन पुस्तक में उल्लेख है। और इसी के आधार पर कोलम्बस ने वह सिद्धान्त प्राप्त किया जिसके बल पर उसे विश्वास होगया कि पृथ्वी एक नासपाती के आकार की है और पश्चिमी गोलार्द्ध में भी 'एरिन' के समान वैसा ही एक उच्च केन्द्र है।

मुसलमानों के खगोल-विज्ञान एवं गणित के क्षेत्र में भी बहुत से नये विचारों के योगदान से पश्चिमी ज्ञान-भण्डार में वृद्धि हुई। स्पेन में खगोल-विज्ञान का अध्ययन दशवीं शती के उत्तरार्द्ध में परिश्रम और तत्परता से, कर्त्तबा, सिविले और टोलेडो के अधिकारियों के विशेष संरक्षण में हुआ। इस्लामी स्पेन के अधिकांश नक्षत्र-विज्ञान-वेत्ताओं का यह विश्वास था कि जन्म से लेकर मरण पर्यन्त जो बातें होती हैं, वे प्रायः नक्षत्रों के प्रभावों का ही परिणाम होती हैं। इनके प्रभावों का अध्ययन अर्थात् ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से समस्त संसार में स्थानों की स्थिति तथा उनके अक्षांश और देशान्तर के सम्बन्ध में वास्तविक निर्णय करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इस प्रकार फलित ज्योतिष, खगोल (गणित-विज्ञान) की जननी हो गयी। लैटिन-पश्चिम में पूर्वी 'फलित' एवं 'गणित' ज्योतिष के प्रति प्रेरणा स्पेन के ही द्वारा प्राप्त हुई। स्पेन में ही मुसलमानों के प्रसिद्ध खगोल-ग्रन्थों के अनुवाद लैटिन भाषा में हुए और तेरहवीं शती में अलफान्सू दशम द्वारा जो अल्फानसूई तालिका (Alfonsine Tables) तैयार हुई थी, वह अरब नक्षत्र-विज्ञान का ही विकसित रूप मात्र था। अरब लेखकों ने नक्षत्रों के सम्बन्ध में जो खोज की थी, उसके आधार पर उन्होंने गोलाकार एवम् विशुद्ध त्रिकोणमिति के प्रथम पाठ की रचना की क्योंकि बीजगणित, एवम् विश्लेषणात्मक रेखागणित की भाँति त्रिकोणमिति सम्बन्धी विज्ञान की नींव भी एक बड़ी हद तक अरबों ने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ही डाली थी। जो व्यक्ति भी आकाशमण्डल के नक्षत्रों के नामों पर गौर करेगा तो उसको शीघ्र ही यह ज्ञात हो जायगा कि अरब नक्षत्र-विज्ञान-वेत्ताओं ने आकाश पर अपने परिश्रम की अमिट छाप छोड़ी है। योरोप की भाषाओं में केवल नक्षत्रों के नाम ही अरबी मूल के नहीं हैं; यथा 'अकरब' (Acrab) वृश्चिक, 'अल्तैर' (Altair) पक्षी, 'अलजदी' (Algedi) मेष, 'जनब' (Deneb) पुच्छ, 'फरकद' (Pharqad) वत्स आदि; बल्कि इन भाषाओं में अनेक पारिभाषिक शब्द भी ऐसे मिलेंगे जिनका अरबी शब्द-व्युत्पत्ति से सम्बन्ध है; जैसे 'अल सुमूत' [Azimuth], 'नाज़िर' [Nadir], अलसम्त (Zenith) आदि। ये सब इस बात को सिद्ध करते हैं कि इस्लाम ने ईसाई योरोप को कैसी अनुपम पैतृक सम्पत्ति (वरासत) छोड़ी।

अरबी भाषा से जितने गणित सम्बन्धी शब्द लिए गये हैं उनमें सबसे दिलचस्प शब्द सिफर (Zero) अथवा शून्य है। यद्यपि अरबों ने सिफर का आविष्कार नहीं किया किन्तु फिर भी उन्होंने योरोप को अरबी अंकों के साथ-साथ सिफर से भी परिचित कराया और पश्चिम वालों को इस अत्यन्त सरल पद्धति के प्रयोग का ढंग बतलाकर दैनिक व्यावहारिक जीवन में हिसाब-किताब की सुविधा प्रदान की। 'सिफर' के बिना हमको अपने अंकों को क्रमिक रूप से रखने के लिए इकाइयों, दहाइयों, और सैकड़ों की एक तालिका तैयार करनी पड़ती और हर समय इसे गले लगाये रहना पड़ता।

अरबी अंकों के प्रसार की गति मुस्लिमेतर योरोप में इतनी शिथिल रही कि इसका विश्वास करना कठिन है। ग्यारहवीं और बारहवीं शती और यहाँ तक कि तेरहवीं शती के एक भाग में भी ईसाई गणितज्ञ प्राचीन रोमन अंकों और गिनतारों† (Abacus) का प्रयोग करते रहे अथवा अरबी के नव-प्रचलित अंकों एवं अपनी प्राचीन पद्धति को मिला-जुलाकर काम चलाते रहे। व्यावहारिक कार्यों के लिए नये अंक सर्वप्रथम इटली में प्रयोग में लाये गये। पीसा के ल्योनार्डो फिबोनैकी (Leonardo Fibonacci of Pisa), जिसने एक मुसलमान से शिक्षा पाई थी और उत्तरी अफ्रीका की यात्रा भी की थी, ने सन् १२०२ ई० में एक पुस्तक प्रकाशित की थी जिसे पश्चिमी जगत में अरबी अंकों के प्रवेश में महत्वपूर्ण कदम समझा गया। सच पूछिये तो इस पुस्तक से योरोपीय गणित की शुरुआत होती है। यदि प्राचीन ढंग के अंकों का प्रयोग होता रहता तो गणित ने अपनी कई शाखाओं में जो उन्नति की है, वह कभी भी सम्भव न हो पाती। सिफर एवं अरबी अंक, जैसा कि आज हमें प्रत्यक्ष है, गणना के विज्ञान की आधारशिला हैं।

पश्चिमी मुसलमानों ने, खगोल-विज्ञान और गणित-शास्त्र की भाँति, प्रकृति सम्बन्धी इतिहास के क्षेत्र में, विशेष रूप से विशुद्ध-वनस्पति विज्ञान, और प्रायोगिक वनस्पति-विज्ञान के विषय में अपनी खोजों से संसार के ज्ञानक्षेत्र में अत्यन्त वृद्धि की

---

† abacus गिनती सिखाने का एक यन्त्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। उन्होंने ताड़ (Palms) और पटसन (Hemps) जैसे पौधों के लिंगीय भेदों का सही और सूक्ष्म निरीक्षण किया। उन्होंने पौधों का वर्गीकरण इस प्रकार किया कि प्रथम वर्ग में कलम लगाने वाले पौधे, दूसरे में बीज से उगने वाले पौधे और तीसरे में स्वतः उगने वाले पौधे। बारहवीं शती के अन्त में सिविले (Seville) के इब्नुलअवाम ने कृषि पर एक निबन्ध लिखा था। यह निबन्ध अपने विषय पर केवल एक इस्लामी महत्वपूर्ण निबन्ध ही नहीं, वरन् मध्ययुग में इस विषय पर जितनी भी पुस्तकें लिखी गयीं उनमें भी विशिष्ट स्थान रखता है। उसने इस पुस्तक की तैयारी में कुछ तो प्राचीन यूनानी तथा कुछ अरबी स्रोतों से सूचनायें प्राप्त की हैं और कुछ स्पेन के मुसलमान काश्तकारों के अनुभवों से लाभ उठाया है। इस पुस्तक में ५८५ पौधों का विवरण है और ५० से अधिक फलवाले वृक्षों की काश्त का भली-भाँति उल्लेख किया गया है। इसमें जमीन और खाद की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है तथा कलम लगाने के नये प्रयोगों की भी चर्चा की गयी है। इसके अतिरिक्त वृक्षों एवं अंगूर की लताओं के रोगों के निदान और उनकी चिकित्सा का भी वर्णन है।

स्पेन का ही नहीं अपितु समस्त प्राचीन इस्लामी जगत का अत्यन्त प्रसिद्ध वनस्पति-विज्ञानवेत्ता एवं औषधि-निर्माता इब्नुलबेतार हुआ है। इसकी सन् १२४८ ई० में दमिश्क में मृत्यु हुई थी। इसने 'सरल-चिकित्सा' पर मध्ययुगीन एक प्रमुख पुस्तक अपनी यादगार-स्वरूप छोड़ी थी।

स्पेन के अरब चिकित्सक प्रायः किसी अन्य व्यवसाय को प्रमुखरूप से करने के साथ-साथ चिकित्सा-कार्य को भी किया करते थे। हम एक साहित्यक व इतिहासकार के रूप में इब्नुल खतीब के सम्बन्ध में पढ़-चुके हैं। वह भी वज़ारत के एक उच्च पद पर रहने के साथ-साथ चिकित्सा-कार्य किया करता था। चौदहवीं शती के मध्य में योरोप, 'काली बला' नामक महामारी के द्वारा तबाह हो रहा था और ईसाई अपने इस अन्ध-विश्वास के कारण अत्यन्त विवश हो रहे थे कि यह ईश्वरी कोप मात्र है। किन्तु उसी युग में ग्रानाडा के एक मुसलमान चिकित्सक ने 'रोगों के संक्रमण के सिद्धान्त' पर एक लेख लिखा था, जो निस्सन्देह शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। उस लेख में उसने लिखा, "जो लोग यह कहते हैं कि हम रोग-संक्रमण की सम्भावना को किस तरह स्वीकार कर सकते हैं जबकि हमारे धार्मिक सिद्धान्त इसके विरुद्ध हैं। तो इन लोगों को हमारा यह उत्तर है कि छुआ-छूत और संक्रमण द्वारा रोगों का फैलना अनुभवों, परीक्षणों, इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभूति की साक्षी तथा विश्वसनीय प्रतिवेदनों से सिद्ध होता है। यह समस्त तथ्य ठोस तर्क पर आधारित हैं। छूत के संक्रमण की वास्तविकता प्रत्येक जाँच करने वाले पर भली-भाँति उस समय सिद्ध हो जाती है जब वह देखता है कि ऐसा व्यक्ति जो किसी ऐसे रोगी के साथ उठता-बैठता है जो किसी संक्रामक रोग का शिकार है, तो वह स्वयं भी बीमार हो जाता है; जबकि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक ऐसा व्यक्ति, जो उससे दूर रहता और उसके सम्पर्क में नहीं आता है, सुरक्षित रहता है। जाँच करने वाला यह भी जान जाता है कि यह बीमारी एक से दूसरे को कपड़ों, बरतनों और सच तो यह है कि कान की बालियों तक के द्वारा भी फैल कर लग जाती है।

प्रारम्भिक दो शतियों में जब स्पेन में मुसलमानों का आधिपत्य था, तब पूर्वीय संस्कृति की धारा बड़े वेग से बह कर स्पेन में पहुँची। स्पेन के पढ़े-लिखे लोग विद्या की खोज में मिस्र, शाम, ईराक, ईरान यहाँ तक कि ट्रान्सोक्सियाना तथा चीन तक भी जाने लगे। पर ग्यारहवीं और बाद की सदियों में बहाव की दिशा बदल गयी और बारहवीं शती में यह धारा पूर्ण वेग से योरोप की ओर बहने लगी। उत्तरी अफ्रीका और स्पेन में तथा विशेष रूप से टोलेडो नामक नगर में जहाँ सेरीमोना के जेराड (Gerard of Cremona) और माइकेल स्काट (Michael Scot) ने कार्य किया था, अरब चिकित्सा को योरोप में भेजने का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया गया। इस प्रकार यहूदी, ईसाई और इस्लामी—इन तीन चिकित्सा सम्बन्धी परम्पराओं को मिलाकर एक रूप हो जाने का अवसर मिला। इसके फलस्वरूप तथा वैसेही विविध अनुवादों द्वारा अरबी के अनेक पारिभाषिक शब्द योरोप की भाषाओं में प्रचलित हो गये। 'जुलेप' —Julep, (यह शब्द अरबी 'जुलाब' शब्द से निकला है जो फारसी के 'गुलाब' से लिया गया है जिसका अर्थ 'गुलाब जल' है) का शब्द एक सुगन्धित पेय-औषधि के अर्थ में प्रयुक्त होता है और 'सिरप' (Syrup) [यह अरबी के शब्द 'शराब' का विकृत रूप है] शकर और जल के उस मिश्रण को कहते है जो एक चिकित्सा-सिद्धान्त के आधार पर और प्रायः किन्हीं औषधियों के संयोग से तैयार किया जाता है। उपर्युक्त ये दोनो शब्द उदाहरण-स्वरूप हैं। मध्ययुगीन लैटिन भाषा में 'सोडा' [Soda] का अर्थ शिरो-वेदना के हैं और सुडैनियम [Sedanum] तत्सम्बन्धी औषधि का नाम था। वस्तुतः यह शब्द भी अरबी शब्द 'सुदा' [Suda] से उत्पन्न है जिसका अर्थ 'सिर में दर्द' पैदा हो जाना है। अरबी पुस्तकों के अनेक रासायनिक शब्दों, जो लैटिन भाषा के माध्यम से योरोपीय भाषाओं में प्रचलित हो गये, में से 'अल्कोहल' [Alcohol], 'अलेम्बिक' [Alembic], 'अलकली' [Alkali] और 'एण्टीमानी' [Antimony] को गिनाया जा सकता है।

स्पेन के अरब-बुद्धिजीवियों की सबसे बड़ी कामयाबी दार्शनिक विचारधारा के क्षेत्र में रही। स्पेन के अरबों और उनके पूर्वी सहधर्मियों ने यूनानी दर्शन को, जिस स्वरूप में ढाल कर तथा अपना योगदान दे कर, पश्चिमी लैटिन प्रदेशों में पहुँचाया, उस सिलसिले में निस्सन्देह स्पेन के अरबों का प्रयास अन्तिम साथ ही सर्वाधिक प्रभावशाली रहा, और विशेष रूप से विश्वास एवं तर्क और धर्म तथा विज्ञान में सामञ्जस्य स्थापित किया गया। मुसलमान विचारकों की दृष्टि में अरस्तू सत्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

था, प्लैटो सत्य था और कुरान भी सत्य था, किन्तु 'सत्य' तो एक ही सम्भव है। इस लिये यह आवश्यक हुआ कि वे इन तीनो को एक स्वर में लायें, और वे उसी प्रयास में लग गये। किसी समय ईसाई विद्वानों को भी, जो दर्शन एवं धर्म को मिला कर चलना चाहते थे, इस समस्या का सामना करना पड़ा था, किन्तु उनके धर्म, मत-मतान्तर और अनेक पहेलियों ने एकत्र हो कर उनकी उलझन को और भी जटिल बना रखा था। जैसा कि हम इसके पूर्व पढ़ चुके हैं यूनानियों का विकसित दर्शन और हेब्रू पैगम्बरों द्वारा प्रस्तुत एकेश्वरवाद क्रमशः पश्चिम तथा पूर्व की प्रचीन संस्कृतियों से प्राप्त सर्वाधिक मूल्यवान निधि थीं।

नवीन विचारों का यह प्रथम प्रवाह [विशेष कर दार्शनिक एवम् चिकित्सा सम्बन्धी], पश्चिमी योरोप में जब आया, तब से मानो 'अन्धकारपूर्ण युग' के अन्त और 'विद्वत्तापूर्ण काल' के उदय का आरम्भ हुआ। अरबी विचारधारा से प्रकाश, तथा प्राचीन यूनानी ज्ञान के ताजे सम्पर्क से स्फूर्ति पाकर, योरोपवासियों में विद्वत्ता और दर्शन के प्रति रुचि उत्पन्न हुई और शीघ्रही उन्होंने बड़ी तेजी के साथ अपने निज के स्वतंत्र बौद्धिक जीवन का मार्ग बना लिया। और उसी के सुपरिणाम का सुख हम आज तक उठा रहे हैं।

हम इस स्थान पर इस्लामी स्पेन के महान दार्शनिकों में से केवल कुछ का ही वर्णन कर सकेंगे। इब्न-तुफेल, जिसकी सन् ११८५ ई० में मृत्यु हुई थी, असाधारण व्यक्तियों में से था। उसकी एक सर्वोत्कृष्ट मौलिक दार्शनिक कहानी 'हई-इब्ने-यकजान' है। इस कहानी का सार यह है कि मनुष्य के पास एक ऐसी क्षमता है जिसके आधार पर वह किसी बाहरी शक्ति की सहायता के बिना ही उच्चतर जगत का ज्ञान प्राप्त कर सकता है और धीरे-धीरे उसको यह बोध हो सकता है कि इस विश्व का आधार एक सर्वोच्च शक्ति है। मध्ययुगीन साहित्य की इस अत्यन्त मनोहर एवं मौलिक कहानी का सर्वप्रथम अनुवाद, एडवर्ड योकोक दी यंगर ने सन् १६७१ ई० में लैटिन भाषा में किया था। इसके पश्चात् अनेक योरोपीय भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ। डच भाषा में सन् १६७२ ई०, रूसी भाषा में सन् १९२० ई० और स्पैनिश भाषा में तो अनुवाद अभी हाल में ही सन् १९३४ ई० में हुआ है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि 'राबिन्सन क्रूसो' नामक कहानी का आधार यही है।

सबसे महान मुसलमान दार्शनिक, जिसने विशेष रूप से पश्चिम को प्रभावित किया है, स्पेन का अरब खगोल-विज्ञान-वेत्ता, चिकित्सक तथा अरस्तू के दर्शन का टीकाकार, अवेरोज (Averroes) है, जिसको अरबी भाषा में इब्नरुस्त कहते हैं। कर्त्तबा में, सन् ११२६ ई० में इसका जन्म हुआ था। चिकित्साशास्त्र पर उसकी विशेष देन उसका वह अनुसंधान है जिसके द्वारा इस तथ्य को स्वीकृत किया गया है कि किसी व्यक्ति को चेचक एक बार से अधिक नहीं निकलती, और यह कि उसने नेत्र के 'रेटिना' नामक अंग के कार्य की ठीक-ठीक व्याख्या की। यहूदी एवं ईसाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जगत में, अरस्तू के टीकाकार के रूप में यह मुख्यतः प्रसिद्ध हुआ। हमको यह न भूलना चाहिए कि मध्ययुगीन टीकाकार किसी प्राचीन पुस्तक को आधार बना कर वैज्ञानिक एवं दार्शनिक ग्रन्थों की रचना किया करता था। उसी प्रकार इब्नरुस्त ने जो टीकाएँ और भाष्य किये हैं उनमें उसने अरस्तू की कुछ पुस्तकों के नामों का उपयोग किया है और उन पुस्तकों की विषय-सामग्री को विस्तृत व्याख्या की है। मुस्लिम एशिया और मुस्लिम अफ्रीका की अपेक्षा, इब्नेरुस्त ईसाई योरोप का अधिक समीपी जान पड़ता है। जिस प्रकार अरस्तू पश्चिम के लिए एक शिक्षक है, उसी प्रकार इब्नेरुस्त पश्चिम के लिए एक भाष्यकार है। इब्नेरुस्त के भाष्यों ने अरस्तू के जिस स्वरूप को मध्ययुगीन योरोप के दार्शनिकों और विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया था, उसने उसके मस्तिष्क में जैसी हलचल उत्पन्न कर दी थी, वैसी हलचल अन्य किसी लेखक के भाष्यों के द्वारा नहीं उत्पन्न हुई। बारहवीं शती के अन्त से लेकर सोलहवीं शती के अन्त तक इब्नेरुस्त की विचारधारा सर्वोपरि छायी रही। और कट्टर धार्मिक प्रतिक्रियाओं के होते हुए भी इब्नरुस्त की यह विचारधारा सर्वप्रथम स्पेन के मुसलमानों में, तदनन्तर यहूदियों में और अन्त में ईसाई पादरियों में ग्रहण की गई। इब्नेरुस्त हेतुवादो (Rational) था और धर्म के ईश्वरीय सिद्धान्तों के अतिरिक्त हर वस्तु को तर्क की कसौटी पर कसने के अधिकार का पक्षपाती था। बहुतों की यह धारणा कि इब्नेरुस्त स्वतंत्र विचार और नास्तिकता का जनक और धर्म का महान शत्रु था, निराधार है। अरस्तू के दर्शन पर जिन पिछले मुसलमान खोज करने वालों ने कार्य किया था उन्होंने बहुत सी उन पुस्तकों को भी भ्रमवश अरस्तू की रचना मान लिया था जो उसकी नहीं हैं और जिनमें बहुत सी नव-अफलातूनी पुस्तकें भी थीं। इब्नेरुस्त के दर्शन में अपेक्षाकृत शुद्ध एवं वैज्ञानिक एक अधिक उत्कृष्ट अरस्तूवाद प्रस्तुत किया गया है। धार्मिक गुरुओं द्वारा इब्नेरुस्त की पुस्तकों से आपत्तिजनक अंश निकाल दिये जाने के पश्चात्, उसकी पुस्तकें पेरिस विश्वविद्यालय तथा उच्च शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित की गयीं। इब्नेरुस्त ने जिस बौद्धिक आन्दोलन का प्रवर्तन किया था, वह अपने समस्त गुणों एवं उसके साथ भ्रांतिवश जोड़े गये अवगुणों के सहित, योरोपीय विचारधारा में, वर्तमान प्रायोगिक विज्ञान की उत्पत्ति के पहले तक, एक जीवित-तथ्य बना रहा।

उस युग के दार्शनिकों के समाज में इब्नेरुस्त के बाद जिस व्यक्ति को प्रथम स्थान दिया जा सकता है वह इब्ने मेमून है। यह इब्नेरुस्त का एक समकालीन यहूदी था जो उसके जन्म-स्थान कर्त्तबा का ही निवासी था। वह मूसा बिन मेमून या मेमोनाइद के नाम से प्रसिद्ध था। उसे पूरे अरबी-काल के समस्त यहूदी चिकित्सकों एवं दार्शनिकों में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हुई थी। वह सन् ११३५ ई० में कर्त्तबा में पैदा हुआ था किन्तु मुस्लिमों द्वारा धार्मिक उत्पीड़न को सहन न कर, सन् ११६५ ई०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के आस-पास काहिरा चला आया और वहीं बस गया। कुछ जीवन-चरित्र लेखकों का यह कथन है कि इब्ने-मेमून ने स्पेन में अपने मुसलमान होने की आम घोषणा कर दी थी किन्तु छिपे तौर पर वह यहूदी धर्म को अपनाये रहा। परंतु इस पर हाल में ही बड़ी कड़ी आलोचनाएँ हुई हैं। काहिरा में इब्नेमेमून प्रसिद्ध सुल्तान सलाहुद्दीन और उसके पुत्र का राज-चिकित्सक नियुक्त हुआ था। सन् ११७७ ई० में उसे काहिरा के यहूदी सम्प्रदाय का मुख्य-धार्मिक कार्यालय सौंपा गया और सन् १२०४ ई० में जब उसकी मृत्यु हुई तो वह इसी पद पर था। उसकी स्वेच्छा के अनुसार उसके शव को उसी मार्ग से हाथों-हाथ ले जाया गया जिस पर किसी समय हजरत मूसा चल चुके थे और इस प्रकार उसको ले जाकर तिब्रिया (Tiberias) में दफना दिया गया। इसकी कब्र जो हर प्रकार की साज व सज्जा से खाली और साधारण रूप में है, आज कल सहस्रों व्यक्तियों का तीर्थ-स्थान बनी हुई है। आधुनिक मिस्र के निर्धन यहूदी अब भी काहिरा के यहूदी देवालय (Synagogue) तहखाने में, जहाँ मूसा बिन मेमून दफन है, रात्रि व्यतीत करने आते हैं, जिससे इस स्थान के प्रभाव से उनके रोग दूर हो जायँ। यहूदियों की एक कहावत है कि 'मूसा से मूसा तक कोई मूसा के समान नहीं पैदा हुआ।' इस कहावत से उसके महान व्यक्तित्व का अनुमान हो जाता है जो उसे यहूदियों के हृदयों में प्राप्त था।

इब्ने-मामून ने एक खगोलवेत्ता, धर्मशास्त्री, चिकित्सक और एक दार्शनिक के रूप में ख्याति प्राप्त की। उसने 'खतने' के ढंग में सुधार किया। इसने बवासीर का कारण कब्ज को माना और उनके लिए हलका भोजन, जिसमें तरकारियों पर अधिक बल था, निर्धारित किया। स्वास्थ्य-विज्ञान के सम्बन्ध में इसके विचार बहुत ही उन्नत थे। उसकी चिकित्सा सम्बन्धी सबसे अधिक प्रसिद्ध पुस्तक 'दलालतुल-हायरीन' अर्थात् 'उद्विग्न व्यक्तियों का पथ-प्रदर्शक' है। इस पुस्तक में उसने यहूदी धर्मशास्त्र और मुस्लिम अरस्तूवाद में या यदि उससे भी स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया जाय तो धर्म एवं तर्क में सामंजस्य स्थापित करने का यत्न किया है। उसने पैगम्बरों के स्वप्नों को भी शारीरिक अनुभव मानकर व्याख्या की है। यहाँ तक बाइबिल की बुनियादी बातों के मुकाबले में वैज्ञानिक विचारधारा का वह चैम्पियन है। और उसने रूढ़िवादी संकीर्ण धर्माचार्यों को क्रुद्ध कर दिया, जो उसकी उपरोक्त पुस्तक को 'दलालतुल हायरीन' के स्थान पर 'जलालतुल हायरीन' कहने लगे जिसका अर्थ "उद्विग्न-पथ-भ्रामक" है। इस पुस्तक में और इसी प्रकार उसकी दूसरी पुस्तकों में जो दार्शनिक विचार व्यक्त किये गये हैं, वे यद्यपि स्वतंत्र रूप से विकसित हैं, तो भी इब्नेरुस्त की विचार-धाराओं से वे मिलते-जुलते हैं। इब्नेरुस्त की भाँति वह भी यूनानी भाषा नहीं जानता था। इसलिए उसको बिलकुल अरबी अनुवादों का ही सहारा लेना पड़ा। उसने परमाणुवाद को सृष्टि-सिद्धान्त का आधार माना है। उस समय के समस्त विचारकों के पास, जो अरबी भाषा में अपने विचारों को व्यक्त कर रहे थे, दो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकार के सिद्धान्त थे, पहला सिद्धान्त "बाइबिल के बुनियादी विश्वासों" से सम्बन्ध रखता है, जिसके अनुसार ईश्वर को प्रत्येक वस्तु का सृष्टा माना गया है ; दूसरा नव-अफलातूनी एवं अरस्तूई दार्शनिक सिद्धांत था। इब्ने-मेमून द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण इन दोनों से भिन्न था। एक को छोड़कर, उसकी समस्त पुस्तकें अरबी भाषा किन्तु हेब्रू लिपि में हैं। और यह सभी पुस्तकें अत्यन्त शीघ्र हेब्रू भाषा में और फिर क्रमशः लैटिन भाषा में अनूदित हुई। उन पुस्तकों का प्रभाव मुख्यतः यहूदियों तथा ईसाइयों पर दूर-दूर तक और बहुत समय तक बना रहा। ये पुस्तकें अठारहवीं शती के अन्त तक यहूदी दर्शन को यहूदियों से भिन्न दूसरे लोगों तक पहुँचाने का प्रमुख माध्यम बनी रहीं। आधुनिक आलोचकों ने अलबर्ट्स-मैगमस(Albertus Magmus) और उसके प्रतिद्वन्द्वी डैन्सइस्कोटस (Duns Scotus), स्पिनोजा (Spinoza), और काण्ट (Kant) आदि ईसाइयों की पुस्तकों में भी इब्न-मेमून की पुस्तकों का प्रभाव खोज निकाला है।

इस युग के सब से बड़े सूफी एक दूसरे स्पेनी अरब 'इब्ने अरबी' थे। यह इस्लामी सूफीवाद के सब से बड़े प्रतिभासम्पन्न विचारक थे। इब्ने अरबी सिविले (Seville) में पैदा हुए थे लेकिन उनकी मृत्यु सन् १२४० ई० में दमिश्क में हुई थी। वहाँ उनका मकबरा अभी तक विद्यमान है। उन्होंने अपनी एक पुस्तक में हजरत मुहम्मद साहब की 'निशा-यात्रा' और उनकी 'स्वर्ग-यात्रा' का अत्यन्त विशद वर्णन किया है। कहा जाता है कि 'दान्ते' ने अपनी सर्वोत्कृष्ट पुस्तक में इब्ने अरबी की इसी पुस्तक से लाभ उठाया है। तेरहवीं शती के अन्त तक अरबी विज्ञान एवं दर्शन दोनो योरोप में पहुँचाये जा चुके थे। वह बुद्धिवादी दर्शन, टोलेडो (Toledo) के फाटक से प्रविष्ट होकर पीरीनीज पर्वतमाला को नाँघता हुआ, प्रावेन्स तथा अल्पाइन के दर्रों में से होकर लोरन, जर्मनी, मध्ययोरोप और इंगलिश चैनेल को पार करता हुआ, इंगलैण्ड तक में प्रवेश कर गया। फ्रान्स में मार्सेलीज़, टोलोज, नार्बोन तथा माण्टेलियर, अरबी-दर्शन के केन्द्र बन गये। पूर्वी फ्रान्स में क्लोनी (Cluny), जिसके आश्रम में कई स्पैनिश ईसाई भिक्षु रहा करते थे, बारहवीं शती में अरबी विद्या के प्रसार का महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया। उसके आदरणीय पादरी पीटर ने सन् ११४१ ई० में इस्लाम के विरुद्ध कई लेख लिखने के अतिरिक्त कुरान शरीफ का लैटिन भाषा में प्रथम अनुवाद प्रस्तुत किया। लोरेन (Lorraine) या लोथारिंजिया (Lotharingia) में अरबी विज्ञान का प्रचार दशवीं शती में हुआ और दो सौ वर्ष तक यह क्षेत्र वैज्ञानिक प्रभाव का केन्द्र बना रहा। लीज(Liege), ग्रोज (Gorze) और कोलोन (Cologne) उन लोथीरिंजी नगरों में से थे जिन्होंने अरबी विद्या के प्रसार के लिए अत्यन्त उर्वर भूमि प्रदान की थी। विद्या का यह प्रकाश लोरेंज से जर्मनी के दूसरे क्षेत्रों तक पहुँचने लगा। और जिन लोगों ने लोरेंज में जन्म लिया अथवा शिक्षा प्राप्त की थी, उन्होंने इस प्रकाश को नार्मन-इंगलैण्ड तक पहुँचा दिया। स्पेनी-अरबी शिक्षा पश्चिमी योरोप के कण-कण में व्याप्त हो गयी थी। स्पेन का मध्यस्थता का कार्य अब पूरा हो चुका था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१६—'क्रास' की 'द्वितीया के चन्द्रमा' पर विजय

अरब मरुस्थल के निवासियों ने जिस आश्चर्यजनक तेज़ी के साथ प्रथम इस्लामी शती में सभ्य जगत के अधिकांश भाग को जीत लिया था, उस तेजी के समान यदि कोई उदाहरण हो सकता है तो वह अरबों के प्रभाव का पतन है, जो हजरत मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् तीसरी शती के मध्य से लेकर चौथी शती के मध्य तक शीघ्रता के साथ हुआ। सन् ८२० ई० के लगभग जितनी शक्ति केवल एक व्यक्ति अर्थात् बगदाद के खलीफा के हाथ में केन्द्रित थी, उतनी संसार के किसी भी अन्य व्यक्ति को नहीं प्राप्त थी। किन्तु सन् ९२० ई० में उसी खलीफा के उत्तराधिकारी की शक्ति घट कर इस दशा में पहुँच गयी कि स्वयं उसकी राजधानी बगदाद में भी उसके प्रभाव का आभास नहीं होता था। सन् १२५८ ई० में यह नगर ही ध्वस्त हो कर खण्डहर होगया। इसके पतन के साथ ही साथ अरबों का आधिपत्य सदैव के लिए समाप्त हो गया और वास्तविक खिलाफत के इतिहास का अन्त हो गया।

जहाँ तक बाहरी कारणों का प्रश्न है, जगली मंगोलों या तातारियों की भयंकर मारकाट अन्ततोगत्वा खिलाफत के पतन का कारण भले जान पड़ती हो, पर वास्तविकता तो यह है कि इस हंगामे ने केवल इसके पतन में सहायता मात्र पहुँचाई है। खिलाफत के केन्द्र और खलीफा के साम्राज्य के भीतर जो असंख्य वास्तविक तथा झूठे दावेदार वंश 'कुकुरमुत्ता' की भाँति उत्पन्न होगये थे, वे भी पतन के कारण न होकर उसके लक्षण मात्र थे। पश्चिमी रोमन साम्राज्य की भाँति बगदाद का खिलाफत रूपी 'रुग्ण व्यक्ति' तो पहले से ही मृत्यु-शय्या पर पड़ा सांसें भर रहा था कि लुटेरे दरवाजा तोड़ कर अन्दर घुस आये और शाही सम्पत्ति में से जो कुछ उनके हाथ लगा, लूट ले गये।

खिलाफत अब टुकड़े-टुकड़े हो रही थी। आरंभ की अनेक विजयें केवल नाममात्र की थीं और इनके अनन्तर जो शासनपद्धति अपनायी गयी वह इनकी स्थिरता एवं निरन्तरता के लिए मार्ग प्रशस्त करने वाली न थी। शोषण एवं अत्यधिक कर-वृद्धि शासन की घोषित नीति थी। और उसका पालन यदाकदा ही नहीं अपितु नियमित और व्यापक रूप में होता था। अरबों और गैर-अरबों, अरबी मुसलमानों तथा नव-मुस्लिमों और मुसलमानों व जिम्मियों के बीच भेद-भाव की दरार तेजी से खुले आम बढ़ती रही। स्वयं अरब जाति में भी उत्तरी तथा दक्षिणी का पुराना भेद-भाव क़ायम रहा। न फारस के ईरानी, न तुर्क के तूरानी और न हामी बर्बर, अरबों के सामियों के साथ मिल-जुल कर एक रूप हो सके। एक राष्ट्रीयता की जाग्रति इन विभिन्न विरोधी तत्वों को एक-सूत्र में कभी न बाँध सकी। ईरान की सन्तानों के हृदय से कभी भी अपने प्राचीन वैभव का ध्यान लुप्त नहीं हुआ और वे कभी भी अपने आप को पूरी तौर पर इस नये शासन के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुकूल न बना सके। बर्बर प्रायः अपने कबीले की भावना और विरोध को अस्पष्ट रूप से प्रकट करते थे, और किसी भी भेद-भाव के आन्दोलन में भाग लेने को तत्पर रहते थे। सीरिया के लोग अरसे तक यह आशा लगाये रहे कि कोई नेता उठेगा जो उनको अब्बासियों की दासता से छुटकारा दिलायेगा। स्वयं धर्म के क्षेत्र में भी कई ऐसी शक्तियाँ, जो केन्द्र से स्वतंत्र होना चाहती थीं, बड़े जोश के साथ कार्य कर रही थीं। ये शक्तियाँ राजनीतिक एवं सैनिक शक्तियों से कम प्रबल न थीं। शिया, करामती, इस्माइली और अस्सासी (Assasins) तथा ऐसे ही अनेक फिरके सक्रिय थे। इनमें से कई थे जो केवल धार्मिक विभाजन ही मात्र न थे। करामतियों ने साम्राज्य के पूर्वी भाग को अपने निरन्तर आक्रमणों से जर्जरित कर दिया था! और उसके पश्चात् ही फातिमियों ने खिलाफत के पश्चिमी भाग पर अधिकार कर लिया! अब इस्लाम में वह क्षमता शेष नहीं रह गयी थी कि वह अपने अनुयायियों को एक संगठन-सूत्र में बाँध सकता और न खिलाफत ही के बस में यह था कि वह भूमध्य-सागरीय क्षेत्रों को मध्येशिया से मिलाकर एक मजबूत इकाई बना सके।

इस विघटन के, अनेक सामाजिक एवं नैतिक कारण भी थे। शताब्दियों की दौरान में विजेताओं और विजितों के रक्त का सम्मिश्रण हो चुका था, जिसके कारण उनकी प्रधानता और गुणों का ह्रास हो गया था। अरबों के राष्ट्रीय जीवन के पतन के साथ ही उनका आत्मबल और नैतिक स्तर भी नष्ट हो गया। धीरे-धीरे विजेताओं का साम्राज्य विजितों का साम्राज्य बन गया। अन्तःपुर और उसके असंख्य हिजड़े, दासियाँ, तथा दास-किशोर (ग़िलमान)—ये सब मिलकर नारीत्व के पतन एवं पुरुषत्व की मर्यादा के विनाश का कारण बने। असंख्य रखैलों तथा अगणित सौतेले भाई-बहनों के शाही महल में निवास से उत्पन्न अनिवार्य ईर्ष्या एवं षड़यंत्र तथा शराब और संगीत में शराबोर विलासिता-पूर्ण जीवन और ऐसी ही अनेक बातें मिल कर पारिवारिक जीवन की शक्ति को खोखला बना रही थीं। पहले से निर्बल चली आने वाली सिंहासन के उत्तराधिकारियों की स्थिति, शासन के उत्तराधिकार के लिये निरंतर चलने वाली कलहों के कारण, और भी नाजुक हो रही थी।

इसी प्रकार आर्थिक कारण भी महत्त्वपूर्ण थे। कर लगाने की नीति तथा जो केवल शासक वर्ग के लाभ के लिये ही चलने वाला सूबों का शासन था, कृषि एवं उद्योग को कमजोर कर रहा था। अधिकारी वर्ग जितना सम्पत्तिशाली होता जाता था, जन-साधारण की दरिद्रता उतनी ही बढ़ती जा रही थी। बड़े राज्यों के अन्तर्गत छोटे-छोटे नये राज्य पैदा हो रहे थे और उनके शासक प्रायः अपने कृषक-दासों को लूटते रहते थे। दिन-प्रतिदिन होने वाले रक्तपातों के कारण जनसंख्या घट रही थी और फलतः कृषि एवं भूमि निर्जन हो रही थी। मेसोपोटामिया के निचले भाग में समय-समय पर आने वाली बाढ़ के कारण तबाही फैल रही थी। साम्राज्य के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विभिन्न भागों में, पड़ने वाले दुर्भिक्ष जनता की दुर्दशा में और वृद्धि कर रहे थे। ताऊन, चेचक, मलेरिया और दूसरे ज्वरों जैसी महामारियों, जिनके आगे मध्ययुगीन व्यक्ति अत्यन्त असहाय था, ने अक्सर फैल कर बड़े-बड़े क्षेत्रों की आबादी को नष्ट कर दशमांश कर दिया था। अरबों की विजय के पश्चात्, प्रथम चार शतियों के इतिहास में, हमको चालीस बड़ी-बड़ी महामारियों का उल्लेख मिलता है।

स्पेन तथा योरोप के दूसरे भागों में भी, मुस्लिम शक्ति के ह्रास के कारण प्रायः वही हैं, जो खिलाफत साम्राज्य के पूर्वी और केन्द्रीय क्षेत्रों के पतन का कारण थे। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ सांघातिक प्रहार ईसाइयों के द्वारा हुआ और वहाँ मंगोलों के द्वारा।

कर्त्तबा की अमवी खिलाफत का सन् १०३१ ई० में पतन हो जाने के बाद, इसके खण्डहर पर अनेक छोटे-छोटे मुस्लिम राज्य कायम हो गये। पर ये सबके सब पारस्परिक गृह-युद्धों में उलझे रहते थे। इस प्रकार के लगभग बीस अल्पकालीन राज्यों का बीस नगरों या सूबों में जन्म हुआ। इनमें सिविले के राज्य को प्रमुखता प्राप्त थी। किसी समय इसके दरबार का वैभव इतना बढ़ गया था कि कर्त्तबा के बाद उसकी गणना होने लगी थी। पर शती का अन्त भी नहीं होने पाया था कि दूसरे राज्यों के साथ यह सिविले मोरक्को के बर्बर वंश की नवविकसित शक्ति का शिकार होगया। अब स्पेन में बर्बरों की प्रभुता के युग का आरंभ हो गया था।

यह बर्बर वंश जो उत्तरी-पश्चिमी अफ्रीका और स्पेन पर शासन कर रहा था, मुराबेतीन (Al-Moravides) कहलाता था। यह शब्द अरबी के एक शब्द का बिगड़ा हुआ रूप है। इसका अर्थ एक सैनिक-भिक्षु है। इस वंश का आरम्भ एक सैनिक-भ्रातृत्व से हुआ। मुराबितों ने अपनी सेना की प्रारम्भिक भर्ती उन कबीलों से की जिनके सदस्य अपना मुख आँखों से नीचे नक़ाब से छिपाये रहते थे। उनके वंशज 'तोवरिक' (Touareg) कबीले के लोग आज भी वैसा ही नकाब धारण करते हैं। इसी कारण मुराबेतीन का दूसरा नाम मुलसमीन (Veil Wearers) पड़ गया, जिस का अर्थ नकाब पहनने वाले के हैं। मुराबेतीन के पश्चात् एक अन्य बर्बर वंश आगे आया। अरब वंशों में ग्रायडा का शासक वंश 'बनी नसिर' उल्लेखनीय है। इसी वंश का एक सदस्य मुहम्मद-अल-गालिब था। इसने सन् १२३२ ई० से लेकर सन् १२७३ ई० तक शासन किया। अल-हमरा का जगत्-प्रसिद्ध प्रासाद इसी का बनवाया हुआ था।

हम पूर्व या पश्चिम के उन छोटे-छोटे राज्यों का वर्णन नहीं करना चाहते हैं जो आपस में लड़-भिड़ कर पतन के मार्ग पर बढ़ रहे थे। पर उस इतिहास के स्थूल वर्णन में एक बात उल्लेखनीय है। मुख्य रूप से मुसलमानों के अन्तिम समय के योरोपीय शासन की कहानी में एक महत्त्वपूर्ण और मजेदार बात यह है कि विरोधी व्यक्तियों और विरोधी संस्कृतियों के बीच मिलने-जुलने और सामञ्जस्य स्थापित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करने की प्रवृत्ति उस समय में भी वर्तमान थी जब कि वे सब, बड़ी भयंकरता के साथ एक दूसरे को तहस-नहस कर देने के लिए कटिबद्ध थे। अपनी विद्या एवं कला को दूसरों तक पहुँचाने की जो शक्ति मनुष्य के भीतर निहित है, सचमुच वही शक्ति उसकी सभ्यता के श्रेष्ठ और सहनशील होने का आधार है।

स्पेन की अमवी खिलाफत का ग्यारहवीं शती में पतन होते ही ईसाइयों की पुनर्विजय का काल आरंभ हुआ। स्पेन के इतिहासकार, कोवाडोंगा (Covadonga) के युद्ध से, जो सन् ७१८ ई० में हुआ था, ईसाइयों की नवीन जीत की सही शुरुआत मानते हैं। इस युद्ध में अस्तूरिया के एक सरदार प्लेयो (Pelayo) ने मुसलमानों के बढ़ाव को रोक दिया था। यदि मुसलमानों ने आठवीं शती में उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों की बची-खुची ईसाई शक्ति को नष्ट कर दिया होता तो स्पेन का आगे का इतिहास पूर्णतया एक नया रूप धारण करता। आरम्भ में उत्तर के ईसाई सरदारों के पारस्परिक विग्रह ने पुनः स्पेन को प्राप्त करने के मार्ग में बड़ी कठिनाई उपस्थित की, किन्तु आगे चल कर सन् १२३० ई० में कैस्टिले और लियन में अन्तिम रूप से संगठन हो जाने से पुनर्विजय के कार्य में अत्यन्त तेज़ी आ गई। तेरहवीं शती के मध्य में ग्राण्डा को छोड़ कर लगभग सम्पूर्ण देश पर अधिकार हो चुका था। टोलेडा सन् १०८५ ई० में जीत लिया गया। कर्दोबा सन् १२३६ ई० में और सिविले सन् १२४८ ई० में ईसाइयों के हाथ में आ गया।

तेरहवीं शती के पूर्वार्द्ध के बाद दो बड़े कदम उठाये गये। समस्त स्पेन को ईसाई बनाना और उसको संगठित करना था। किन्तु देश को ईसाई बना लेना एक बात थी और उसको पुनः जीत कर संगठित करना सर्वथा भिन्न बात थी। स्पेन प्रायद्वीप के केवल उन्हीं भागों में इस्लाम की जड़ें फैल सकी थीं, जहाँ किसी समय प्रारम्भिक सामी एवं कार्थेजीनियन सभ्यताओं का विकास हुआ था। सिसिली के लिए भी यही बात सत्य थी, जो कम महत्व-पूर्ण नहीं है। साधारणतः इस्लाम एवं ईसाई धर्म के बीच की दरार वैसी ही थी जैसी कि कार्थेजोनियन और यूनानी-रूमी सभ्यताओं के बीच पायी जाती थी। तेरहवीं शती तक सम्पूर्ण स्पेन में मुसलमानों की बड़ी संख्या, पराजित हो कर अथवा सन्धि के मातहत ईसाइयों की प्रजा बन चुकी थी। किन्तु फिर भी वे किसी न किसी तरह अपने धर्म-कर्म पर कायम थे। ऐसे मुसलमानों को मुडेजार(Mudesars) के नाम से पुकारा जाता था। यह एक अरबी शब्द से बना है जिसका अर्थ पालतू है। बहुत से मुडेजार अरबी भाषा भूलने लगे थे और उन्होंने एकमात्र रोमन भाषा अपनाना आरम्भ कर दिया था तथा वे ईसाइयों में विलीन होते जा रहे थे।

स्पेन के अन्तिम एकीकरण के विकास की प्रगति यद्यपि शिथिल थी, पर वह निश्चित थी। उस समय ईसाई राज्यों में केवल दो ही राज्य अर्थात् कैस्टिले और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एरागोन रह गये थे। सन् १४६६ ई० में एरागोन के फर्डिनेण्ड ने कैस्टिले की महारानी इसाबेला से विवाह कर लिया। इस वैवाहिक सम्बन्ध के कारण दोनों राज्य स्थायी रूप से एक हो गये। इसने स्पेन में मुसलमानों की शक्ति को सर्वदा के लिए अंधकारमय कर दिया। बनी नासिर के अन्तिम सुल्तान इस बढ़ते हुए खतरे का मुकाबिला करने में सब तरह असमर्थ थे। उनमें से अन्तिम सुल्तान सल्तनत के खान्दानी झगड़ों में उलझे थे जिसके कारण उनकी स्थिति और भी खराब हो गयी थी। सन् १२३२ ई० से लेकर सन् १४६२ ई० तक २२ सुल्तानों ने शासन किया। इनमें से छः तो दो बार और एक तीन बार गद्दी पर बैठा। २ जनवरी, सन् १४६२ ई०, जो संयोग से अमेरिका के इतिहास की आरम्भ तिथि भी है, उसी दिन ईसाई फौजें एक लम्बे और भयानक घेरे के बाद ग्राणडा में घुस आयीं, और इस प्रकार "क्रास" ने "द्वितीया के चन्द्रमा" को उखाड़ फेंका।

कैथोलिक सम्राट् फर्डिनेण्ड और साम्राज्ञी इसाबेला, मुसलमानों के आत्मसमर्पण के उपरांत हुई शर्तों पर दृढ़ नहीं रहे। सन् १४६६ ई० में महारानी इसाबेला के मुख्य पादरी कार्डिनल इग्ज़िमिनेज़ डे सिसनेरोज के नेतृत्व में मुसलमानों का बलात् धर्म-परिवर्तन कराने का अभियान आरम्भ किया गया। कार्डिनल ने सर्वप्रथम उन समस्त अरबी पुस्तकों को जो इस्लाम के बारे में थीं, जलाकर नष्ट कर देने का यत्न किया। ग्राणडा में अरबी पाण्डुलिपियों की होली जलाई गयी। इसके पश्चात् रोमन कैथोलिक धार्मिक-न्यायालय स्थापित किये गये जिन्होंने बड़ी तत्परता से अपना कार्य आरम्भ कर दिया। ग्राणडा के पतन के पश्चात्, जो मुसलमान वहाँ रह गए थे, उनको अब मोरिस्को के नाम से पुकारा जाने लगा। स्पेनी भाषा में इसका अर्थ 'छोटा मूर' है। पश्चिमी अफ्रीका को रोमन लोग मारिटैनिया और उसके रहने वालों को 'मौरी' कहते थे। सम्भवतः यह वह शब्द है जिसका मूल फोनेशिया की भाषा में है। इसका अर्थ पश्चिमी है। इसी शब्द के आधार पर स्पेन के मुसलमानों को वहाँ की भाषा में मोरो और अंग्रेजी भाषा में मूर कहा जाने लगा। बर्बर असली मूर थे। लेकिन स्पेन और पश्चिमोत्तरी अफ्रीका के समस्त मुसलमानों को चलन के अनुसार मूर ही कहा जाने लगा। फिलिपाइन के पाँच लाख मुसलमान अब भी 'मोरोस' के नाम से पुकारे जाते हैं। यह नाम उनको स्पेन-निवासियों ने, सन् १५२१ ई० में, इस द्वीपसमूह की खोज के बाद दिया था। मोरिस्को शब्द पहले उन स्पेन-निवासियों के लिए प्रयुक्त होता था, जिन्होंने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया था।

स्पेन के मुसलमान एक रोमान्सी† भाषा बोलते थे पर वे इसके लिए अरबी लिपि का प्रयोग करते थे। अधिक संख्या में न सही, फिर भी अधिकांश मोरिस्को

---

†Romance—दक्षिणी यूरोप में प्रचलित कोई भी भाषा जो लैटिन परिवार की हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्पेन के वंशज थे। अब इन सबको 'स्मरण' कराया जा रहा था कि उनके पूर्वज ईसाई थे, इसलिए उन्हें भी ईसाई धर्म स्वीकार करना चाहिए, अन्यथा उन्हें इस्लाम धर्म पर आरूढ़ रहने के दुष्परिणाम को भुगतना चाहिए। मुदेज़ार भी मोरिस्को लोगों के साथ सम्मिलित कर दिये गए। इनमें बहुतों ने प्रत्यक्ष रूप में ईसाई धर्म की दीक्षा ले ली किन्तु परोक्ष में इस्लाम का अनुसरण करते रहे। इनमें से कुछ लोग गिरजाघरों में विवाह करते थे लेकिन वहाँ से घर आकर चुपके से मुस्लिम प्रथानुसार निकाह करते थे। बहुत लोग सार्वजनिक प्रयोग के लिए ईसाई नाम, और अपने घरेलू इस्तेमाल के लिए एक अरबी नाम रख लेते थे। सन् १५०१ ई० में एक राजाज्ञा प्रचारित हुई जिसके अनुसार घोषणा थी कि कैस्टिले और लियन के समस्त मुसलमान या तो ईसाई धर्म को स्वीकार कर लें या स्पेन को छोड़ दें। पर इसे प्रत्यक्षरूप से कार्यान्वित नहीं किया गया। सन् १५२६ ई० में अरागोन के मुसलमानों को भी इसी बात का सामना करना पड़ा। सन् १५५६ ई० में फिलिप द्वितीय ने एक राजाज्ञा निकाली जिसके अनुसार शेष मुसलमानों को तुरन्त अपनी भाषा, अपना धर्म, अपनी संस्थाएं और अपने रहन-सहन के ढंग को त्याग देने का आदेश था। उसने स्पेन के स्नानघरों को गिरा देने का आदेश दिया ताकि 'धर्म-द्रोह' का कोई भी चिह्न शेष न रह जाय। ग्राण्डा में अपने ढंग का दूसरा विद्रोह उठ खड़ा हुआ जो आस-पास की पहाड़ियों में भी फैल गया। पर यह दबा दिया गया। सन् १६०६ ई० में फिलिप तृतीय ने मुसलमानों के निष्कासन के अन्तिम आदेश पर हस्ताक्षर किये। इसके फलस्वरूप वे समस्त मुसलमान जो स्पेन की भूमि पर शेष रह गये थे, बलपूर्वक बाहर निकाल दिये गये। कहा जाता है कि पाँच लाख मुसलमानों को अपने ये दुर्दिन देखने पड़े। ये लोग अफ्रीका के समुद्री तटों या दूरस्थ इस्लामी देशों को जाने वाले जहाजों पर बलपूर्वक लाद दिये गये। मोरक्को के समुद्री डाकुओं की भर्ती अधिकतर इन्हीं मोरिस्को मुसलमानों से हुई थी। अनुमान किया जाता है कि ग्राण्डा के पतन से लेकर सत्रहवीं शती की प्रथम दशाब्दी तक लगभग तीस लाख मुसलमान या तो देश से निष्कासित कर दिये गये या धार्मिक न्यायालयों ने उन्हें मरवा डाला। इस प्रकार जहाँ तक स्पेन का सम्बन्ध है मुसलमानों की समस्या को सर्वदा के लिए हल कर लिया गया। इस प्रकार, अरबी संस्कृति के विषय में यह प्रसिद्धि कि, जहाँ उसने पग रखा वहाँ पर उसने स्थायी रूप से अपनी जड़ें जमा लीं, स्पेन में अपवाद सिद्ध हुई। यहाँ से वह सर्वदा के लिये विदा हो गई। मूरों को देश से निकाल दिया गया। कुछ समय तक ईसाई स्पेन, चाँद की भाँति दूसरे के प्रकाश से जगमगाता रहा। किन्तु अति शीघ्र ही वह ग्रस लिया गया, और उस समय से लेकर आज तक वह अँधेरे में ही ठोकरें खा रहा है।

स्पेन में मुसलमानों की जितनी भी धार्मिक कलाओं की स्मृतियाँ थीं वह सब की सब नष्ट हो गयीं। इनमें एक मात्र बच रही स्मृति, जो अत्यन्त प्राचीन एवं वैभव-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शाली है, वह कर्त्तबा की महान मस्जिद है। इसकी नींव सन् ७८६ ई० में एक ईसाई गिरजाघर के स्थान पर डाली गयी थी और यह गिरजाघर भी रोमन मन्दिर का परिवर्तित रूप था। मस्जिद का मुख्य भाग उसके वर्गाकार मीनार के साथ सन् ७६३ ई० में पूर्ण किया गया था। स्पेन के मीनार अफ्रीका के मीनारों के आदर्श पर तैयार किये जाते थे और अफ्रीका के मीनार सीरिया के मीनारों के आधार पर बने होते थे। इस मस्जिद की छत को जंगली वृक्षों के रूप में १२६३ स्तम्भ उठाये हुए खड़े थे। पीतल के दीपकों से सम्पूर्ण मस्जिद प्रकाशित की जाती थी। ये दीपक ईसाई गिरजा-घरों के घंटों से बनाये गये थे। एक झाड़ में एक सहस्र बत्तियाँ होती थीं। छोटे से छोटे झाड़ में कम से कम १२ बत्तियाँ होती थीं। मस्जिद को सुसज्जित करने के लिए बेजेण्टाइन के कारीगर नियुक्त किये गये थे। सोरिया की अमवी मस्जिद को सुसज्जित करने के लिए भी शायद इन्हीं को बुलाया गया था। इस मस्जिद के निर्माण में ८० हजार मुहरें, जो गाथों से लूट की सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई थीं, इसके बनाने वाले ने व्यय की थीं। इसके पश्चात् सन् १००० ई० तक मुसलमान इसके विकास एवं इसकी मरम्मत में लगे रहे। आज यह मस्जिद कुमारी मेरी का गिरजाघर* बनी हुई है।

स्पेन के मुसलमानों के धार्मिक स्मारकों के अतिरिक्त दूसरी यादगारों में से, जो शेष रह गयी हैं, उनमें से सिविले का अल-कजर (राजकीय प्रासाद के लिये एक अरबी शब्द) और ग्रानाडा का अल-हमरा—ये दोनों इमारतें बेशुमार खर्च पर तैयार, ऐश्वर्य-युक्त और अत्यन्त आकर्षक ढंग से सुसज्जित हैं। सिविले के अलकज़र के सब से पुराने भाग को सन् ११६६ ई० से लेकर सन् १२०० ई० तक किसी मोवाहिद गवर्नर के लिए टालेडो के एक भवन निर्माण करने वाले कलाकार ने बनाया था। मोवाहिद, मुराबेतीन के पश्चात् दूसरा बर्बर वंश है जिसने मुस्लिम स्पेन पर शासन किया था। इस वंश ने अपना नाम एक अरबी शब्द से लिया है जिसका अर्थ 'अद्वैतवादी' है। सन् १३५३ ई० में अल-कजर का मुदेज़ार कारीगरों ने शाह पीटर, 'नृशंस', की आज्ञा से इस्लामी शैली पर पुनः जीर्णोद्धार कर दिया था। यह कुछ वर्ष पूर्व तक स्पेन के शाही वंश का निवास-स्थान बना रहा। कर्त्तबा, टोलेडो, और स्पेन के अन्य नगरों के अल-कजरों [राजकीय प्रासादों] में सिविले का अल-कजर सब से अधिक प्रसिद्ध था। टोलेडो के अलकजर को स्पेन के हाल के गृह-युद्ध से अत्यधिक क्षति पहुँची है।

स्पेन के मुसलमानों की सुसज्जित करने की पद्धति अल-हमरा में अपनी चरम सीमा पर पहुँची है। ग्रानाडा के इस किले को पच्चीकारी तथा छतों पर बेल-बूटे बना कर, और उसमें लेख खुदवा कर बड़े वैभव के साथ अत्यन्त विस्तारपूर्वक बनवाया गया था। सन् १२४८ ई० में बनी नसिर के एक सुल्तान ने यह महल बनवाना आरंभ किया था किन्तु यह चौदहवीं शती के मध्य में जाकर पूर्ण हुआ।

---

* Cathedral To The Virgin Of The Assumption.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घोड़े की नाल के आकार की मेहराब, जो पश्चिमी मुसलमानों के भवन-निर्माण-कला की मुख्य विशेषता बतायी जाती है, 'निकट पूर्व' में इस्लाम से पहले की इमारतों में भी पायी जाती है। इस प्रकार की घोड़ों की नाल के आकार की बनी हुई गोल मेहराबें दमिश्क की अमवी मस्जिद में भी बनायी गयी हैं। इसी प्रकार की मेहराबें जो पश्चिम में 'मूरिश आर्च' के नाम से जानी जाती हैं, अरबों की विजय के पूर्व भी स्पेन में पायी जाती थीं। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह स्पेन के और विशेष रूप से कर्त्तबा के मुसलमान थे जिन्होंने इनकी संरचनात्मक कला एवं सजावट का मूल्यांकन किया और उन्हें व्यापक रूप से अपनाया। कर्त्तबा के अरबों की एक दूसरी देन यह है कि उन्होंने एक दूसरे को काटती हुई मेहराबों की मौलिक शैली का आविष्कार किया जिनमें उन मेहराबों बगुम्बजों की कमरखियाँ प्रत्यक्ष दिखाई देती थीं। इसको तथा कर्त्तबा में विकसित दूसरी प्रकार की कलाकृतियों को मुस्तारब (Mozarabs) लोगों ने टोलेडो और स्पेन प्रायद्वीप के अन्य उत्तरी क्षेत्रों में पहुँचा दिया। यहाँ ईसाई एवं मुस्लिम परम्पराओं के मिश्रण से एक विशेष प्रकार की शैली का आविष्कार हुआ। इस शैली की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें घोड़ों के नालों की आकृति की मेहराबों का सुन्दर ढंग से प्रयोग किया जाता है। मुदेजार कारीगरों के हाथों इस मिश्रित शैली को अत्यधिक सौन्दर्य एवं पूर्णता प्राप्त हुई। और इस प्रकार यह स्पेन की राष्ट्रीय शैली बन गयी।

'ग्राएडा' के पतन के बहुत समय बाद तक 'भूरी' मुसलमान नर्तक एवं गायक स्पेन तथा पुर्तगाल के निवासियों का मनोरंजन करते रहे। 'रिबेरा' (Ribera) की आधुनिक खोजों से पता चलता है कि उसी क्षेत्र के, पुराने जमाने के वीणा पर गाये जाने वाले गीतों और ऐतिहासिक वीर-पवाँरों के समान ही, स्पेन ही नहीं अपितु समस्त दक्षिणी-पश्चिमी योरप में लोकप्रिय संगीत के भी, तेरहवीं शती और उसके पश्चात् तक, अण्डलूसिया से अरब, ईरान और बेजेन्तीन तथा यूनान के मार्ग से जाने और पुनः आने की पुष्टि होती है। जिस प्रकार दर्शन, गणित, तथा चिकित्सा शास्त्र यूनान तथा रोम से यात्रा करते हुए बेजेन्टाइन, ईरान और बगदाद पहुँचे और वहाँ से स्पेन आकर समस्त योरोप में फैल गये, उसी प्रकार संगीत के अनेक सिद्धान्त एवं प्रयोग भी गये और पुनः आये। योरोप में स्पेन के अलावा सिसिली ही एक स्थान था जहाँ मुसलमानों ने दृढ़ता के साथ अपना पैर जमाया था। काफ़ी पहले, सन् ६५२ ई० में, मुसलमानों ने सिसिली पर इक्के-दुक्के हमले आरम्भ कर दिये थे किन्तु सन् ८२७ ई० में उनका उस पर स्थायी रूप से अधिकार हो गया और तब से १२६ वर्ष तक, उग्र अरब सरदारों के अधीन, कभी इस का एक भाग अथवा कभी पूरा का पूरा द्वीप अरब जगत् का एक प्रान्त बना रहा। पालरमो (Palarmo) इसकी राजधानी थी।

जिस प्रकार मुसलमानों ने उत्तरी-पश्चिमी यूरोप पर आक्रमण करते समय स्पेन को अपना प्रथम मोर्चा बनाया था उसी प्रकार जब उन्होंने इटली पर आक्रमण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करना आरंभ किया तो सिसिली को ही अपना मोर्चा बनाया। अपनी मृत्यु से पूर्व सन् ९०२ ई० में ट्यूनिस का अमीर इब्राहीम अगलबी (Aghlabid) द्वितीय, जो सिसिली का भी शासक था, जलडमरूमध्य को पार कर इटली में कैलब्रिया (Calabria) तक बढ़ आया था। पर वह पहला ही अरब आक्रमणकारी नहीं था, जिसने इटली की भूमि पर पग रखा हो, क्योंकि पालरमो की विजय के थोड़े समय पश्चात् उत्तरी अफ्रीका के दूसरे अगलबी सेनानायक दक्षिणी इटली के लम्बार्डों के पारस्परिक झगड़ों में हस्तक्षेप कर बैठे थे। दक्षिणी इटली के निचले भाग पर अभी तक बेजण्टाइनों का ही शासन था और जब सन् ८३८ ई० में नेपुल्स के निवासियों ने अरबों को अपनी सहायता के लिए पुकारा तो मुसलमानों के युद्ध-घोष से वेसुवियस (Vesuvius) के ढलुआ मैदान गूँज उठे। इसके लगभग चार वर्ष पश्चात् ऐड्रियाटिक में मुसलमानों ने 'बारी' पर अधिकार कर लिया जो अगले तीस वर्ष तक इस्लामी सेना का मुख्य केन्द्र बना रहा। लगभग इसी समय विजयी मुसलमान वेनिस भी पहुँच गये। सन् ८४६ ई० में, अरबों के सैनिक दस्तों ने, आस्टिया (Ostia) के समुद्री तट पर उतर कर रोम को आतंकित करना आरम्भ कर दिया था। ये सेनाएँ रोम के भीतरी नगर में प्रवेश करने में जब सफल न हो सकीं, तब उन्होंने वैटिकन (Vatican) के समीप सेण्ट पीटर के गिरजाघर और चहारदीवारी के बाहर सेण्ट पाल के गिरजे को तहस-नहस कर दिया और पादरियों की कब्रों को अपवित्र किया। इस घटना के तीन वर्ष पश्चात् एक दूसरा मुसलमानी जहाजी बेड़ा आस्टिया पहुँचा; किन्तु तूफानी समुद्र तथा इटली के बेड़े ने मिलकर उसे नष्ट कर दिया। प्रसिद्ध चित्रकार राफील (Raphael) के एक चित्र में यह नाविक युद्ध और रोम की आश्चर्यजनक सुरक्षा भली-भाँति चित्रित है। किन्तु इस तबाही के होते हुए भी इटली पर मुसलमानों का अधिकार इतनी दृढ़ता से बना हुआ था कि पोप जान अष्टम (सन् ८७२ ई० से लेकर सन् ८८८ ई० तक) को अपनी प्राण-रक्षा इसी में दिखाई दी कि वह मुसलमानों को दो वर्ष तक खिराज देता रहा।

अगलबी सरदारों ने अपने आक्रमण केवल इटली के समुद्री तट तक ही सीमित नहीं रखे। सन् ८६९ ई० में उन्होंने माल्टा पर अधिकार कर लिया। दसवीं शती में इटली और स्पेन के समुद्री डाकुओं के आक्रमण अल्पाइन दर्रों से होकर मध्य यूरोप तक फैल गये। आल्प्स (Alps) दर्रों में कुछ किलों तथा दीवारों की मौजूदगी के सम्बन्ध में मार्गदर्शक सहायकों का कहना है कि वे मुसलमानों के आक्रमण को रोकने के लिए बनायी गयी थीं। स्विटजरलैण्ड के कुछ स्थानों के नाम यथा 'ग़ाबी' तथा 'अल-ग़ाबी' सम्भवतः अरबी भाषा के संसर्ग के ही हैं।

सन् ८७१ ई० में 'बारी' पर ईसाइयों के पुनः अधिकार से, इटली और मध्य-यूरोप पर मुसलमानों के आतंक और भय की समाप्ति का आरंभ हुआ। बारी में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाकिम इतने प्रबल हो गये थे कि उन्होंने पालरमो के अमीर से स्वतंत्र हो कर अपने को सुल्तान घोषित कर दिया था। सन् ८८० ई० में बेजेन्टाइन सम्राट् बासिल प्रथम ने द्वितीय महत्वपूर्ण दुर्ग टारेन्टो को मुसलमानों से छीन लिया, और कुछ ही वर्ष बाद, बचे हुये अरबों को कैलेब्रिया से निकाल बाहर किया। इस प्रकार मुसलमानों के प्रसार का अन्तिम चरण, जिसका आरम्भ ढाई सौ वर्ष पूर्व अरब के सुदूरस्थ देश से हुआ था, समाप्ति पर आगया। वे असंख्य मुसलमानी गुम्बद जिनके ऊपर चढ़ कर सिसिली और अफ्रीका से आने वाले अरब-जहाजी बेड़ों के आगमन की घोषणा की जाती थी, आज भी नेपुल्स के दक्षिणी तट की अनुपम शोभा को बढ़ा रहे हैं।

सन् १०६० ई० में टैंक्रेड डे हौटेविले (Tancred de Hauteville) के पुत्र काउण्ट रोजर (Count Roger) ने मसीना (Messina) पर अधिकार कर लिया और यहीं से सिसिली के द्वीप पर नार्मन-विजय आरंभ होती है, जो सन् १०७१ ई० में पालरमो और सन् १०८५ ई० में सरकोसा पर अधिकार कर लेने के बाद अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गयी तथा सन् १०९१ ई० में सिसिली की विजय पूर्ण हो गयी। सन् १०९० ई० में रोजर ने माल्टा पर अधिकार कर लिया। नार्मनों के पास पहले से ही देश की प्रधान भूमि पर दृढ़ अधिकार विद्यमान था, इसलिए इन नव-विजित क्षेत्रों में वे निरापद और आशंका-रहित थे।

सिसिली में, नार्मनों के अधीन एक कौतुकपूर्ण मिली-जुली संस्कृति का उदय हुआ। इस द्वीप पर अरबों के सम्पूर्ण शासनकाल में पूर्वी संस्कृति की ऐसी धाराएँ बहती रहीं जो पुरानी सभ्यताओं से समृद्ध और ओतप्रोत थीं। इन सांस्कृतिक धाराओं ने, नार्मनों के शासनकाल में, यूनान और रोम की उत्तराधिकारिणी उत्कृष्ट संस्कृति से मिल-जुल कर एक नया रूप धारण किया और इस प्रकार नार्मन सभ्यता एक अलग सभ्यता बन गयी। अब तक अरब, लड़ाइयों और आपस के झगड़ों में कुछ ऐसे उलझे हुये थे कि उन्हें ललित-कलाओं को विकसित करने का अवसर ही नहीं मिला। किन्तु अब इस नई प्रस्फुटित अरब-नार्मन कला एवम् सभ्यता के वैभवपूर्ण अभ्युदय में उनकी प्रतिभा पूर्ण रूप से फूली-फली।

रोजर प्रथम यद्यपि स्वयं एक असभ्य ईसाई था किन्तु उसने अपनी पैदल सेना में अधिकांश मुसलमानों को ही भर्ती किया था। उसने अरब-विद्या को संरक्षण दिया। उसके दरबार में पूर्वी दार्शनिक, ज्योतिषी एवम् चिकित्सक जमा रहते थे। ईसाइयों से अलावा लोगों को, अपनी रीति-रस्म पर चलने की पूरी स्वतंत्रता दे रखी थी। पालरमो में उसका दरबार पश्चिमी से अधिक पूर्वी प्रतीत होता था। इसके बाद, सौ वर्ष से अधिक समय तक, सिसिली में एक ऐसे अद्भुत ईसाई शासन का दृश्य वर्तमान रहा, जिसमें मुसलमान कुछ सर्वोच्च पदों के अधिकारी रहे।

कागज पर यूनानी और अरबी में लिखित यूरोप का एक प्राचीन लेख है जिसको रोजर प्रथम की रानी ने सम्भवतः सन् ११०९ ई० में एक आदेश के रूप में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जारी कराया था। अधिक सम्भव है कि इसका कागज सिसिली का बना हुआ न हो। अपितु इसको वहाँ के अरबों ने पूर्व से मंगाया हो।

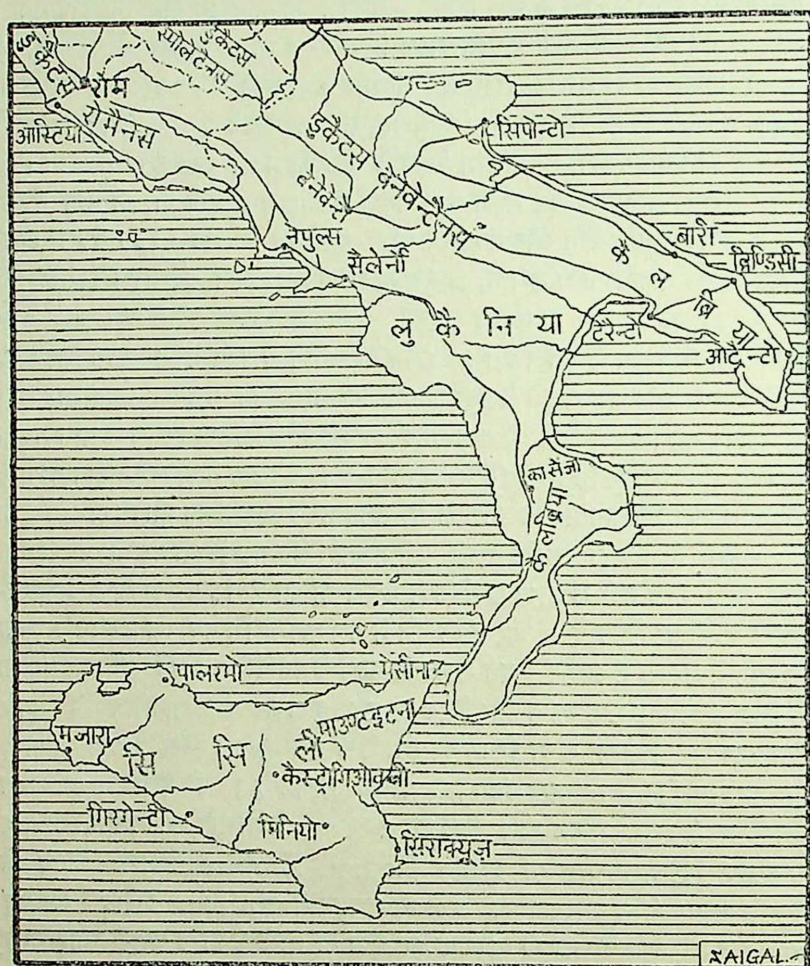
रोजर प्रथम के शासनकाल में सिसिली के अरबों द्वारा आरम्भ की गयी विचित्र एवं आकर्षक संस्कृति, उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी रोजर द्वितीय [सन् ११३० ई० से लेकर सन् ११५४ ई० तक] तथा फ्रेडिक द्वितीय के समय में, अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी। रोजर द्वितीय मुसलमानों जैसी पोशाक धारण किया करता था। इसलिए उसके आलोचक उसको अर्द्ध-सभ्य [Half Heathen] बादशाह कहा करते थे। उसकी एबा पर अरबी ढंग के बेल-बूटे बने हुए होते थे। उसके पोते के शासनकाल में एक इतिहासकार ने पालरमो की ईसाई स्त्रियों को मुस्लिम फैशन के वस्त्रों को प्रयोग करते हुये पाया था।

रोजर द्वितीय के दरबार का सबसे प्रमुख रत्न अल-इदरीसी था, जो मध्ययुग का सब से प्रसिद्ध भूगोल-वेत्ता और मानचित्र बनाने वाला था। सन् ११०० ई० में स्पेन-निवासी अरब माता-पिता से उत्पन्न, अबू-अब्दुल्ला मुहम्मद इब्न मुहम्मदुल-इदरीसी की सन् ११६६ ई० में मृत्यु हो गयी। इसने अपने जीवन का सब से बड़ा कार्य रोजर द्वितीय की संरक्षकता में पूरा किया। उसने रोजर-काल के संबंध में जो पुस्तक लिखी है, उसमें टालमी और अल-मसूदी के पूर्वलिखित कार्यों की मुख्य बातों का संग्रह मात्र नहीं है, अपितु वह विभिन्न देशों को तथ्य-संग्रह हेतु भेजे गये विभिन्न निरीक्षकों द्वारा प्रस्तुत मौलिक प्रतिवेदनों [Reports] पर आधारित है। इदरीसी ने अपने संग्रहीत तथ्यों के आधार पर जो विवेचनात्मक लेख लिखा है, उससे उसके उल्लेखनीय व्यापक दृष्टिकोण का पता चलता है। यहाँ तक कि 'पृथ्वी की गोलाई' जैसे गूढ विषयों पर भी उसकी पैनी दृष्टि थी। नील नदी के उद्गम के संबंध में उसकी धारणा थी कि वह अफ्रीका के भूमध्य-रेखीय पठारों पर स्थित हैं। पर इसके बारे में यह ज्ञात है कि यह बात उन्नीसवीं शती के मध्य में प्रकाश में आई। इस महानतम् कार्य के अतिरिक्त, अपने नार्मन संरक्षक के लिए उसने एक रजत-ग्लोब और विश्व का एक वृत्ताकार रजत-मानचित्र भी तैयार किया था। सिसिली के दो ईसाई सुल्तानों में से एक सुल्तान रोजर द्वितीय का पौत्र, होहेन-स्टेफेन [Hohenstaufen] का फेड्रिक द्वितीय है। सिसिली से अतिरिक्त जर्मनी पर भी इसका शासन था। उसने सन् १२२० ई० के पश्चात् 'पवित्र रोमन साम्राज्य के सम्राट' [Emperor of Holy Roman Empire] की उपाधि धारण की और जेरुसलम की उत्तराधिकारिणी ब्रीने की राजकुमारी इसाबेला से विवाह कर सन् १२२५ ई० में जेरुसलम का भी बादशाह बन गया था। इस समय के सम्पूर्ण ईसाई जगत् में सम्राट् फ्रेड्रिक सर्वाधिक सत्तासम्पन्न शासक माना जाता था। विवाह के तीन वर्ष पश्चात् उसने एक धर्म-युद्ध में भाग लिया था जिसमें वह मुस्लिम विचार-धारा से विशेष प्रभावित हुआ।

अपनी निजी आदतों एवं राजकीय जीवन के मामले में फ्रेड्रिक पर अर्द्धपूर्वी छाप थी। उसका एक अन्तःपुर था। उसके दरबार में सीरिया और बगदाद के दार्शनिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहा करते थे जो लम्बी दाढ़ियाँ रखते तथा ढीली-ढाली एबा पहनते थे। पूर्वी देशों की गानेवाली कुमारियाँ तथा पूर्व और पश्चिम के यहूदी उसके दरबार में फल-फूल रहे थे। संपूर्ण इस्लामी जगत् से और विशेषकर मिस्र के सुल्तान से उसने राजनीतिक एवं व्याव-



सायिक सम्बन्ध स्थापित किये। सूर्य की गर्मी के द्वारा शुतुर्मुर्ग के अण्डों को सेने का तरीका जानने के लिए उसने मिस्र से विशेषज्ञों को बुलाया था। उसने सीरिया से कुशल बाज़-साधकों को बुलाकर, बाज़ों को सिखलाने का कार्य अपनी आँखों से देखा और बाज़ों की आँखों पर पट्टी बाँध कर यह जानने का यत्न किया कि वह केवल सूंघ कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपना भोजन ढूंढ़ सकते हैं या नहीं। उसने थियोडोर (Theodore) नामक एक जैकोबाइट ईसाई से, जिसे उसने एण्टियाक से बुला कर अपने दरबार का फलित ज्योतिषी नियुक्त किया था, श्येन-विद्या सम्बन्धी एक अरबी पुस्तक का अनुवाद कराया। फ्रेड्रिक ने श्येन-विद्या [बाज़बाजी-Falconry] पर जो पुस्तक लिखी है उसका आधार वस्तुतः यही अनुवाद तथा इसके अतिरिक्त एक और अनुवाद था जो फारसी से किया गया था। फ्रेड्रिक की यह पुस्तक आधुनिक प्राकृतिक इतिहास की प्रथम पुस्तक है। राज-ज्योतिषी के रूप में थियोडोर के पहले मिकाइल स्काट नियुक्त था। यह सन् १२२० ई० से लेकर सन् १२३६ ई० तक सिसिली और इटली में मुस्लिम स्पेन की विद्या का प्रतिनिधित्व करता रहा। स्काट ने, सम्राट् फ्रेड्रिक के लिए, अरस्तू के जीव-विज्ञान एवं प्राणि-विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थों तथा इब्नसेना की उन पर की गई टीका का अरबी से लैटिन भाषा में सारांश लिखा और उसको अपने संरक्षक के ही नाम समर्पित कर दिया। खोज, प्रयोग और अनुसन्धान की यह आधुनिक भावना फ्रेड्रिक के दरबार की प्रमुख विशेषता थी। इससे इटली के पुनर्जागरण-काल का आरंभ होता है।

सम्राट् फ्रेड्रिक की एक महानतम् देन, सन् १२२४ ई० में, नेपुल्स के विश्व-विद्यालय की स्थापना है। योरोप का यह प्रथम विश्वविद्यालय है जो एक निश्चित् राजाज्ञा [चार्टर] के अनुसार स्थापित किया गया था। इस विश्वविद्यालय में फ्रेड्रिक ने अरबी पाण्डुलिपियों का एक महान संग्रह किया था। उसने अरस्तू तथा इब्नेरुश्त की जिन पुस्तकों के अनुवाद कराये थे उनको भी इस विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में सम्मिलित किया। इन अनुवादों की प्रतियाँ पेरिस तथा बाल्गोना के विश्वविद्यालयों में भी भेजी गयी थीं। नेपुल्स विश्वविद्यालय के छात्रों में थामस एकिनास Thomas Aquinas की भी गणना होती है। चौदहवीं तथा उसके बाद की सदियों में भी यूरोप के बहुत से विश्वविद्यालयों में अरबी का अध्ययन होता रहा। आक्सफोर्ड एवं पेरिस के विश्व विद्यालयों में भी अरबी का अध्ययन होता था किन्तु उनका उद्देश्य पूर्णतया भिन्न था। ये विश्वविद्यालय मुस्लिम देशों के लिए ईसाई मिशनरी [उपदेशक] तैयार करते थे।

सिसिली, जो दो संस्कृतियों का मिलन-विन्दु था, प्राचीन एवम् मध्ययुगीन ज्ञान के आदान-प्रदान का अत्युत्तम माध्यम सिद्ध हुआ था। उसकी जन-संख्या में एक यूनानी तत्व भी था जो यूनानी भाषा का प्रयोग करता था। मुसलमान अरबी बोलते थे। विद्वानों का ऐसा वर्ग भी था जो लैटिन का ज्ञाता था। सरकारी कागजों एवं आदेशों में ये तीनो भाषाएँ बराबर प्रयुक्त होती थीं। बहुभाषा-भाषी पालरमो में भी ये तीनो भाषाएँ प्रचलित थीं।

सिसिली के नार्मन बादशाहों और उनके उत्तराधिकारियों के अधिकार में केवल सिसिली ही नहीं, अपितु दक्षिणी इटली भी उनके ही अधिकार में था। अतः मुस्लिम संस्कृति के विभिन्न तत्वों को इटली प्रायद्वीप तथा मध्य यूरोप में पहुँचाने के लिए उन्होंने एक सेतु का कार्य किया। दसवीं शती के मध्य में आल्प्स पर्वत के उत्तरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्षेत्रों में अरबी विद्या के चिह्न स्पष्टतः दृष्टिगोचर होने लगे थे। यह सम्भव है कि 'दान्ते' के वे विचार, जो उसने परलोक के सम्बन्ध में प्रस्तुत किये हैं, किसी विशेष अरबी पुस्तक से न लिये गये हों किन्तु इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है कि उनका उद्गम पूर्वी है। यह दूसरी बात है कि उसने उसे यूरोपीय ज्ञान के किसी अन्य स्रोत के माध्यम से प्राप्त किया हो। कला, विज्ञान एवं साहित्य के क्षेत्रों में भी विभिन्न स्रोतों द्वारा पूर्व की ओर से इस प्रकार का प्रवेश प्रत्यक्ष है। पैलेस्टाइन के गिरजे की पच्चीकारी और लेख से यह सिद्ध होता है कि सिसिली और इटली प्रायद्वीप के मुसलमान शिल्पकार एवं कलाकार, ईसाई-शासन के पुनः आ जाने के पश्चात् भी बहुत समय तक, फलते-फूलते रहे। पालरमो के राजकीय प्रासाद में मुस्लिम शासकों ने एक प्रसिद्ध बुनाई-घर की स्थापना की थी जिसमें यूरोप के बादशाहों की राजकीय-पोशाकें तैयार की जाती थीं जिन पर अरबी लेख कढ़े हुए होते थे। यूरोप में पूर्वी वस्त्रों की माँग इतनी बढ़ी हुई थी कि उस समय में जब तक कोई यूरोपीय कम से कम एक पूर्वी लबादे का स्वामी न होता, उसको अपने, अच्छे वस्त्र धारण करने वाला होने पर विश्वास नहीं होता था।

पन्द्रहवीं शती में जब वेनिस का सम्पत्तिशाली नगर बड़ी तेजी के साथ मुस्लिम फैशन को धारण करता और उसका प्रसार करता जा रहा था, उस समय इटली के कारखानों में जिल्दसाजों ने पूर्वी आदर्शों पर पुस्तकों की जिल्दें तैयार करनी आरंभ कीं। फलतः अरबी जिल्दसाजी की विशेषताएँ, जिनमें फ्लैप [Flap—जिल्द से आगे निकला हुआ भाग] भी सम्मिलित है जो उसके सामने के किनारे की हिफाज़त के लिए ऊपर मोड़ कर लगाया जाता था, ईसाई पुस्तकों पर भी दृष्टिगोचर होने लगीं। उसी के साथ-साथ इटली के बहुत से नगरों में पूर्वी कारीगरों से चमड़े की जिल्दें बनाने और उन पर सजावट की कला की नवीन पद्धति भी सीखी जा रही थी। इसके अतिरिक्त वेनिस एक अन्य अरबी शिल्प अर्थात् पीतल पर सोने-चाँदी तथा ताँबे के जड़ाऊ कामों का भी केन्द्र बन गया था। सिसिली ने मुस्लिम संस्कृति के प्रसार करने में इतना महत्वपूर्ण कार्य किया है कि उसको धर्म-युद्ध [Crusades] काल में महत्व की दृष्टि से स्पेन के पश्चात् दूसरा तथा सीरिया से उच्च स्थान दिया जा सकता है।

जिस समय यूरोप से मुसलमानों की शक्ति के अन्तिम चिह्न भी मिटते जा रहे थे उस समय बगदाद की खिलाफत, आन्तरिक षडयंत्रों एवं रक्तपातों के दलदल में फँस कर अन्तिम साँसें ले रही थी। नवीं शती में तुलोनिड राजवंश का जो विकास हुआ उसने केवल आगामी घटनाओं का आभास ही नहीं करा दिया था अपितु यह भी बता दिया था कि ये घटनाएँ किस प्रकार से घटने वाली हैं। तुलोनिड वंश वस्तुतः उन उद्दण्ड एवं उच्छृंखल तुर्कों के राजनीतिक संगठन का प्रतीक था जो खिलाफत के बीच उस समय तक असंगठित रूप में अप्रत्यक्ष सा विद्यमान था। इस वंश के पश्चात्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुर्कों के दूसरे तथा अत्यधिक महत्वपूर्ण राजवंश का उदय होने वाला था। अहमद इब्न तोलेन ने सन् ८६८ ई० में सत्ता पर अधिकार कर लिया था। खिलाफत के खण्डहरों पर जिन अनेक रियासतों की नीवें डाली गयी थीं उनके प्रवर्तकों में अहमद इब्न तोलेन एक अद्भुत व्यक्ति था। इन रियासतों ने केन्द्रीय सरकार से अपना सम्बन्ध या तो पूर्ण रूप से विच्छेद कर लिया था, या ये बगदाद के खलीफा पर नाममात्र के आश्रित थे। अहमद ने स्वयं एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया कि राज्य का एक सैनिक अपने दृढ़ संकल्प, अपनी सुदृढ़ भुजाओं तथा अपने दासों की सहायता से किस प्रकार खिलाफत के स्थूल साम्राज्य से, सैनिक एवं राजनीतिक शक्ति हथिया सकता है। लेकिन टोलेनिड और इस प्रकार के कई अन्य वंशों को जिन-जिन देशों पर शासन करने का अवसर मिला है उनको वहाँ कोई राष्ट्रीय आधार प्राप्त नहीं था, और इसलिए उनका शासन अधिक समय तक टिकाऊ न रह सका। इन वंशों की कमजोरी यह थी कि उनके राज्यों में उनके समर्थक अपने निज के कबीले या जाति का कोई सुसंगठित दल न था। स्वयं शासकों की स्थिति अनामंत्रित अतिथियों की सी होती थी। इनको अपने अंगरक्षकों को, जो वस्तुतः उनकी सेना का भी कार्य करते थे, विभिन्न बाहरी स्रोतों से भर्ती करना पड़ा था। ऐसे शासन को केवल ऐसे ही लोग चला सकते थे जो बड़े ही प्रभावशाली हों और इन शासनों में शक्तिशाली संस्थापक की शक्ति में शिथिलता आते ही उसका छिन्न-भिन्न होना आरम्भ हो जाता था। इब्न तोलेन ने जिस रियासत की नींव डाली थी उसको अब्बासियों ने सन् ६०५ ई० में उसके पुत्र से छीन लिया। यह अहमद के बाद चौथा ही शासक था।

एक और पृथक राजवंश जो दो सौ वर्ष से अधिक समय तक शासन करता रहा, फातिमी के नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश ने इतिहास में एक अध्याय की सृष्टि की है जो ध्यान देने योग्य है। यह शियों का एक मात्र बड़ा राज्य था जो सन् ६०६ ई० में ट्यूनिस में स्थापित हुआ था। वस्तुतः यह समस्त इस्लामी जगत के धार्मिक नेतृत्व, जो अब तक बगदाद के अब्बासियों के हाथ में था, के विरुद्ध खुली हुई चुनौती थी। यह राज्य उस समय उत्तरी अफ्रीका तथा मिस्र तक फैला था, और फातिमियों के शासनकाल में काहिरा नगर एक नवीन वैभव के शिखर पर पहुँचा। किन्तु उसकी इतनी समृद्धि होते हुए भी फातिमी-वंश अधिक समय तक न टिक सका। नील नदी की बाढ़ पर निर्भर, इस शासन की विपन्न प्रजा आये दिन अकाल, ताऊन तथा इन जैसी ही यंत्रणादायक कर वसूल करने वालों की मार से सदैव त्रस्त रहती थी। इसके साथ-साथ षड़यंत्रों एवं व्यभिचारों की पुरानी आदतों ने मिल-जुल कर फातिमियों की शक्ति को क्षीण कर दिया। सन् ११७१ ई० में, 'धर्म-युद्ध' के दौरान में, आखिरकार प्रसिद्ध सुल्तान सलाहुद्दीन ने इस राज्य को उखाड़ फेंका।

राजनीतिक दृष्टिकोण से फातिमी-काल में मिस्र के इतिहास में एक नये अध्याय का आरम्भ होता है। फिरऔनों के बाद इस फातिमी काल में ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सर्वप्रथम, शक्ति और पूर्ण स्वतंत्रता मिस्र को प्राप्त हुई। इसकी नींव धार्मिक आधारों पर डाली गयी थी। एक ईरानी उपदेशक यात्री सन् १०४६ ई० से लेकर सन् १०४६ ई० तक मिस्र में रहा था। उसने बड़े ही रोचक ढंग से यहाँ का चित्र खींचा है। उसका कथन है कि खलीफा के प्रासाद में ३० हजार व्यक्ति रहते थे। इनमें १२ हजार नौकर, तथा एक हजार सवार और पैदल रक्षक थे। उसने नवयुवक खलीफ़ा को एक त्योहार के अवसर पर एक खच्चर पर सवार देखा था। वह मनोहर आकृति वाला था, और उसकी दाढ़ी मुड़ी हुई थी। वह पगड़ी तथा खफ्तान (Caftan) धारण किये हुए था। नौकर, खलीफा के सिर पर एक बहुमूल्य रत्नजटित छत्र लगाये हुए चल रहा था। नील नदी के तट पर पाल वाली सात बड़ी नावें खड़ी हुई थीं। ये ७५ गज स्थान को घेरे हुए ६० शहतीरों द्वारा परस्पर और डेक से साथ बँधी हुई थीं। खलीफा के पास राजधानी में २० हजार मकान थे। इनमें से अधिकांश ईंटों के बने हुए थे। ये प्रायः पाँच-पाँच छः-छः मंजिल के थे। इनके अतिरिक्त खलीफा के पास इतनी ही दूकानें भी थीं जो दो से लेकर दस दीनार तक मासिक किराये पर उठती थीं। नगर की प्रधान सड़कें छतदार थीं और उन्हें दीपकों से प्रकाशित किया जाता था। दूकानदार निर्धारित मूल्य पर वस्तुएँ बेचते थे। यदि कोई दूकानदार किसी ग्राहक को धोखा देता था, तो उसको ऊँट पर बिठा कर नगर भर में घुमाया जाता था और वह घंटी बजा-बजा कर अपने अपराध की स्वीकृति को प्रकट करता था। जौहरियों और सर्राफों की दूकानें भी बिना ताला लगाये हुए छोड़ दी जाती थीं। सम्पूर्ण देश को किसी न किसी अंश तक शान्ति और समृद्धि का सुख प्राप्त था। यात्री उपदेशक यह सब देख कर बड़े उत्साह से कहता है कि, "मैं इस देश की सम्पत्ति की न तो थाह पा सका हूँ और न इसका कोई अनुमान ही लगा सका हूँ। मैंने जैसी समृद्धि यहाँ देखी वैसी अन्यत्र नहीं पायी।"

जिस युग में फातिमी वंश मिस्र तथा उत्तरी अफ्रीका पर शासन कर रहा था, उस समय बगदाद के प्राचीन साम्राज्य के केन्द्र का तेजी से विघटन हो रहा था। कुछ दिनों तक सलजूकी तुर्कों के हाथ में शक्ति रही। यह शक्ति यहाँ तक बढ़ी कि उन्होंने तुग़रिल नाम के अपने एक व्यक्ति को सन् १०३७ ई० में खलीफा की राजधानी में ही शासक के पद तक पहुँचा दिया। तुर्की कबीलों के नये जवान, सेना में बड़ी संख्या में भर्ती होने लगे। और प्रत्येक दिशा में सलजूकियों ने अपनी विजय-दुन्दुभी बजाई। फलतः संपूर्ण पश्चिमी एशिया एक बार पुनः इस्लामी साम्राज्य के अन्तर्गत संगठित हो गया और मुस्लिम सेना की खोई हुई धाक फिर लौट आयी। मध्य एशिया से एक नई जाति विश्व-सार्वभौमिकता के लिए इस्लामी संघर्ष को सफल बनाने के हेतु अपना रक्त बहा रही थी। इस जाति के जंगली नास्तिकों ने जहाँ एक ओर मुहम्मद साहब के अनुयायियों की गरदनों को अपने पैरों से रौंदा वहाँ साथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ही साथ अपने विजितों के धर्म को स्वीकार कर उसके उत्कट अग्रणीय नेता भी बन गये। इस्लाम धर्म के बहुरंगी इतिहास में यह कोई असाधारण बात न थी। तेरहवीं शती में सलजूकियों के चचेरे भाई मंगोलों तथा चौदहवीं शती में उनके अन्य सजातीय उस्मानी तुर्कों ने इसी कहानी की पुनरावृत्ति की। इस्लाम के राजनीतिक इतिहास के सर्वाधिक अवनतिकाल में भी, इस्लाम ने धार्मिक पहलू से अत्यंत महत्वपूर्ण विजयें प्राप्त कीं।

पर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस्लाम के लिए अत्यन्त अंधकार-पूर्ण समय आगया था। सन् १२१६ ई० में चंगेज़ खाँ अपने ६० हजार जंगली-मंगोलों के दल-बादल के साथ मैदान में आया। ये लोग द्रुतगामी घोड़ों पर सवार, विचित्र प्रकार के धनुष-बाण से युक्त जिधर जाते, तबाही और बरबादी ढाह देते थे। पूर्वी इस्लाम के सांस्कृतिक केन्द्रों को उन्होंने लगभग नेस्तनाबूद सा कर दिया। जहाँ वैभवशाली महल एवं पुस्तकालय खड़े थे, वहाँ निर्जन मरुस्थल तथा खण्डहर दिखाई देने लगे। वे जिधर से भी निकलते, मार्ग को रक्तरञ्जित बनाते जाते थे। हिरात में एक लाख निवासी रहते थे, लेकिन इनके आक्रमण के पश्चात् केवल ४०हजार रह गये। बुखारा की मस्जिद जो अपनी पवित्रता तथा विद्या के लिए प्रसिद्ध थी, मुगलों के घोड़ों का अस्तबल बन गयी। समरकन्द और बल्ख के अगणित निवासियों की या तो निर्दयता-पूर्वक हत्या कर डाली गयी या उन्हें बन्दी बना कर जंजीरों में जकड़ दिया गया। ख्वारिज्म की ईंट से ईंट बजा दी गयी। इसके पश्चात् बगदाद की बारी आयी। कहा जाता है कि चंगेज़ खाँ ने बुखारा की विजय के अवसर पर अपने एक भाषण में कहा था कि, "मैं खुदा का एक कोड़ा हूँ, जो लोगों को उनके अपराधों का दण्ड देने के लिए भेजा गया है"। जो भीड़-भाड़ वह अपने साथ लेकर आया था, उसने तेरहवीं शती के पूर्वार्ध में चीन से लेकर एड्रियाटिक तक प्रत्येक राज्य की नींव हिला दी थी। इस तूफान में रूस का एक भाग नष्ट हो गया। मध्य-यूरोप में पूर्वी साइलेशिया तक ये लोग घुस आये थे। चंगेज खाँ के पुत्र तथा उत्तराधिकारी की मृत्यु सन् १४१२ ई० में हुई। इसी घटना से पश्चिमी यूरोप मंगोलों के जंगली जत्थों से बच गया किन्तु बगदाद मुक्त न रहा।

सन् १२५३ ई० में चंगेज खाँ का पौत्र हलाकू एक महती सेना के साथ खिलाफत को तहस-नहस करने की इच्छा से निकला। अब मुगल आक्रमणकारियों की दूसरी लहर आयी। पहले तो यह उन समस्त छोटे-छोटे राज्यों को, जो खिलाफत के खण्डहरों पर पनप रहे थे, बहा ले गयी। जनवरी सन् १२५८ ई० में हलाकू के मंगोल साथी राजधानी की दीवारों पर आक्रमण कर रहे थे। शीघ्र ही एक गुम्बद तोड़ कर मार्ग बना लिया गया। खलीफा का वजीर, एक नस्तूरी पादरी को साथ लिये [क्योंकि हलाकू की एक पत्नी ईसाई थी] सन्धि की शर्तों को जानने के लिए आया। पर हलाकू ने मिलने से इनकार कर दिया। साथ ही उसने उन चेतावनियों की भी परवाह न की, जो इसके पूर्व, बगदाद के शान्ति-नगर और अब्बासी खिलाफत की ओर आँख उठाने वालों की हुई दुर्गति की ओर संकेत करती थीं। हलाकू से यह भी कहा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गया कि यदि खलीफा की हत्या कर दी गयी तो समस्त विश्व का प्रबन्ध अव्यवस्थित हो जायगा। सूर्य अपना मुख छिपा लेगा, मेघ बरसना छोड़ देंगे और पौधे उगना बन्द कर देंगे। पर हलाकू अपने ज्योतिषियों की सलाहों का आभारी था। उसको अपने सौभाग्य का भरोसा था। दस फरवरी को मंगोल जत्थे नगर में घुस आये। और अभागा खलीफा तथा उसके ३०० सरकारी अधिकारी बिना किसी शर्त के हथियार डालने के लिए दौड़े। दस दिन के पश्चात् वे सबके सब मौत के घाट उतार दिये गये। नगर को पूर्णरूप से लुटवा कर उसमें आग लगवा दी गयी। आबादी का बहुत बड़ा भाग जिसमें खलीफा का परिवार भी सम्मिलित था, दुनियाँ से मिटा दिया गया। नगर की गलियों में बिना दफनायी हुई लाशों की दुर्गन्ध इतनी खराब थी कि कुछ दिनों के लिए हलाकू को शहर से बाहर चला जाना पड़ा। चूँकि हलाकू ने बगदाद को अपना निवासस्थान बनाना चाहा था, इसलिए वहाँ पर बरबादी इतनी नहीं हुई जितनी कि अन्य शहरों में हुई थी। नस्तूरी पादरी पर विशेष अनुकम्पा की गयी। कुछ स्कूल और मस्जिदें या तो छोड़ दी गयीं या उनकी फिर से मरम्मत करा दी गयी। मुस्लिम जगत के इतिहास में यह पहला अवसर आया था जब कि संसार में कोई खलीफा नहीं रहा, जिसका नाम जुमे के सरमन [खुतबा] में लिया जा सकता।

सन् १२६० ई० में हलाकू ने उत्तरी सीरिया पर आक्रमण किया। यहाँ उसने हलब के अतिरिक्त, जहाँ उसने लगभग ५०हजार व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार दिया, हमा [Hamah] तथा हारिम [Harim] के नगरों को भी जीत लिया। उसने अपने एक सेनानायक को दमिश्क के घेरे के लिए भेजा ही था कि अपने भाई 'खाँ महान' [Great Khan] की मृत्यु का समाचार मिला। अतः वह आगे न बढ़ सका और ईरान को लौट आया। सीरिया को जीत लेने के पश्चात् हलाकू ने यहाँ जो सेना छोड़ी थी उसको नासिरा के निकट, अरब जगत के अन्तिम मध्यकालीन राजवंश ममलूक के एक प्रसिद्ध सेनापति बेबर्स [Baybars] ने १२६० ई० में नष्ट कर दिया।

हलाकू वह प्रथम व्यक्ति था जिसने सर्वप्रथम 'खाँ द्वितीय' की उपाधि धारण की थी। सन् १२६५ ई० में इसका देहान्त हो गया। इसको मरे ५० वर्ष भी न हुए होंगे कि हजरत मुहम्मद साहब के धर्म ने अपनी एक और आश्चर्यजनक जीत प्राप्त की, जबकि 'खाँ सप्तम' ने इस्लाम को अपने शासन के राज्य-धर्म की मान्यता प्रदान की। सल्जूकियों के समान ही मंगोलों के भी सामने, मुसलमानों की सेना को किसी प्रकार की सफलता न मिली, जबकि इस्लाम के धर्म ने उनको पूर्ण रूप से जीत लिया।

उस समय सुदूर पश्चिम के मोर्चे पर इस्लाम को एक दूसरे आक्रमण का सामना करना पड़ रहा था। इसने भी हमारी सभ्यता के इतिहास के पृष्ठों पर एक स्मरणीय अध्याय लिखा है। इस काल ने इस्लाम के महानतम् कर्णधार को देखा। यह 'धर्म-युद्धों' एवं सुल्तान सलाहुद्दीन का काल था।

——):❀:(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१७—धर्म-युद्ध (क्रूसेड्स)

पूर्व एवं पश्चिम के मध्य जो संघर्ष रहा है 'धर्म-युद्ध' उसके लम्बे इतिहास के मध्यवर्ती पाठ का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्राचीन काल में जो ट्रोजन और ईरानी युद्ध हुए उनको इस कहानी का आदिकालीन, तथा आधुनिक पश्चिमी यूरोप के साम्राज्यवादी विस्तार को इसका आधुनिकतम् पाठ समझना चाहिए। धर्म-युद्ध विशेष रूप से ईसाई-यूरोप की उस प्रतिक्रिया को व्यक्त करते हैं जो उसमें मुस्लिम एशिया के विरुद्ध उत्पन्न हुई। यह प्रतिक्रिया सन् ६३२ ई० में न केवल सीरिया तथा एशिया-माइनर में ही, वरन स्पेन और सिसिली में भी अपना प्रभाव दिखा रही थी।

इस प्रतिक्रिया के अनेक कारणों में से एक, यूरोप के ट्यूटनिक कबीलों [Teutonic Tribes] का एक स्थान से दूसरे स्थान को बदलते रहना तथा उनकी लड़ाकू प्रवृत्ति भी थी, जिनके इतिहास के प्रकाश में आते ही, यूरोप का मानचित्र बदल गया था। इसके अलावा, हजारों योरोपीय तीर्थयात्रियों के केन्द्र—जेरुसलम के 'पवित्र समाधि गिरजाघर' को एक फातिमी खलीफा ने सन् १००६ ई० में नष्ट कर डाला था जिसकी कुञ्जियाँ, सन् ८०० ई० में जेरुसलम के पादरी-प्रमुख ने, 'आशीर्वाद' के रूप में शार्लीमान के पास भेज दी थीं। साथही ईसाई तीर्थ-यात्रियों को इस्लामी एशियामाइनर से होकर गुजरते समय नाना प्रकार की मुसीबतों का सामना करना पड़ता था।

लेकिन धर्म-युद्ध का तत्कालीन कारण, बेजेन्टाइन के साम्राट् एलेक्सियस काम्ने-नस [Alexius Comnenus] की वह प्रार्थना थी जो उसने सन् १०६५ ई० में पोप अर्बन द्वितीय से की थी। इस सम्राट् के एशियायी अधिकृत क्षेत्रों को, मारमोरा के तट तक मुसलमान सल्जूकियों ने अपने अधिकार में कर लिया था और मुसलमानों के आक्रमणों से कुस्तुन्तुनिया को भी भय उत्पन्न हो गया था। पोप को इस प्रार्थना में एक ऐसा अवसर दिखाई पड़ा जिससे लाभ उठा कर वह यूनानी गिरजाघर तथा रोम को पुनर्गठित कर सकता था, जिसमें, सन् १००६ ई० से लेकर सन् १०५४ ई० तक बड़ा मतभेद चलता रहा था।

पोप अर्बन ने २६ नवम्बर सन् १०६५ ई० को दक्षिणी-पूर्वी फ्रान्स के क्लर्मॉण्ट [Clermont] नगर में इतिहास का कदाचित् सर्वाधिक प्रभावशाली भाषण देकर, ईमानदारों (ईसाइयों) को चुनौती देकर प्रेरित किया था कि 'पवित्र समाधि' [Holy Sepulchre] की ओर जाने वाली सड़क पर चल पड़ो और उसे दुष्ट जाति से छीन कर अपने अधिकार में लो तथा उन्हें अपना दास बना लो। "यह ईश्वर की आज्ञा है!" के नारे से पृथ्वी गूँज उठी और यह 'नारा' पर्वत-मैदान सब ओर सबकी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्तरात्माओं को स्पर्श कर गया। दूसरे वर्ष की बसन्त ऋतु में डेढ़ लाख व्यक्तियों का दल-बादल, जिस में अधिकांश फ्रैन्क और नार्मन थे, पोप के आह्वान को स्वीकार कर कुस्तुन्तुनिया पर आ डटा। इस प्रकार ईसाइयों के प्रथम धर्म-युद्ध का समारम्भ हुआ। इन युद्धों को धर्म-युद्ध इस लिए कहते हैं कि इनमें भाग लेने वाले ईसाई 'क्रास' को अपने सीनों पर 'बैज' के रूप मे धारण किये थे।

किन्तु इन युद्धों में भाग लेने वाले ईसाइयों मे सभी लोग, धार्मिक लक्ष्य से प्रेरित नहीं थे। अनेक नेता, जिनमें बोहिमाण्ड [Bohemond] भी एक था, ऐसे थे, जिनकी नियत अपने लिये शासन-क्षेत्र प्राप्त करने की थी। पीसा, वेनिस और जेनोवा के सौदागरों को इन युद्धों में अपना व्यापारिक लाभ दिखाई पड़ता था। वीर, उच्छृंखल, और अतिसाहसी लोगों को धार्मिक जोश के साथ एक नये जमघट का विचित्र अवसर प्राप्त हुआ था। बहुत से अपराधियों को इन युद्धों के द्वारा प्रायश्चित्त करने का सुयोग हाथ आया था। फ्रान्स, लोरेन, इटली और सिसिली के विशाल जन-साधारण को, उनकी दयनीय आर्थिक एवं सामाजिक स्थितियों के कारण, क्रास के हेतु युद्ध करने में, त्याग की अपेक्षा, अपनी विपन्नावस्था से छुटकारा पाने का अधिक लोभ था।

साधारणतया धर्म-युद्धों की संख्या ७ से ६ तक बतायी जाती है; पर यह किसी भी प्रकार से ठीक नहीं है। इन युद्धों का तारतम्य, कम व बेश, चलता रहा और इन युद्धों को किसी सीमा द्वारा पृथक नहीं किया जा सकता। इनके विभाजन का अधिक विवेचन इस प्रकार हो सकता है कि प्रथम काल सन् ११४४ ई० तक जारी रहा; यह विजय-काल है। दूसरा मुस्लिम-प्रतिक्रिया काल है; यह सुल्तान सलाहुद्दीन की शानदार विजय में समाप्त होता है। तीसरा काल क्षेत्रीय एवं छोटे-छोटे युद्धों का है, जो सन् १२६१ ई० तक चलते रहे; इस काल में धर्म-युद्ध करने वालों ने सीरिया की मुख्य भूमि पर पग रखने का अन्तिम स्थान भी खो दिया। विजय-काल, द्वितीय धर्म-युद्ध [सन् ११४७ ई० से सन् ११४६ ई० तक] से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। और तीसरा काल तेरहवीं शती के अर्त-पर्त में आता है। इस अन्तिम काल का एक धर्म-युद्ध सन् १२०२ ई० से लेकर सन् १२०४ ई० तक कुस्तुन्तुनिया के विरुद्ध, और दो धर्म-युद्ध सन् १२१८ ई० से लेकर सन् १२२१ ई० तक मिस्र के विरुद्ध लड़े गये, पर उनसे कोई लाभ नहीं हुआ; और सन् १२७० ई० में एक धर्म-युद्ध ट्युनिसिया के विरुद्ध भी लड़ा गया।

प्रथम धर्म-युद्ध करने वालों ने कुस्तुन्तुनियाँ के अपने पड़ाव से निकल कर एशिया-माइनर के मार्ग से बढ़ना आरम्भ किया। एलेक्जियस [Alexius] ने लगभग समस्त धर्म-युद्ध के नेताओं से शपथ-पूर्वक उनकी वफादारी की प्रतिज्ञा करा ली थी। वह इन लोगों के सफल बढ़ाव के कारण प्रायद्वीप के पश्चिमी आधे भाग पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सलजूकों का राज्य

ईसोनियम
रूम का राज्य
आर्मेनिया
का राज्य
एडेसा की काउण्टी
एडेसा
तुर्क
अन्ताकिया
अन्ताकिया का सूबा
अलरक्का
साइप्रस
अलमरकब
तर्तूस
अताबिकों का राज्य
हिम्स
तदमुर
त्रिपोली
जुबैल
बैरूत
सीडन
दमिश्क
टायर
एकरे
राज्य
केसरिया
बसरा
नेबुलस
जाफा
जेरूसलम
असक़लान
गज़्ज़ा
अल-अरीश
भूमध्य सागर
सीरिया का मरुस्थल
काहिरा की फातिमी ख़िलाफत
लालसागर

सीरिया
के
धर्म युद्ध करने वाले राज्य

सी ए ११४०—

मील

SAIC

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुनः अधिकार प्राप्त करने में सफल हो गया और इस प्रकार उसने यूरोप पर तुर्की आक्रमण को साढ़े तीन सौ वर्ष के लिए पिछाड़ दिया।

धर्मयुद्ध करने वालों ने सर्वप्रथम एडिसा, तदनन्तर तार्सस, अन्ताकिया, और हलब पर अधिकार कर लिया। यह समस्त घटनाएँ सन् १०६८ ई० में घटीं। अन्ताकिया में वह पवित्र भाला मिल गया जो हजरत ईसा की कोख में उनको क्रास पर लटकाते समय चुभोया गया था। यह भाला अन्ताकिया के किसी गिरजाघर में गड़ा हुआ पड़ा था। इस भाले के मिलते ही आक्रमणकारियों में ताजा जोश उमड़ आया। ७ जून सन् १०६६ ई० को लगभग ४०हजार धर्म-युद्ध करने वाले जेरुसेलम के फाटक के सामने पहुँच गये। इनमें से २०हजार प्रभावशाली सैनिक थे। नगर के भीतर जो फातिमी मिस्री सुरक्षित सेना थी, उसकी संख्या का अनुमान १००० किया जाता है। जेरिको (Jericho) की भाँति इन आक्रमणकारियों को यह आशा थी कि जेरुसेलम भी आसानी के साथ जीत लिया जायगा। इसलिए वे बिगुल बजाते हुए नगर के चारो ओर नंगे पैर घूमने लगे; लेकिन एक माह के घेरे के बाद ही विशेष परिणाम निकला। १५ जुलाई को आक्रमणकारी नगर पर, आक्रमण करके अंधाधुन्ध हत्याएँ करने लगे। इसमें न तो बूढ़े ही और न औरतें तथा बच्चे ही अपनी जान बचा सके। कटे हुए सिरों, हाथों और पैरों के ढेर के ढेर सड़कों और चौराहों पर, हर तरफ़ पड़े दिखाई देते थे। बहुत से धर्म-युद्ध करने वालों तथा यात्रियों ने इस विचार से कि उनकी शपथ पूरी हो गयी है अपने घरों का रास्ता लिया।

तोलोज (Tolouse)के सर्वशक्तिमान सरदार रेमाण्ड (जो फ्रांस, बोहिमाण्ड, बाल्डविन, गाडफ्रे, और टैंक्रेड का सबसे अधिक शक्तिशाली काउण्ट था) के नेतृत्व में धर्म-युद्ध करने वाली सेना ने सीरिया और पैलेस्टाइन में तीन छोटे-छोटे लैटिन राज्यों की स्थापना की, और कुछ और राज्य स्थापित होने वाले थे। किन्तु वे अधिक दिन तक टिकने वाले न थे। उनके पारस्परिक झगड़े और उनकी छोटी-छोटी शत्रुताएँ अरब इतिहास की अपेक्षा वस्तुतः यूरोपीय इतिहास में एक अध्याय जोड़ती हैं। साथही इस काल में पश्चिम से आने वाले लोगों और वहाँ के मूल निवासियों में जो शान्ति एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो चुके थे, वे ध्यान देने योग्य हैं।

ईसाई 'जेरुसलम की पवित्र भूमि' में यह विचार लेकर आये थे कि वे स्वयं यहाँ के निवासियों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ हैं। वे मुसलमानों को मूर्तिपूजक समझते थे और उनकी यह धारणा थी कि मुसलमान हजरत मुहम्मद साहब को खुदा मानकर पूजते हैं। किन्तु पहले ही सम्पर्क में उनका यह भ्रम दूर हो गया। उन लोगों ने मुसलमानों पर जो प्रभाव छोड़ा, एक अरब सम्पादक ने उसे व्यक्त करते हुये लिखा है कि, "ये लोग ऐसे पशु हैं जिनमें साहस एवं लड़ाई करने के गुणों के अतिरिक्त कोई और गुण नहीं है।" शान्ति के समय इन दोनो दलों में स्वतः जो सम्पर्क स्थापित हुआ (और निस्सन्देह यह शान्तिकाल युद्ध-काल से अधिक लम्बा हुआ करता था) उस से एक दूसरे के प्रति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन लोगों के विचारों में महान परिवर्तन हुआ। और इनमें शान्तिपूर्ण तथा पड़ोसियों जैसे सम्बन्ध स्थापित हुये। फ्रान्कों (Franks) ने विश्वस्त देशी कारीगरों और किसानों की सेवाएँ प्राप्त कीं। उन्होंने जागीरदारी की जो प्रथा प्रचलित की, उसने धीरे-धीरे भू-स्वामित्व के स्थानीय नियमों को अपना लिया। ये लोग अपने साथ घोड़े, बाज़ और कुत्ते लाये थे। वहाँ के निवासियों से शीघ्र ही इन्होंने ऐसा समझौता किया जिससे दोनो पक्षों के शिकारी-दल आक्रमण के भय से मुक्त रहें। यात्रियो तथा व्यापारियों के लिए मार्ग की सुरक्षा की सुव्यवस्था दोनो दलों की ओर से की जाती थी और साधारण रूप से दोनो ओर से उनका पालन किया जाता था। फ्रान्कों ने अपने यूरोपीय लिबास को तिरस्कृत कर दिया और अधिक आराम देने वाले एवं अधिक जँचने वाले देशी लिबास पहनने आरम्भ कर दिये। खाने पीने की वस्तुओं में फ्रान्कों को नये-नये भोजन और विशेष रूप से ऐसी चीजों का चस्का लग गया जिनमें शक्कर और मसालों का अधिक प्रयोग किया जाता था। वे पूर्वी घरों को पसन्द करने लगे क्यों कि इनमें खुला हुआ आँगन और फव्वारे होते थे।

कुछ फ्रान्कों ने देशी स्त्रियों से विवाह भी किया। इनसे जो वर्णसंकर सन्तान उत्पन्न हुई उनको पालेन्स (Poulains)—फिडीज़ (छोटे बच्चे) कहा जाने लगा। ऐसे भी उदाहरण हैं कि उन समाधियों का जो मुसलमानों और यहूदियों दोनो के निकट आदर की पात्र थीं, ये लोग भी आदर करने लगे। अपने दैनिक झगड़ों में ये लैटिन लोग प्रायः अपने सहधर्मियों के स्थान पर विधर्मियों को सहायतार्थ बुलाते थे। और इसी प्रकार मुसलमान, निजी झमेलों में, मुसलमान के स्थान पर अक्सर लैटिनों की सहायता की याचना करते थे।

सीरिया, और मिस्र के अधिकांश पर ईसाई-विजय की प्रतिक्रिया ने, जो लगभग सन् ११२७ ई० में प्रकट होने लगी थी, सलाहुद्दीन—अल-मलिकुन्नासिर अल-सुल्तान सलाहुद्दीन यूसुफ—नामक व्यक्ति को मंच के केन्द्र पर ला कर खड़ा कर दिया। कुर्द-परिवार में उत्पन्न, यह सीरियायी था। यह सन् ११५६ ई० में मिस्र का वजीर हुआ था। उसने, मिस्र से शिया मत को निकाल देने और फ्रैन्कों के विरुद्ध जेहाद करने के लिए अपने आप को अर्पित कर दिया था।

पहली जुलाई सन् ११८७ ई० को ६ दिन के घेरे के पश्चात् उसने तिब्रिया पर अधिकार कर लिया। इसके अनन्तर पड़ोस के ही 'हित्तीन' पर युद्ध हुआ। इसका आरम्भ शुक्रवार से हुआ। यह दिन मुसलमानों के नमाज का है और सलाहुद्दीन, युद्ध के आरम्भ के लिए इस को शुभ मानता था। लड़ाई का यह दिन फ्रैन्कों के लिए अत्यन्त दुःखप्रद सिद्ध हुआ। उनकी संख्या लगभग बीस हजार थी जो सबकी सब प्यास और गर्मी से तड़प रही थी। लगभग यह सम्पूर्ण सेना मुसलमानों के हाथों गिरफ्तार हो गयी। प्रमुख कैदियों में सबसे पहला नाम जेरुसलम के बादशाह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुई डे लुजिगनान का था। बहादुर सुल्तान ने इस पराजित राजा का स्वागत एक मित्र की भाँति किया किन्तु उसका साथी रिजनाल्ड (Reginald) जो कैटिलान (Chatillon) का निवासी था, एक दूसरे प्रकार के बर्ताव का अधिकारी था। यह सम्भवतः समस्त लैटिन नेताओं में सबसे अधिक साहसी किन्तु सबसे अधिक असावधान व्यक्ति था। यह धारा प्रवाह अरबी बोलता था। करक (Crac) नामक नगर की बागडोर उसके हाथ में थी। उसने कई बार उन शान्तिपूर्ण अरबी काफिलों पर आक्रमण कर उन्हें लूट लिया था जो उसके किले की दीवारों के नीचे से हो कर निकलते थे। उसके ये कार्य सन्धि-शर्ता के विरुद्ध थे। इसने यहाँ तक किया कि एक समुद्री बेड़ा तैयार कर के हिजाज के पवित्र राज्य के तटों पर छापे मारे और हाजियों को लूट लूट कर परेशान कर दिया। सलाहुद्दीन ने शपथ खा रखी थी कि वह इस सन्धि के तोड़ने वाले को अपने हाथ से कत्ल करेगा। और अब इसकी पूर्ति का अवसर आ गया था। अरबों के आतिथ्य की मान्य परम्पराओं से अनुचित लाभ उठाने के लिये उसने अपने गिरफ्तार करने वाले के खेमे से पानी का एक प्याला प्राप्त कर लिया। किन्तु यह प्याला स्वयं सलाहुद्दीन के हाथ का दिया हुआ न था। इसलिए बन्दी एवं बन्दी करने वाले के बीच में मेजबान और मेहमान का सम्बन्ध स्थापित न हो सका। इसलिए रेजेनाल्ड को विश्वासघात के बदले में अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। समस्त टेम्पलरों (Templars)† तथा हास्पिटेलरों (Hospitallers)‡ को जन- साधारण के समक्ष मार डाला गया।

हित्तीन की विजय ने फ्रैंकों के भाग्य पर मुहर लगा दी। एक सप्ताह के घेरे के पश्चात् जेरूसलम ने, जब कि हित्तीन नामक स्थान पर उसकी सुरक्षा के निमित्त नियुक्त सेना नष्ट हो चुकी थी, २ अक्तूबर सन् ११८७ ई० को मुसलमानों के आगे हथियार डाल दिया। अक्सा की मस्जिद में गिरजे के घंटों का स्थान, मुअज्जिन [अजान देने वाला] की अजान ने ले लिया। पहाड़ी गुम्बद [डोम आफ दी राक] पर सोने के क्रास को सलाहुद्दीन के आदमियों ने टुकड़े-टुकड़े कर डाला।

लैटिन साम्राज्य की राजधानी को जीत लेने के पश्चात् फ्रैंकों के सीरिया तथा पलेस्टाइन के बहुत से क्षेत्र सुल्तान सलाहुद्दीन के अधिकार में आ गये ; जो किले शेष थे उनमें से अधिकांश मज़बूत किलों पर लगातार कई कौशलपूर्ण लड़ाइयों के बाद अधिकार होगया। सीरिया और पैलेस्टाइन में फ्रान्कों की शक्ति का सफ़ाया सा होगया। कुछ छोटे-छोटे नगरों एवं किलों के अतिरिक्त केवल अन्ताकिया, ट्रिपोली और टायर के नगरों पर उनका अधिकार शेष रह गया था। पवित्र नगर के पतन ने यूरोप में चेतना

† जेरूसलम में ईसाई तीर्थ यात्रियों की सुरक्षा के लिये स्थापित फ़ौजी सैनिक
‡ ईसाई सामन्त जिन्होंने जेरूसलम में ईसाई यात्रियों के लिये १०४२ ई० में अस्पताल कायम किया था। ये सेण्ट जान के नाइट (सामन्त) कहलाते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उत्पन्न कर दी। वहाँ लड़ने वाले शासकों ने अपनी पारस्परिक शत्रुता को भुला दिया। जर्मनी के सम्राट् फ्रेडिक बारब्रोसा, इंगलैण्ड के बादशाह सिंह-हृदय रिचर्ड और फ्रान्स के बादशाह फिलिप आगस्टस—इन तीनो ने क्रास उठा लिया। पश्चिमी यूरोप के यह तीन शक्तिशाली शासक थे और इन्हीं तीनों ने तृतीय धर्म-युद्ध (सन् ११८६ ई० से लेकर सन् ११६२ ई०) का श्री गणेश किया था। संख्या की दृष्टि से इस युद्ध में सबसे अधिक लोगों ने भाग लिया था। पूर्वी एवं पश्चिमी काल्पनिक तथा वीरतापूर्ण गाथाओं के लिए इस धर्म-युद्ध ने एक प्रिय विषय प्रदान किया है जिसके प्रमुख नायक सलाहुद्दीन और सिंह-हृदय रिचर्ड थे।

सर्वप्रथम फ्रेडिक ने युद्ध-स्थल के लिए प्रस्थान किया। वह स्थल-मार्ग से अग्रसर होता हुआ सिलेशिया की एक नदी को पार करते समय डूब गया और उसकी सेना का बहुत लंबा भाग घरों को वापस लौट गया। रिचर्ड मार्ग में साइप्रस पर अधिकार करने के लिए रुक गया। आगे चलकर यही द्वीप जेरुसलेम से निकाले जाने के पश्चात् धर्मयुद्ध लड़ने वालों का शरण-स्थल बना।

इसी समय जेरुसलेम के लैटिन लोगों ने यह निर्णय किया कि खोये हुए साम्राज्य को प्राप्त करने के लिए एक्रे (Acre) ही केन्द्र-बिन्दु है—उसी ओर चला जाय। ये लोग अपनी समस्त सेना को लेकर वस्तुतः इस स्थान की ओर बढ़े। इनकी सेनाओं में फ्रेडिक के बचे-खुचे सैनिक और फ्रान्स के बादशाह के सैन्यदल भी सम्मिलित हो गये। बादशाह गुई (Guy) ने अपनी प्रतिष्ठा की शपथ खा कर यह संकल्प किया था कि वह भविष्य में कभी भी सलाहुद्दीन के विरुद्ध हथियार नहीं उठायेगा। लेकिन इस समय इस युद्ध का नेतृत्व वही कर रहा था। दूसरे दिन सलाहुद्दीन इस शहर को बचाने के लिए आ पहुँचा और उसने शत्रु के समक्ष अपना पड़ाव डाल दिया। जल और थल दोनो स्थानों पर घमासान युद्ध हुआ। रिचर्ड के आगमन पर बड़ी खुशी मनाई गई और आतिशबाजी छुड़ा कर उसका स्वागत किया गया। घेरे के दौरान में बहुत सी मनोहर घटनाएँ घटीं, जिनका तत्कालीन अरबी और लैटिन इतिहासकारों ने उल्लेख किया है। सलाहुद्दीन और रिचर्ड ने एक दूसरे के पास उपहार भी भेजे, पर कभी दोनो ने भेंट नहीं की। रिचर्ड ने यह घोषणा कर दी थी कि दुर्ग की दीवार से उखाड़े जाने वाले प्रत्येक पत्थर के लिए मूल्यवान पुरस्कार दिया जायगा। इस के फलस्वरूप योद्धाओं तथा स्त्रियों तक ने वीरता के बड़े-बड़े जौहर दिखाये। यह घेरा मध्ययुग की महती सैनिक घटनाओं में गिना जाता है, जो निरन्तर दो वर्ष, २७ अगस्त सन् ११८६ ई० से लेकर १२ जुलाई सन् ११६१ ई० तक चलता रहा। फ्रान्कों को मुसलमानों की अपेक्षा यह सुविधा प्राप्त थी कि उनके पास समुद्री बेड़ा और किले को तोड़ने वाला आधुनिकतम् तोपखाना था। मुसलमानों को यह सुविधा थी कि उनकी बागडोर केवल एक ही व्यक्ति के हाथ में थी। अन्ततोगत्वा दुर्ग की सेना ने आक्रमणकारी ईसाइयों के सामने आत्मसमपण कर दिया।

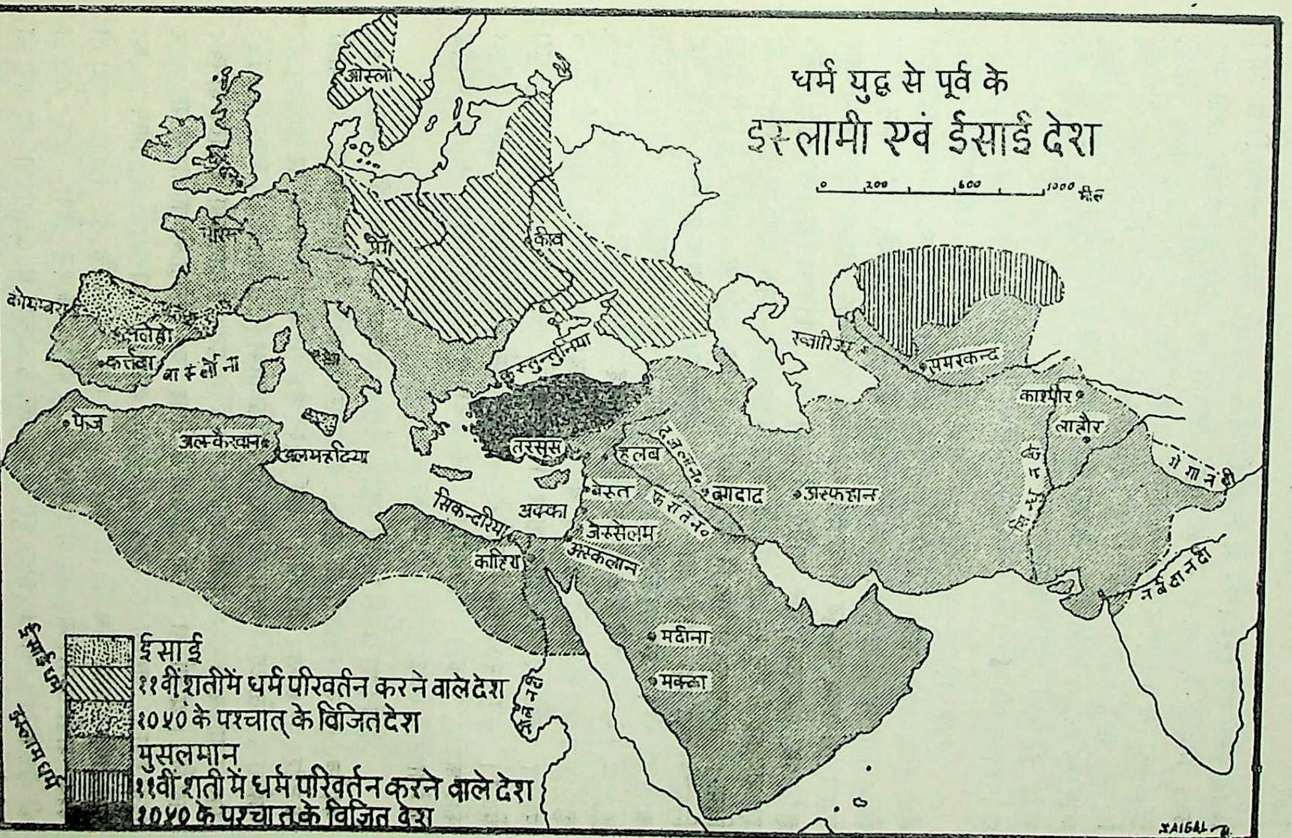
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आत्म-समर्पण की शर्तों में दो यह थीं कि किले की सेना को, दो लाख मुहरें लेकर मुक्त कर दिया जाय और यह कि पवित्र क्रास ईसाइयों को वापस दे दिया जाय। जब एक माह व्यतीत हो जाने के पश्चात् यह धन अदा न किया गया तो रिचर्ड ने सत्ताइस सौ कैदियों को मार डालने का आदेश दिया। रिचर्ड का यह कार्य सुल्तान सलाहुद्दीन के उस बर्ताव के बिलकुल विपरीत था जो उसने जेरुसलेम पर अधिकार कर लेने के पश्चात् ईसाई बन्दियों के साथ किया था। उसने भी ईसाई कैदियों पर मुक्ति-कर लगाया था और कई हजार निर्धन होने के कारण अपने को छुड़ा न सके थे। अपने भाई की प्रार्थना पर सुल्तान सलाहुद्दीन ने एक हजार निर्धन बन्दियों को मुक्ति-कर माफ कर छोड़ दिया था, और पादरी की प्रार्थना पर एक अन्य दल मुक्त कर दिया गया था। फिर यह सोचकर कि उसके भाई और पादरी दोनो ने अपना-अपना दान दे दिया है और अब स्वयं उसकी बारी है, जो लोग शेष रह गये थे, उनमें से एक बड़ी संख्या को उसने बिना मुक्ति-कर लिये ही छोड़ दिया, जिनमें बहुत सी स्त्रियाँ और बच्चे भी थे।

इस समय तक ईसाई-नेतृत्व का केन्द्र जेरूसलेम था पर अब यह 'एकरे' को स्थानान्तरित हो गया। इसके पश्चात् दोनो पक्षों के बीच सन्धि-वार्ता निर्विघ्न सी चलने लगी। रिचर्ड अजीब मनमाजी था। उसने यह प्रस्ताव किया कि उसकी बहिन का विवाह सलाहुद्दीन के भाई से कर दिया जाय और जेरूसलेम को उन दोनो को उनके विवाहोपहार के रूप में देकर ईसाइयों और मुसलमानों के युद्धों का अन्त कर दिया जाय। २६ मई सन् ११६२ ई० को "पाम सण्डे" † के अवसर पर रिचर्ड ने सलाहुद्दीन के भतीजे को 'नाइट' की उपाधि समारोहपूर्वक दी। २ नवम्बर, सन् ११६२ ई० को सन्धि-पत्र लिखा गया। इसके अनुसार समस्त समुद्रतटीय क्षेत्र लैटिन वालों को मिला और अन्दर का सम्पूर्ण क्षेत्र मुसलमानों के अधीन रहा। यह भी निश्चित हुआ कि भविष्य में "पवित्र नगर" को आने वाले यात्रियों को सताया न जाय। सलाहुद्दीन इस संधि का आनन्द लेने के लिए केवल कुछ ही महीने जीवित रहा। दूसरे वर्ष १६ फरवरी को जब वह दमिश्क में था, उसे बुखार आया और १२ दिन बीमार रहकर ५५ वर्ष की आयु में उसका देहान्त हो गया। अमवी मस्जिद के निकट उसका मज़ार आज भी सीरिया की राजधानी की दर्शनीय वस्तुओं में से है। एक योद्धा, और इस्लामी सुन्नी धर्म का नेता होने के अतिरिक्त वह और भी बहुत कुछ था। वह विद्वानों का आश्रयदाता और धार्मिक अध्ययन का पृष्ठ-पोषक था। उसने बाँधों का निर्माण कराया, नहरें खुदवायीं, स्कूलों और मस्जिदों की बुनियादें डालीं। उसकी शिल्पकला संबंधी यादगारों में मौजूदा काहिरा का दुर्ग है,

† (Palm Sunday)—ईस्टर से पूर्व का रविवार जिसको जेरुसलेम का, 'धर्मयुद्ध' के दौरान में, पुनरुद्धार का स्मृति-दिवस माना जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.



CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिसको उसने सन् ११८३ ई० में चहारदीवारी के साथ ही बनवाना आरम्भ किया था। उसके निर्माण में सुल्तान ने छोटे-छोटे पिरामिडों के पत्थरों का उपयोग किया था। मुसलमानों में सलाहुद्दीन का नाम, हारूँन तथा 'धर्म-युद्ध' के सैनिकों के विरुद्ध पराक्रम दिखाने वालों में दूसरे नायक 'बैबर्स' (Baybars) के साथ लिया जाता है और आज तक इस्लाम के लोकप्रिय नेताओं में उसका नाम सर्वोपरि है। यूरोप में उसने अंग्रेज गीतकारों तथा आधुनिक उपन्यासकारों की कल्पनाओं में स्थान पाया है और अभी तक उसको वीरता का एक अनुपम आदर्श समझा जाता है।

इसके पश्चात् लगभग १०० वर्ष तक छुट-पुट लड़ाइयाँ होती रहीं। इनका कोई निर्णयात्मक परिणाम नहीं निकला। केवल इतना ही हुआ कि इन युद्धों द्वारा लैटिन लोगों ने किसी न किसी रूप में अपनी स्थित संभाले रखी। इन घटनाओं की गणना हम षष्टम् धर्म-युद्ध के अन्तर्गत कर सकते हैं, जिसका आरम्भ फ्रान्स के बादशाह लुई नवम् और उसके वीर अमीरों ने किया था। इतिहास के सेण्ट लुई नामक इस बादशाह ने सन् १२४९ ई० में मिस्र के दिमियात नामक नगर पर अधिकार कर लिया। किन्तु इसकी सेनाओं को काहिरा की ओर बढ़ने पर दलदली क्षेत्रों से होकर निकलना पड़ा जहाँ नहरों का जाल बिछा हुआ था। उस समय नील नदी में बाढ़ आयी हुई थी। इन सब कारणों से उसकी सेना में प्लेग की महामारी फैल गई और आवागमन के साधनों के नष्ट हो जाने के कारण वह पूर्णतया नष्ट हो गयी। सम्राट् लुई अपने बहुत से अमीरों के साथ बन्दी बना लिया गया। एक माह की कैद के पश्चात् मुक्ति-कर देकर और शहर दिमियात को लौटा देने पर उसको छुटकारा मिला। सन् १२७० ई० में लुई ने एक दूसरा 'धर्म-युद्ध' ट्यूनिस पर छेड़ा, जिसका कोई फल न निकला और यहीं पर उसका देहान्त भी हो गया। समस्त धर्मयुद्ध के नेताओं में उसका चरित्र सर्वोत्तम था।

बैबर्स मिस्र के उस निराले गुलाम वंश का सरदार था जिस को ममलूक कहते थे। बैबर्स से, उन सुल्तानों की श्रृंखला का आरम्भ होता है, जिन्होंने धर्म-युद्ध करने वालों के उद्देश्य पर अन्तिम चोट की। सन् १२६३ ई० में बैबर्स ने 'करक' पर अधिकार कर नासिरा के प्रतिष्ठित गिरजाघर को गिरा दिया। कैसारिया (Caesarea), जाफा (Jaffa) और अन्ताकिया के नगरों ने भी उसके प्रबल एवं निर्दयतापूर्ण आक्रमणों के कारण हथियार डाल दिये। अन्ताकिया के दुर्ग की सेना के सोलह हजार सैनिकों को तलवार के घाट उतार दिया गया। लगभग एक लाख स्त्री-पुरुषों, बालक एवं बालिकाओं को गिरफ्तार कर दास-दासी बनाकर बेंच दिया गया। जब लूट की सम्पत्ति का विभाजन हुआ तो रुपया प्यालों से नाप-नाप कर बाँटा गया। हर बालक के १२ दिरहम और बालिका की पाँच दिरहम, कीमत हासिल हुई। इस लूट के पश्चात् से अन्ताकिया को कभी भी पनपने का अवसर न मिला।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सन् १२९१ ई० में वैबर्स के उत्तराधिकारियों ने 'एकरे' को घेर लिया। ९२ पत्थरमार तोपों से चहारदीवारी पर निशाना लगाकर दीवारों को तोड़ दिया गया। शहर के रक्षक टेम्पलरों (Templars) को तलवार के घाट उतार दिया गया। इसी वर्ष टायर, सीडन, बैरूत, और अन्तार्तस पर इनका अधिकार हो गया। धर्म-युद्ध करने वालों को समुद्र की ओर ढकेल दिया गया और इस प्रकार सीरिया के इतिहास के अत्यन्त नाटकीय अध्याय का अन्त हो गया। धर्म-युद्धों की अपूर्व वीरतापूर्ण घटनाओं के बाहुल्य के कारण उनके ऐतिहासिक महत्व को बहुत बढ़ा चढ़ा दिया गया है। ये युद्ध पूर्व की अपेक्षा पश्चिम के लिए अत्यन्त महत्व के हैं। सभ्यता पर इन धर्म-युद्धों का प्रभाव साहित्यिक और वैज्ञानिक के बजाय कलात्मक, औद्योगिक और व्यावसायिक ही रहा। इन युद्धों ने सीरिया में तबाही और बरबादी की अपनी यादगार छोड़ी है। तथा समस्त निकट-पूर्व में ईसाइयों एवं मुसलमानों के बीच एक ऐसी दुर्भावना उत्पन्न कर दी जो अभी तक भुलाई नहीं जा सकी है।

धर्म-युद्ध के काल में, मुस्लिम संस्कृति पूर्व में, पतनोन्मुख थी। दर्शन, चिकित्सा-शास्त्र, संगीत, और दूसरी विद्याओं में उसके प्रकाश-स्तम्भ बुझ चुके थे। सम्भवतः यही कारण था कि सीरिया, जो तेरहवीं और चौदहवीं शतों में इस्लाम तथा पश्चिमी ईसाई धर्म के सम्बन्धों का संगम बना हुआ था, अरबी प्रभाव को पश्चिम में पहुँचाने के विषय में स्पेन, सिसिली, उत्तरी अफ्रीका और यहाँ तक कि बेजेन्टाइन साम्राज्य से भी बहुत पीछे रहा। यद्यपि सीरिया में, धर्म-युद्ध कर्त्ताओं से हुई सीधी टक्कर तथा उस टक्कर की पश्चिम पर जो प्रतिक्रिया हुई और व्यापारिक माध्यम से जो प्रभाव इस्लाम ने योरोप के ईसाइयों पर डाले उनके बावजूद इस्लाम का आध्यात्मिक एवं बौद्धिक प्रभाव नगण्य ही रहा। दूसरी ओर यह भी स्मरणीय है कि जो फ्रान्क सीरिया में आ बसे थे उनकी संस्कृति, उनके शत्रुओं की अपेक्षा निम्न स्तर की थी। उनमें अधिकांश, विदेशी सैनिक होने के नाते, किलों और बैरकों में रहते थे और इसलिए बुद्धिजीवियों की अपेक्षा देशी किसानों और कारीगरों के घनिष्ट सम्पर्क में थे। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय एवं धार्मिक मतभेद के कारण उत्पन्न विरोधी धारणा और शत्रुभाव एक दूसरे को प्रभावित करने में विघ्न थे। विज्ञान एवं कला में फ्रान्कों के पास ऐसा कुछ न था जिसे वे देशी लोगों को दे सकते। दोनो दलों के चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान में जो अन्तर था, वह उस समय के एक समकालीन अरब इतिहासकार के कथनों से भली भाँति जाना जा सकता है। वह फ्रान्कों की मल्ल-युद्ध एवं जल के द्वारा न्याय करने की पद्धति का उपहास भी करता है।

बारहवीं शती से यूरोप में अस्पताल और दातव्य औषधालय तथा विशेष रूप से कोढ़ियों की दवा करने के लिए अस्पताल बहुत बड़ी संख्या में खोले जाने लगे। हम यह कह सकते हैं कि सुव्यस्थित औषधि के प्रबन्ध करने के विचार को मुस्लिम पूर्व से प्रेरणा मिली। इसके अतिरिक्त यहाँ साधारण स्नानागारों का इसी मुस्लिम-पूर्व के प्रभाव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से पुनः प्रचार हुआ। रोमनों ने किसी समय जन-स्नानघरों का संरक्षकत्व किया था पर ईसाइयों ने इसे कोई प्रोत्साहन नहीं दिया।

साहित्य के क्षेत्र में मुसलमानों के प्रभाव कुछ अधिक व्यापक सिद्ध हुए। "पवित्र प्याला" (Holy Grail) से सम्बन्धित कहानियाँ निस्सन्देह सीरिया की होने के लक्षण रखती हैं। धर्म-युद्ध करने वालों ने बिडपाई की कहानियाँ (Bidpai Fables) और अरेबियन नाइट्स के किस्से अवश्य सुने होंगे और उनको अपने साथ अपने देश अवश्य ले गये होंगे। चासर की कहानी "स्क्वेयर्स टेल" (Squieres Tale) सचमुच अरेबियन नाइट्स की एक कहानी है। बोकैशियो ने "ओरियण्टल टेल्स" ज़बानी सुन-सुन कर उनको अपनी पुस्तक 'डि कैमरान' में छपाया। यूरोपीय मिशनरियों ने अरबी तथा दूसरी मुस्लिम भाषाओं के प्रति जो प्रेम दिखलाया है उसका भी श्रेय धर्म-युद्ध करने वालों को ही है।

जैसी कि आशा की जाती है, युद्ध-कला में मुसलमानों के प्रभाव और भी ध्यान देने योग्य हैं। क्रास बो (धनुष), भारी कवच का प्रयोग (जिसको नाइट स्वयं पहनते और घोड़ों को भी पहनाते थे) तथा कवच के नीचे रुई की गद्दियों का प्रयोग, धर्म-युद्ध से ही सम्बन्धित हैं। सीरिया में फ्रान्कों ने तबल (जिसका बिगड़ा हुआ रूप अंग्रेजी टैबर है) और नक्कारे का प्रयोग किया यद्यपि उससे पूर्व वे ट्रम्पेट (तुरही) और सिंहे (Horn) का प्रयोग करते थे। सैनिक सूचना देने के लिए उन्होंने देशी निवासियों से कबूतरों को सधाना सीखा और इन्हीं लोगों से विजयोत्सव मनाने के लिए रोशनी करने का ढंग तथा टूर्नामेण्ट के वीरतापूर्ण खेल सीखे। यह एक तथ्य है कि वीरता के कुछ प्रमुख स्वरूप सीरिया के ही क्षेत्रों में विकसित हुए। मुस्लिम सरदारों के सम्पर्क में आने के पश्चात् हथियारबन्दी और घोषणा सम्बन्धी ढंगों का अत्यधिक प्रयोग होने लगा।

धर्म-युद्ध करने वालों ने घेरा डालने की तदबीरें, नकब तथा सुरंग लगाने की कला, पत्थरफेंक तोप, और दीवारतोड़ यंत्रों तथा नाना प्रकार के भड़कने और फटने वाली चीजों के प्रयोग को समुन्नत किया। चीन में बारूद का आविष्कार हुआ था, जहाँ वह एक विस्फोटक वस्तु की भाँति प्रयोग में लायी जा रही थी। वहाँ से लाकर मंगोलों ने इसका प्रचार यूरोप में किया। इसकी विस्फोटक शक्ति का हथियारों को आगे फेंकने के लिए प्रयोग में लाया जाना उस समय आरम्भ हुआ जब कि चौदहवीं शती की दूसरी चौथाई में आग्नेयास्त्रों का आविष्कार हुआ। शस्त्रास्त्रों के क्षेत्र में यह निस्सन्देह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम था। बारूद का सबसे पहला यूरोपीय नुस्खा एक पुस्तक के परिशिष्ट में मिलता है, जिसे सन् १३०० ई० के लगभग यार्क नामक एक यूनानी ने लिखा था। बेकन का नुस्खा सन्देहजनक है।

धर्म-युद्धों के प्रभाव ने बौद्धिक क्षेत्र की अपेक्षा खेती, उद्योग और व्यवसाय में कहीं अधिक सुपरिणाम दिखलाये। पश्चिमी भूमध्यसागरीय क्षेत्रों में तिल, 'खरूब' (कैरब), बाजरा, चावल, नींबू, खरबूजा, खूबानी और एक प्रकार के प्याज जैसे नये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधों का प्रचार किया। अंग्रेजी का लेमन अरबी के लेमू का विकृत रूप है। 'कैरब' अरबी का 'खरुब' और 'शैलेट' तथा 'स्कैलियन' एसकेलान (Ascalon) के प्याज को कहते हैं। एसकेलान फिलस्तीन का स्मरण दिलाता है। प्रारंभ में वर्षों तक खूबानी को दमिश्क का आलूचा कहा करते थे।

इस्लामी देशों में निवास करते समय फ्रान्कों में नई रुचियाँ उत्पन्न हो गयी थीं। वे विशेष रूप से सुगन्धित द्रव्यों, मसालों, मिठाइयों तथा अरब और भारत की अन्य उष्ण कटिबन्धीय वस्तुओं के शौकीन हो गये थे। इन वस्तुओं की सीरिया की बाजार में भरमार रहती थी। आगे चल कर इन्हीं रुचियों ने इटली और भूमध्यसागरीय नगरों के व्यापारों को अत्यधिक प्रोत्साहित किया। लोबान, अरब के अन्य सुगन्धित गोंद, दमिश्क का गुलाबजल एवं सुमधुर सेण्ट तैयार करने में, दमिश्क विशेष रूप से कुशल था, और कई प्रकार के सुगन्धित तेल तथा ईरान का इत्र उनकी रुचि की वस्तुएँ बन गये। फिटकरी और मुसब्बर उन नयी औषधियों में हैं जिनसे वे भली-भाँति परिचित हो गये थे। लवंग तथा अन्य सुगन्धित मसाले काली मिर्च और दूसरी चटपटी वस्तुओं के साथ, बारहवीं शती में पश्चिम में प्रयुक्त होने लगे। और उस समय से कोई दावत पूर्ण नहीं समझी जाती थी यदि उसमें मसालेदार पदार्थ न परोसे गये हों। अदरख (जिंजर) जो अरबी शब्द से निकला है, मिस्र में धर्म-युद्ध करने वालों की आहार-सूची में सम्मिलित हो गया। इन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु शकर थी जिस को अरबी में शुक्कर (सुगर इसी का रूप है) कहते हैं। योरोप के लोग अभी तक अपने भोजन को मीठा करने के लिए शहद का प्रयोग करते थे। ये लोग सीरिया और लेबनान के समुद्र-तटीय क्षेत्रों में गन्ने के पौधे से परिचित हुए। यहाँ आज भी बच्चे गन्ने चूसते हुए दिखाई देते हैं। इस पौधे ने हमारे घरेलू खर्च और औषधियों की तैयारी में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योग दिया है। शकर वह प्रथम सुखद वस्तु थी जो पश्चिम में प्रचलित हुई। पश्चिमी दस्तरखान पर काई वस्तु इससे अधिक आनन्ददायक नहीं होती थी। इसी के कारण, स्वादिष्ट और सुखद शरबत गुलाब, बनफ़शा और दूसरे फूलों से बसाये हुए स्वादिष्ट अर्क हर प्रकार की चाशनी, मुरब्बे और मिठाइयों का चलन चला। मलमल, दमस्क (एक प्रकार का रेशमी कपड़ा), अतलस और साटन जैसा कि उनके नामों से प्रकट है, पूर्व-अरब से ही पश्चिम में प्रचलित हुये।

योरोप के सामने सबसे पहले तीर्थ-यात्रियों एवं धर्म-युद्ध करने वालों को बाहर भेजने का साधन और पूर्व में कृषि-उत्पादन तथा औद्योगिक वस्तुओं के लिए एक नयी यूरोपीय बाजार की उत्पत्ति—इन दोनों बातों ने मिलकर समुद्री और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को इस सीमा तक उत्तेजित कर दिया जिसका कोई उदाहरण रोमन काल के बाद नहीं मिलता। बढ़ती हुई सम्पत्ति के साझीदार और जहाजों के केन्द्र के रूप में, मार्सेलीज़, इटली के नगर-गण-राज्यों का प्रतिद्वन्द्वी हो गया। इस नयी स्थिति की आथक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आवश्यकता ने रुपये के अपेक्षाकृत अधिक एवं अतिशीघ्र प्रचलन को, आवश्यक समझा। इसके फलस्वरूप हुण्डी का चलन हो गया। जेनेवा, और पीसा में बैंकरों की फर्में स्थापित हो गयीं और उनकी शाखाएँ लेवन्ट (Levant) में खुल गयीं। टेम्पलर हुण्डियों का काम करने लगे और उन्होंने ब्याज पर रुपया देना आरम्भ कर दिया।

धर्म-युद्ध काल की तेज जहाजरानी ने संसार को 'कुतुबनुमा' नाम की नवीन वस्तु प्रदान की। सम्भवतः चीनियों ने सर्वप्रथम यह बात ज्ञात की थी कि चुम्बकीय सुई अपने अन्दर एक ही दिशा बताने की विशेषता रखती है। लेकिन जहाजरानी की कला में इस सुई का व्यावहारिक प्रयोग सर्वप्रथम मुसलमानों ने ही किया था, क्योंकि इनका व्यापार फारस की खाड़ी से लेकर सुदूरपूर्व समुद्रों में फैला हुआ था। इस आविष्कार को इन लोगों ने पश्चिम में पहुँचा दिया।

इस पूरी अवधि में अरबों का साम्राज्य संकुचित होता जा रहा था और मुसलामानों का मस्तिष्क निष्क्रिय होता जा रहा था। लेकिन यूरोप का आदमी आँख खोल कर उस जगत् को देख रहा था जिसका नाटकीय ढंग से उसके नेत्रों के सामने विस्तार होता जा रहा था। उस अरब साम्राज्य के समाप्त हो जाने से पूर्व, उसके पुनरुत्थान के लिए सीरिया और मिस्र के ममलूक वंश ने एक अन्तिम जोर लगाया।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१८—अन्तिम राजवंश

अरब जगत का मध्ययुग का अन्तिम राजवंश जिसे ममलूक के नाम से पुकारा जाता है, अत्यन्त असाधारण राजवंश था। मुसलमानों के अतिरिक्त विश्व की किसी भी दूसरी जाति के इतिहास में, ऐसे राजवंश के उद्भव और विकास की कल्पना भी संभव नहीं है। 'ममलूक' का अर्थ है "अधिकृत या जरखरीद"। यह वंश वस्तुतः गुलामों का वंश है। ये विभिन्न नस्लों एवं जातियों के वे दास थे, जिन्होंने एक अपरिचित देश में थोड़े से व्यक्तियों का एक अल्पसंख्यक सैनिक-शासन स्थापित कर लिया था। इस्लाम में ये लोग केवल इसी लिए विख्यात नहीं हैं कि ये एक प्रकार से अरबों के सामाजिक जीवन में सदियों से बढ़ते हुये दुराचार की पराकाष्ठा के स्वाभाविक परिणाम थे, बल्कि इसलिए भी कि उनके कार्य और सफलताएँ सचमुच महत्वपूर्ण थीं। अरब-साम्राज्य के समाप्तप्राय इतिहास में ये गुलाम-सुल्तान इस बात के अधिकारी हैं कि उन पर एक पृष्ठ लिखा जाय।

ममलूकों ने सीरिया तथा मिस्र के अपने राज्य को बचे-खुचे धर्म-युद्ध के सैनिकों [Crusaders] से बिलकुल खाली करा लिया। उन्होंने हलाकू और तैमूर के भयंकर जत्थो के बढ़ाव को सदैव के लिए रोक दिया, अन्यथा इन्होंने पश्चिमी एशिया एवं मिस्र में इतिहास तथा संस्कृति की धारा को बिलकुल ही बदल दिया होता। केवल इसी प्रतिरोध के कारण मिस्र उस विनाश से बच गया, जिसका शिकार सीरिया और ईरान को होना पड़ा। और इसी लिये मिस्र अपने सांस्कृतिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में निर्विघ्न बराबर फलता-फूलता रहा, जो सौभाग्य अरब से बाहर किसी भी अन्य मुस्लिम-देश को नसीब न हुआ। लगभग पौने तीन सौ वर्ष तक [सन् १२५० ई० से लेकर सन् १५१७ ई० तक] ममलूकों ने विश्व के सर्वाधिक अशान्त भागों में से एक पर शासन किया, और इस पूरे काल में उन्होंने अपने 'गुलामवंश' के अस्तित्व को सब से पृथक बनाये रखा। सम्यक् रूप से असभ्य और रक्तपिपासु होने पर भी कला एवं भवन निर्माणकला में उनकी तीक्ष्ण अभिरुचि किसी भी सभ्य राजवंश के लिए गौरव की बात होती और उनकी इसी अभिरुचि ने काहिरा को ऐसा बना दिया कि वह आज भी मुस्लिम जगत में एक सौन्दर्य का शोभाधाम समझा जाता है। और अन्त में, सन् १५१७ ई० को उस्मानी सुल्तान सलीम ने, अरब खिलाफत के खण्डहरों पर पनपे हुये छोटे-छोटे राज्यों में से इस अन्तिम बचे हुये ममलूक वंश को उखाड़ फेंका, और इस प्रकार गैर-अरब यानी उस्मानी तुर्कों की एक नई दूसरी खिलाफत की स्थापना के लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ममलूक सुल्तानों में सर्वाधिक प्रसिद्ध, और ममलूक हुकूमत की वास्तविक बुनियाद, सुल्तान बैबर्स था। ममलूकों से पूर्व मिस्र का सामान्य शासक-वंश भी, बगदाद के पूर्वकालीन खलीफाओं की भाँति अपने अंगरक्षक-दल में विदेशी दासों को भर्ती किया करता था, और परिणाम भी समान ही हुआ। ये गुलाम, अपने स्वामियों से अधिक योग्य एवं पराक्रमी होने के कारण सेनापति के पद पर पहुँच कर स्वयं सुल्तान बन बैठे। बैबर्स भी पहले एक तुर्की दास था। यह सुल्तान के अंगरक्षकों के एक दल का नायक बना दिया गया था। अपनी इस स्थिति से लाभ उठा कर, वह मिस्र में सर्वोच्च आसन तक पहुँच गया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसने यह स्थान रक्तपात एवं हिंसा के द्वारा प्राप्त किया था, लेकिन उस समय के पतनोन्मुख अरब-जगत की स्थिति में, उसका जीवन और कार्य- कलाप एक प्रतिभावान व्यक्ति के अनुरूप था। इस ममलूक-वंश में उत्तराधिकार का कोई स्वत्व अथवा सिद्धान्त नहीं था। जो व्यक्ति सबसे अधिक शक्तिशाली होता था वही शासन का अधिकारी बन जाता था, किन्तु तीन शतियों तक गुलाम या गुलामों की संतान ही सबसे अधिक शक्तिशाली रहे। बैबर्स स्वयं क़द में लम्बा, रंग साँवला, आवाज बुलन्द, बहादुर और उत्साही व्यक्ति था। उसमें एक नेता के सभी गुण विद्यमान थे।

बैबर्स ने अपनी सबसे पहली सराहनीय कीर्ति पैलेस्टाइन में मंगोलों के मुकाबिले में प्राप्त की। किन्तु उसकी ख्याति की नींव उन विशेष रूप से असंख्य अभियानों पर है जो उसने धर्मयुद्ध करने वालों (Crusaders) के विरुद्ध किये। जैसा कि हम पढ़ चुके हैं, यह वही लड़ाइयाँ थीं जिन्होंने उनके शत्रु फ्रैन्कों की कमर एकदम तोड़ दी। उसी समय में उसके सरदारों ने उसके राज्य को पश्चिम की ओर बर्बर देश तक और दक्षिण में नूबिया तक पहुँचा दिया। इस सम्पूर्ण साम्राज्य पर अब स्थायी रूप से एक मात्र मिस्र के सुल्तान का ही शासन था।

बैबर्स केवल एक सैनिक नेता ही नहीं था, अपितु उसमें और विशेषताएँ थीं। उसने न केवल सेना को ही सुसंगठित किया, नौसेना का पुनर्गठन किया, और सीरिया के क़िले को सुदृढ़ बनाया, बल्कि उसने नहरें भी खुदवाईं, बन्दरगाहों को समुन्नत किया, और एक तीव्रगति वाली डाक-व्यवस्था से काहिरा तथा दमिश्क को मिला दिया, जिसमें केवल चार दिन मार्ग में लगते थे। मार्ग में डाक-चौकियों पर घोड़े, बदलने के लिये तत्पर खड़े रहते थे। सुल्तान दोनो राजधानियों में लगभग एक ही सप्ताह में, पोलो खेल सकता था। साधारण डाक के अतिरिक्त ममलूकों ने कबूतर-डाक को भी सुव्यवस्थित कर दिया था। फातिमियों के शासन-काल की भाँति इस काल में भी डाक ले जाने वाले कबूतरों की वंशावली रजिस्टरों में दर्ज रहती थी। बैबर्स ने जन-कार्यों में बड़ी ही रुचि ली। उसने मस्जिदों को सजाया और धार्मिक तथा दातव्य संस्थाएँ स्थापित कीं। उसके स्मारक-भवनों में जुमा-मस्जिद और स्कूल अभी तक विद्यमान और उस के नाम से प्रसिद्ध हैं। नेपोलियन ने इस मस्जिद को दुर्ग में परिवर्तित कर दिया था, और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आगे चल कर उस पर अधिकार करने वाली अंग्रेजों की सेना ने इसको अपना रसद-गुदाम बना लिया था। मिस्र का यह प्रथम सुल्तान था जिसने चार काजी नियुक्त किये जो चार धार्मिक रूढ़ियों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसने मिस्र के हाजियों के लिये मक्का की यात्रा की स्थायी ढंग की व्यवस्था की। उसकी कट्टर धर्म-परायणता एवं उत्साह ने, उसकी उस कीर्ति से मिलकर, जो उसने जेहाद में इस्लाम के लिए प्राप्त की थी, उसके नाम को उठा कर हारूँन के समकक्ष ला दिया। इतिहास में वर्णित उसके संबंध में कथा-कहानियों ने उसके नाम को सलाहुद्दीन से भी ऊँचा कर दिया है। लोकप्रिय बैबर्स, और इस्लाम से पूर्व के 'अन्तार' (Antar) नामक एक व्यक्ति—इन दो की वीरगाथाएँ, आज भी पूर्वी देश—अरब में अरेबियन नाइट्स से भी अधिक लोकप्रिय हैं।

बैबर्स के शासन-काल की एक मुख्य विशेषता यह है कि उसने मंगोल तथा यूरोपीय शक्तियों से सम्बन्ध स्थापित किये। उसने सुल्तान हो जाने के बाद ही वाल्गा की घाटी के मंगोलों के 'सुनहरे गिरोह' के प्रधान खान् से मित्रता कायम की। उसने इसी प्रकार एरागोन के शासक जेम्स, सिविले के अल्फान्सू और सिसिली के शासक एवं लुई नवम् के भाई चार्ल्स अन्जू के साथ व्यापारिक सन्धियाँ कीं।

बैबर्स के शासन की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना यह है कि उसने अब्बासी खलीफाओं की एक ऐसी नवीन श्रृंखला की नींव डाली, जो केवल नामधारी शासक तो थे किन्तु उनमें किसी शक्ति और अधिकार का अभाव था। इस सुल्तान का उद्देश्य यह था कि उसके सिंहासन को एक वैधानिक मान्यता मिल जाय और उसके दरबार को मुसलमानों की दृष्टि में एक विशेष स्थान प्राप्त हो जाय जिससे वह शियों के उन षडयंत्रों को दूर कर सके जो अब्बासियों के समय से अभी तक विशेष रूप से मिस्र में जोर पकड़ते आ रहे थे,। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने जून सन् १२६१ ई० में अन्तिम अब्बासी खलीफा के एक चचा को, जो बगदाद के हत्याकांड से बचकर भाग निकला था, दमिश्क से अपने पास बुलाया और उसको बड़े समारोह के साथ सिंहासन पर बैठा दिया। पेंशन पाले वाले वृत्तिभोगी इस भावी खलीफा को सीरिया से शाही जुलूस में सुरक्षा के साथ लाया गया था और उसके साथ-साथ यहूदी तथा ईसाई बाइबिल को उठाये हुए चल रहे थे। उसकी वंशावली का समर्थन मुस्लिम न्याय-शास्त्र के जानने वालों की एक सभा ने किया था। सुलतान ने इस कठपुतली खलीफा से अपने लिए मिस्र, सीरिया, हिजाज, यमन, और फरात के क्षेत्रों के शासन का आदेश लिखवा लिया। इसके तीन माह पश्चात् ही वह काहिरा से बड़े जोश से अपने खलीफा को बगदाद में फिर से सिंहासनारूढ़ कराने के लिए चला, पर दमिश्क पहुँचने के उपरान्त खलीफा को उसके ही भाग्य पर छोड़ दिया। बगदाद के मंगोल गर्वनर ने रेगिस्तान में इस असहाय कठपुतली खलीफा पर आक्रमण कर दिया, इसके बाद उसके संबंध में कोई समाचार सुनने में नहीं आया। पर इसके पश्चात् ढाई सौ वर्ष तक इसी प्रकार के नामधारी

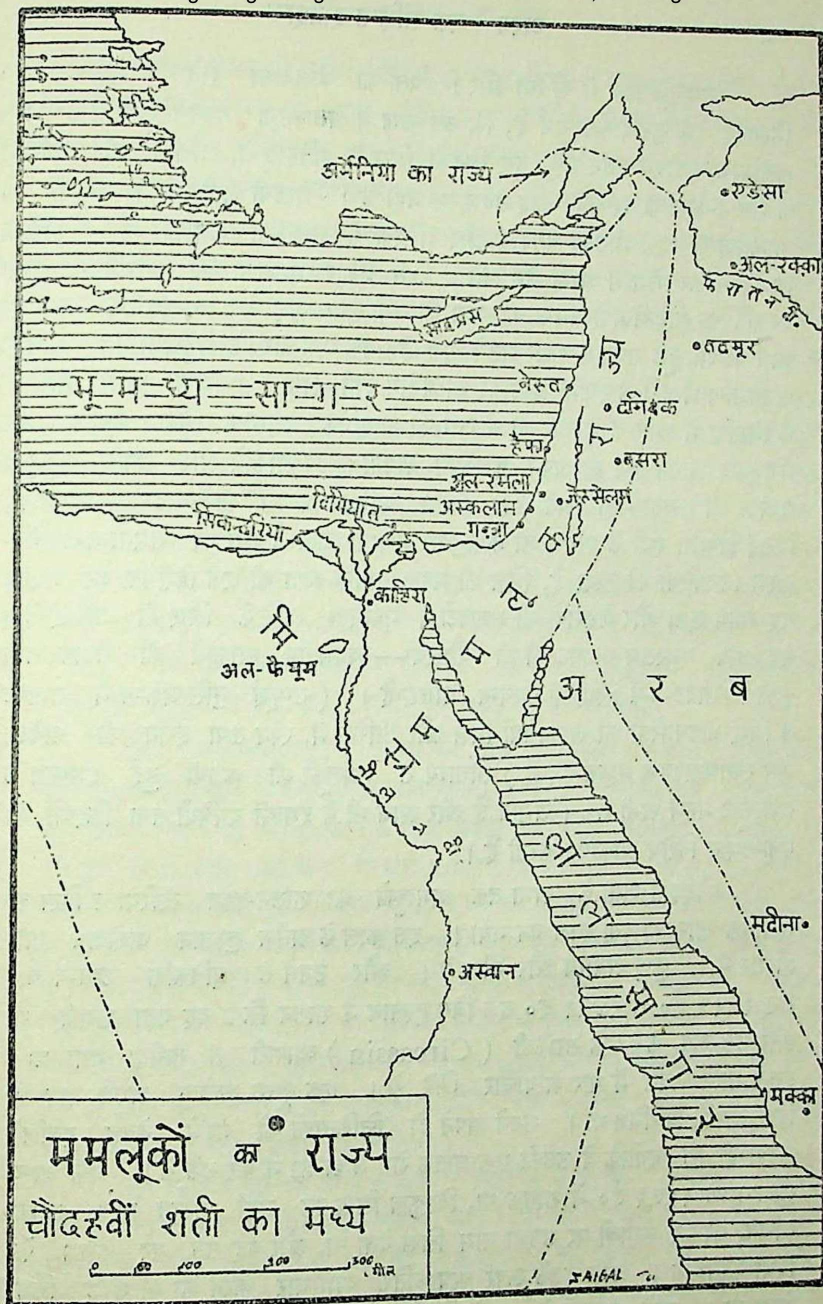
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खलीफा एक दूसरे के पश्चात् खिलाफत के सिंहासन पर बैठते रहे। ये आश्रित खलीफा केवल इतने ही पर प्रसन्न थे कि उनका नाम सिक्कों पर खोदा जाता था और मिस्र तथा सीरिया में जुमे के खुतबे में उनका नाम लिया जाता था। सन् १५१७ ई० में जब तुर्की सुल्तान सलीम ने मिस्र को ममलूकों के हाथ से छीन लिया, तो वह इस वंश के अन्तिम खलीफा अलमुतवक्किल को भी अपने साथ कुस्तुन्तुनिया लेता गया।

मिस्र के इतिहास का आरम्भ ऐसे गर्वीले एवं विजयोल्लसित शासकों से होता है जिन्होंने सीरिया से फ्रान्कों के साम्राज्य के बचे हुए प्रभाव को बिल्कुल ही नष्ट कर दिया और मंगोलों तथा विश्व की ताकतों के बीच दृढ़ता व सफलता-पूर्वक जमे रहे। लेकिन इस काल के अन्त में अल्पसंख्यकों का फौजी अधिनायकवाद, शक्तिशाली जातियों के आपसी संघर्ष, झूठे सिक्कों का प्रचलन, भारी-भारी टैक्स, जीवन एवं सम्पत्ति की असुरक्षा, कभी-कभी ताऊन और अकाल के आक्रमण, तथा बार-बार के विद्रोह, सबने मिल कर मिस्र और उसके आश्रित सीरिया को एक दम जर्जर कर दिया। नील नदी की घाटी में अन्धविश्वास एवं जादू-टोना का बड़ा जोर था और कट्टर प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ उनको प्रोत्साहित कर रही थीं। इन परिस्थितियों में किसी ऊँचे प्रकार की बौद्धिक उन्नति की कोई आशा भी नहीं की जा सकती थी। सच तो यह है कि तेरहवीं शती के आरम्भ तक संपूर्ण अरब-जगत अपनी उस बौद्धिक श्रेष्ठता को खो चुका था, जो आठवीं शती से अरबों को ऊँचा उठाये चली आ रही थी। पीढ़ियों के निरन्तर श्रम ने उनमें मानसिक थकान उत्पन्न कर दी थी और हर ओर एक ऐसी नैतिक दुर्बलता का प्रदर्शन हो रहा था जो विशाल सम्पत्ति तथा शक्ति के संग्रह का स्वाभाविक परिणाम थी।

तेरहवीं शती के मध्य से विज्ञान की केवल दो शाखाओं—गणित-ज्योतिष जिसमें त्रिकोणमिति (Trigonometry) सम्मिलित है तथा चिकित्सा-शास्त्र-विशेष कर नेत्र-चिकित्सा, में अरबों की श्रेष्ठता शेष रह गयी थी। चिकित्सा-शास्त्र में इब्नुलनफीस का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उसने दमिश्क में शिक्षा प्राप्त की थी। काहिरा के एक अस्पताल के प्रधान के पद पर कार्य करने के बाद सन् १२८९ ई० में दमिश्क में उसकी मृत्यु हुई। उसने रक्त-परिभ्रमण संबंधी तथ्यों को स्पष्ट रूप से, पूर्वकाल के सर्वेटस [Servetus] से तीन सौ वर्ष पूर्व ही प्रस्तुत कर दिया था। इसलिए सर्वेटस को इस आविष्कार का श्रेय देना उचित नहीं है। इस काल में बहुत सी ऐसी पुस्तकें लिखी गयीं जिनमें आधे में स्त्री-रोग-विज्ञान तथा शेष में प्रेम सम्बन्धी विषय रहता था। इस प्रकार के साहित्य को हम आज कल यौन-साहित्य (Sex Books) के नाम से पुकारते हैं। प्रायः तमाम अरबी साहित्य, जिसकी शैली सदैव तुकान्त रही है, ऐसी कहानियों, मजाकों और चुटकुलेबाजियों से भरपूर हैं जो आज कल हमको अश्लील जान पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.



CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ममलूक-काल में खूँरेजी और निर्दयता का बोलबाला होते हुये भी, यह बात निस्संदेह एक सुखद आश्चर्य है, कि उस काल में असाधारण भवन-निर्माण तथा अन्य कलात्मक उत्पादन इतने प्रचुर हुए जिनका मिस्र के इतिहास में, टालिमी और फिरौनों के शासन-काल के पश्चात्, कोई उदाहरण नहीं है। तेरहवीं शती ई० में मंगोलों के आक्रमण के पहले मोसल, बगदाद और दमिश्क के मुसलमान कलाकार एवं कारीगर भाग-भाग कर मिस्र में शरण लेने लगे। इस प्रकार ममलूकों की भवननिर्माण-कला पर सीरिया और मेसोपोटामिया की कला की नयी छाप पड़ी। धर्म-युद्धों के अन्त हो जाने पर ममलूक उत्तर के पत्थर गढ़ने वाले क्षेत्र तक एक बार फिर पहुँच गये। मीनारों के निर्माण में ईंटों के स्थान पर पत्थर का प्रयोग होने लगा। मदरसे वाली मस्जिदों के निर्माण में क्रास के आकार की योजना को अत्यधिक समुन्नत किया गया। अब ऐसे गुम्बद बनने लगे जो अपने हलकेपन, अपनी सुन्दर आकृति और अपनी बहुमूल्य सजावट की तुलना नहीं रखते थे। रंगीन पट्टीदार पत्थरों की सजावट की वह शैली, जिसमें विपरीत रंगों के पत्थरों को क्रमानुसार जमाया जाता है और जो रोमनों तथा बेजें-टाइन निवासियों की कला है, मिस्र की भवन-निर्माण कला की एक विशेषता बन गयी। यह समय छतों और मेहराबों की सजावटों में नवीनता लाने के लिए भी प्रसिद्ध है। यह समय, मुस्लिम सजावट की दो शैलियों—ज्यामितीय आकारों की सजावट तथा कूफी लिखावट—के लिए भी अत्यन्त प्रसिद्ध है। (सम्पूर्ण मुस्लिमकाल में सजावट के लिए जीवधारियों की आकृतियाँ मिस्र और सीरिया में, स्पेन तथा ईरान की अपेक्षा कम स्वतंत्रतापूर्वक प्रयुक्त हुई हैं) सौभाग्य से ममलूकों की बनायी हुई इमारतों के सर्वोत्कृष्ट नमूने अभी तक विद्यमान हैं और आज भी ये ईमारतें यात्रियों तथा विद्वानों को एक-समान विशेष आकर्षित करती हैं।

चौदहवीं शती के अन्त तक ममलूकों का शासन-काल सीरिया व मिस्र का सर्वाधिक अन्धकारपूर्ण काल बन गया। इस काल के अनेक सुल्तान धोखेबाज और खूँखार थे। कुछ अयोग्य और नीच थे। और उनमें से अधिकांश असभ्य थे। सन् १४१२ ई० से १४२१ ई० तक जिस सुल्तान ने शासन किया वह बड़ा शराबी था और उसे रूस के एक सराकेसी (Circassin) व्यापारी से खरीदा गया था। इसने अपने जीवन में घोर अत्याचार किये थे। एक दूसरा सुल्तान अरबी भाषा से बिलकुल ही अनभिज्ञ था। उसने अपने दो चिकित्सकों की गर्दनें केवल इसलिये कटवा दी थीं क्योंकि वे उसको एक घातक रोग से अच्छा न कर सके थे। एक अन्य सुल्तान जो १४५३ ई० में शासक था, बिल्कुल लिख-पढ़ नहीं सकता था। उसका सचिव, सरकारी कागजों पर उसका नाम लिख देता था, और वह उस पर कलम फेर दिया करता था। और इसके ऊपर अप्राकृतिक व्यभिचार करने का भी संदेह किया जाता था। दूसरे ममलूकों के साथ बैबर्स पर भी यही आरोप था। गिलमानों का जमघट, जो अब्बासी शासन-काल की कुख्याति थी, ममलूकों के काल में भी पल रहा था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक सुल्तान केवल अपढ़ ही नहीं अपितु अर्धविक्षिप्त भी था। एक अन्य सुल्तान ने, जो ५० दीनार में खरीदा गया था, एक कीमियागर के नेत्रों को फोड़वा दिया और उसकी जबान कटवा ली थी, क्योंकि वह धातु के मैल को सोना नहीं बना सका था।

ममलूक-सुल्तानों की स्वार्थपरक नीति ने देश की आर्थिक दशा को और भी बिगाड़ दिया था। उदाहरणार्थ उनमें से एक सुल्तान ने हिन्दुस्तान से गर्म मसाले की आमद को रोक दिया था। इन मसालों में काली मिर्च भी सम्मिलित थी जिसकी माँग बहुत रहती थी। इसकी मूल्य-वृद्धि होने के पूर्व ही उसने देश में मौजूद गर्म मसाले को एकत्र करा लिया और जब मूल्य में अत्यधिक वृद्धि हुई तो उस स्टाक को अपनी प्रजा के हाथ बेच कर खूब लाभ कमाया। इसने शकर बनाने के काम पर भी एकाधिकार कर लिया था, यहाँ तक कि उसने कुछ समय के लिए गन्ने की खेती को करने की मनादी कर दी ताकि वह अधिक से अधिक लाभ कमा सके। उसके समय में मिस्र और पड़ोसी देशों में प्लेग फैला और उसके इलाज में शकर अत्यन्त आवश्यक थी। यद्यपि यह महामारी उतनी घातक नहीं थी जितना "काली मौत"† नाम की महामारी, फिर भी तीन महीने में ही केवल राजधानी में तीन लाख आदमी मर गये। उसका विचार था कि यह महामारी उसकी प्रजा के पापों का कुफल है। इसलिए सुल्तान ने आज्ञा दी कि औरतें घरों से बाहर न निकलें। और उसने यहूदियों तथा ईसाइयों से नये कर वसूल करके इस पाप का प्रायश्चित्त करने का यत्न किया।

केवल गैर-मुसलमानों से ही जबरन कर वसूल नहीं किये जाते थे। सुव्यवस्थित कर-व्यवस्था के न होने के कारण ये सुल्तान अपनी लड़ाइयों, दरबार की फिजूलखर्ची और स्मारक-भवनों का निर्माण करने के लिए अपनी प्रजा और सरकारी कर्मचारियों से बलपूर्वक रुपया वसूल करते थे। सरकारी कर्मचारी भी प्रजा को लूट-लूट कर ही मालदार होते थे। डेल्टा और पूर्वी रेगिस्तान के लुटेरे बद्दू कृषि-योग्य तंग घाटियों में बसने वाले किसानों पर बार-बार आक्रमण करते और उनकी भूमि को बिल्कुल बर्बाद किये दे रहे थे। महामारियों की भाँति टिड्डी-दल भी समय-समय पर आक्रमण करते रहते थे। अकाल एक पुरानी बीमारी सा बन गया था और जब ताऊन के समय में तथा-नील नदी में पानी की कमी के कारण अक्सर सूखा पड़ जाता था, तब दुर्भिक्ष और भी विकराल हो जाता था। ऐसा अनुमान किया जाता है कि ममलूकों के शासन-काल में मिस्र और सीरिया की जनसंख्या घट कर एक तिहाई रह गयी थी।

इस काल के अन्तिम समय में कुछ अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं ने देश की दरिद्रता और मुसीबत में और भी वृद्धि करना आरम्भ कर दिया था। सन् १४९७-९८ ई० में पुर्तगाल के नाविक वास्को डि गामा ने केप आफ गुड होप का चक्कर लगा कर अपने गन्तव्य मार्ग की खोज की थी। सीरिया और मिस्र के राज्य के इतिहास में यह घटना

† Black Death एक महामारी जो यूरोप में फैली थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थी। अब लालसागर और हिन्दमहासागर में मुसलमान-जहाजों पर पुर्तगाली और दूसरे यूरोपीय बेड़ों के आक्रमण ही नहीं आरम्भ हो गये थे, अपितु धीरे-धीरे मसालों तथा हिन्दुस्तान और अरब की उष्ण कटिबन्धीय अन्य उपजों से लदे हुए जहाजों का रुख सीरिया और मिस्र के बन्दरगाहों के बजाय दूसरे देशों की ओर हो गया और इस प्रकार राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा साधन सदैव के लिए नष्ट हो गया।

पन्द्रहवीं शती के आरम्भ में ममलूकों से भी कहीं बढ़े-चढ़े एक जंगली व्यक्ति ने सीरिया पर आक्रमण किया। तैमूर लंग, जिसका नाम बिगाड़ कर तैमर लेन (Tamerlane) कहा जाता है, सन् १३३६ ई० में, ट्रान्स-आक्सियाना [Transoxiana] में पैदा हुआ था। उसका कोई पूर्वज चंगेज खाँ के पुत्र का वजीर रह चुका था। पर इसका वंश अपने को चंगेज खाँ का ही वंशज कहता था। एक व्यंग्यपूर्ण-जावनी-लेखक का कथन है कि तैमूर गड़रिये का पुत्र था। पहले यह लूट-मार कर अपना जीवन व्यतीत करता था। एक बार भेड़ चुराते हुए पकड़े जाने पर उसकी ऐसी पिटाई हुई कि चोट के कारण वह सदैव के लिए लंगड़ा हो गया। सन् १३८० ई० में तैमूर ने तातारियों के गिरोहों को लेकर छापे मारने शुरू किये। इन छापों में उसने अफगानिस्तान, ईरान, फारस और कुर्दिस्तान पर अधिकार कर लिया। सन् १३९३ ई० में उसने बगदाद को जीता और दूसरे ही वर्ष मेसोपोटामिया को रौंद डाला। तक्रेत [Takret] जहाँ सुल्तान सलाहुद्दीन पैदा हुआ था, में उसने उन लोगों के सिरों से, जिन्हें उसने कत्ल कराया था, एक ऊँचा पिरामिड बना कर खड़ा किया। सन् १३९५ ई० में उसने वाल्गा नदी के क्षेत्रों पर आक्रमण किया और एक वर्ष तक मास्को पर अधिकार किये रहा। तीन वर्ष पश्चात् उसने उत्तरी-भारत को लूटा और दिल्ली के अस्सी हजार निवासियों को तलवार के घाट उतार दिया।

सन् १४०१ ई० में तैमूर उत्तरी सीरिया पर तूफान की भाँति चढ़ दौड़ा। हलब नामक नगर तीन दिन तक खूब लूटा जाता रहा। इस नगर के बीस हजार मुसलमानों के सिरों के दस हाथ ऊँचे और बीस हाथ की परिधि के ढेर इस प्रकार बनाये गये जिनमें उनके चेहरे सामने की ओर निकले दिखाई देते थे। शहर के बहुमूल्य स्कूल और मस्जिदें इस प्रकार नष्ट कर दी गयीं कि फिर कभी उनका पुनर्निर्माण न हो सके। हमा (Hamah), हिम्स (Hims) और बालाबक (Balabakk) नामक नगरों की भी तबाही की बारी आई। मिस्र की सेना नष्ट कर दी गयी और दमिश्क पर मुगलों का अधिकार हो गया। किले की फौज़ ने एक माह तक मुकाबिला किया। दमिश्क को बर्बाद कर सारे शहर में आग लगा दी गयी। आक्रमणकारी ने, जो नाम मात्र का शिया मुसलमान था—अपने आचरणों को अपने धार्मिक नेताओं से उचित स्वीकृत करा लिया। अमवी मस्जिद में दीवारों के अतिरिक्त कुछ शेष नहीं रहा। दमिश्क से यह बहशी विजेता, अपने कुछ अफसरों की मृत्यु का बदला लेने के इरादे से बग़दाद पर फिर झपटा और उसने यहाँ मरने वालों के सिरों से चुनवाकर १२० मीनारें खड़ी कर दीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अगले दो वर्षों में तैमूर ने एशियामाइनर पर आक्रमण किया और २१ जुलाई सन् १४०२ ई० को अंकारा के स्थान पर उस्मानी सेनाओं को कुचल दिया तथा सुल्तान बायजीद प्रथम (Bayazid I) को कैद कर लिया। उसने राजधानी ब्रूसा (Brusa) और समर्ना (Smyrna) पर भी अधिकार कर लिया। ममलूकों के राज्य के सौभाग्य से, तैमूर, दो वर्ष बाद जब वह चीन के विरुद्ध अत्यधिक महत्वाकांक्षी अभियान करने जा रहा था, मर गया। उसके उत्तराधिकारियों की शक्ति आन्तरिक झगड़ों में उलझ कर क्षीण हो गयी।

सोलहवीं शती के आरम्भ में अरब-साम्राज्य ने उस्मानो तुर्कों के हाथों आखिरी चोट खाई। उस्मानी तुर्कों का मूलस्थान मंगोलिया था। ये मध्य-एशिया में ईरानी कबीलों में घुल-मिल कर एशिया-माइनर में घुस आये। यहाँ उन्होंने अपने चचेरे भाई सल्जूकियों को गद्दी से उतार कर उन्हें धीरे-धीरे अपने में मिला लिया और चौदहवीं शती के प्रथम वर्ष में एक राज्य स्थापित कर लिया। सन् १४८१ ई० में मिस्र के सुल्तानो के लिये उस्मानी तुर्क एक बेढब समस्या बन गये। इन दो शक्तियों के बीच स्थित प्रतिद्वन्द्विता के कारण उनके जहाज एशिया-माइनर और सीरिया में एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। यह लड़ाई धीरे-धीरे बढ़ती गयी और २४ जनवरी, सन् १५१६ ई० को ममलूकों और तुर्कों की सेनाएँ हलब के निकट एक दूसरे से भिड़ गयीं। इसमें उस्मानियों की पूर्ण विजय हुई। तुर्की सेना अपेक्षाकृत अच्छे अस्त्र-शस्त्रों से लैस थी। उनके पास तोपें, बन्दूकें, और दूसरी लम्बी मार करने वाले हथियार थे। ममलूक-सेना—जिसमें बदुओं और सीरिया के दस्ते थे, इन नये हथियारों के उपयोग की अवहेलना करती थी। तुर्क कुछ समय से बारूद का प्रयोग कर रहे थे जब की सीरिया और मिस्र के सैनिक अपने इस प्राचीन सिद्धान्त में ही विश्वास करते थे कि युद्ध-स्थल में व्यक्तिगत पराक्रम ही निर्णायक होता है। उस्मानी सुल्तान सलीम ने हलब में एक विजेता के रूप में प्रवेश किया और प्रजा ने ममलूकों के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वाले के रूप में उसका स्वागत किया। सीरिया उस्मानी तुर्कों के हाथ में आगया और सीरिया से वे दक्षिण की ओर बढ़ कर मिस्र में घुस गये। एक साल के बाद ममलूकों की सल्तनत सदैव के लिये अन्त कर दी गयी। काहिरा, जो सुल्तान सलाहुद्दीन के समय से ही पूर्वी इस्लाम का केन्द्र बना हुआ था, शाही नगर के रूप से गिर कर एक साधारण प्रान्तीय स्तर का नगर बन कर रह गया। मक्का और मदीना के नगर स्वतः ही उस्मानी-साम्राज्य में मिल गये। मिस्र के इमाम, जो जुमे की नमाज पढ़ाते थे, निम्नलिखित शब्दों में ईश्वर से सुल्तान सलीम के लिए प्रार्थना करने लगे—

"ऐ मालिक ! सुल्तान के पुत्र सुल्तान, पूर्वी तथा पश्चिमी देशों एवं दोनो समुद्रों के शासक, दोनो ओर की सेनाओं के विजेता, दोनो ईराकों के शाहंशाह और दोनो पवित्र नगरों के सेवक विजयी बादशाह सलीम शाह की मदद कर। ऐ मालिक ! उसको

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुमूल्य सहायता प्रदान कर, ऐ इहलोक तथा परलोक के स्वामी ! उसको इस योग्य बना कि वह शानदार विजयें प्राप्त करे।"

कहा जाता है कि अन्तिम कठपुतली खलीफा मुतवक्किल ने अपना कार्यालय उस्मानी सुल्तान को हस्तान्तरित कर दिया था, यद्यपि इस बात का कोई पर्याप्त प्रमाण नहीं मिलता। पर इतना निर्विवाद है कि कुस्तुन्तुनिया में तुर्की शासन धीरे-धीरे खलीफा के अधिकारों पर हावी हो गया और आखिर में स्वयं को खलीफा कहलाने लगा। किन्तु यद्यपि सलीम के कुछ उत्तराधिकारी अपने आप को खलीफा कहते रहे और उनको खलीफा के नाम से सम्बोधित भी किया जाता रहा, पर इस उपाधि का प्रयोग केवल उनकी प्रतिष्ठा व्यक्त करने के लिए था और तुर्की राज्य के बाहर इस उपाधि की कोई मान्यता नहीं हो पाई। सन् १७७४ ई० की रूसी-तुर्की सन्धि वह प्रथम कूटनीतिक लेख है जिसमें खलीफा की उपाधि उस्मानी सुल्तान के लिए प्रयुक्त हुई है और उसमें तुर्की से बाहर के मुसलमानों पर भी उसका धार्मिक आधिपत्य स्वीकार किया गया है।

कुस्तुन्तुनिया का सुल्तान-खलीफा धीरे-धीरे मुसलमानों का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक बन गया। बगदाद के खलीफाओं का ही नहीं अपितु बेजेन्टाइन के साम्राटों का उत्तराधिकार भी उसे प्राप्त था। ममलूक-राज्य के विनाश तथा बासफोरस में तुर्की साम्राज्य की स्थापना से इस्लामी शक्ति का केन्द्र पश्चिम की ओर स्थानान्तरित हो गया। इस प्रकार विश्व-सभ्यता का केन्द्र भी पश्चम में पहुँच गया। अमेरिका और आशा अन्तरीप (Cape Of Good Hope) की खोज ने एक नये युग को जन्म दिया। अरब-खिलाफत और मध्य-युग के उन मुसलमान राजवंशों के इतिहास, जो अरब-साम्राज्य के खण्डहरों पर पनपे थे, के अन्त का समय आ गया। अब अरब जगत पर उस्मानियों के अधिकार का समय आरम्भ होता है।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१९—आधुनिक जगत के अरब राज्य

मध्ययुग, अंधकार-पूर्ण युग होते हुए भी अरब-जगत में अँधेरा न ला सका; किन्तु, आधुनिक युग ने वही कर दिखाया। सन् १५१७ ई० से उस्मानी शासन का आरम्भ होता है। इसके चार शतियों के शासन-काल में समस्त अरब-पूर्व (Arab-East) 'ग्रहण' की अवस्था में ग्रस्त सा रहा। अत्यन्त शक्तिशाली तथा सर्वाधिक समय तक स्थिर रहने वाले मुस्लिम राज्य के निर्माता उस्मानी तुर्कों ने केवल अरब देशों पर ही अधिकार नहीं किया, अपितु उस सम्पूर्ण क्षेत्र पर अधिकार जमा लिया जो काकेशिया से लेकर वियना के फाटक तक फैला हुआ था। ये अपनी राजधानी कुस्तुन्तुनिया से बैठे-बैठे ही सम्पूर्ण भूमध्यसागरीय क्षेत्र पर शासन चलाने लगे और पश्चिमी योरप के राजनीतिज्ञों की दृष्टि में शतियों तक एक प्रभावशाली शक्ति की भाँति छाये रहे। इसी दौरान में मदीना, दमिश्क, बगदाद, और काहिरा, जो किसी समय बड़े वैभवशाली नगर थे तथा महान साम्राज्यों की राजधानियाँ, और संस्कृति के जाज्वल्यमान केन्द्र बने थे, पिछड़ कर पूर्णतया अन्धकार के गर्त में विलीन हो गये, सूबों के गवर्नरों तथा कुस्तुन्तुनिया से भेजी गई सशस्त्र फौजों के निवास-स्थान बनकर रह गये। और ऐसा भी समय था जब इसी कुस्तुन्तुनिया नगर की चहारदीवारी पर दमिश्क और बगदाद की अरब सेनाओं ने चार-चार ऐतिहासिक आक्रमण किये थे। अब बासफोरस का नगर वर्तमान काल के प्रकाश से जगमगा रहा था।

अरबों के अतिरिक्त तुर्की के सुल्तान-खलीफाओं ने, अनेक विदेशी जातियों के लोगों, विभिन्न धार्मिक गुटों तथा विभिन्न प्रकार की भाषाई इकाइयों को तलवार के जोर से एक सूत्र में बाँध रखा था। पराजित जनता अत्यधिक कर-भार और दमन-पूर्ण शासन के कष्टों को सामान्य भाग्य-दोष मान कर झेल रही थी। इन परिस्थितियों में अरब भाषा-भाषी लोगों ने यदि कला, विज्ञान अथवा साहित्य में कोई सृजनात्मक कार्य नहीं किया तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

उस्मानी साम्राज्य, सुलेमान (Sulayman The Magnificent—सन् १५२० ई० —१५६६ ई०) के शासनकाल में अपनी उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया। यह व्यक्ति अरब-पूर्व के विजेता का पुत्र था। इस के बाद से ही उस्मानी-शासन का पतन होना आरंभ हो गया। यह काल काफी लंबा तथा कष्टप्रद रहा। सन् १६८३ ई० में तुर्कों ने वियना पर अधिकार करने की असफल चेष्टा की और इसी के पश्चात् से तुर्कों के सैनिक-शासन की नीति आक्रामक रहने के स्थान पर सुरक्षात्मक हो गयी। शान्ति के स्थान पर सदैव युद्ध की दृष्टि से राज्य का संगठन, उसके बेडौल तथा अति लंबे-चौड़े न संभाल पाने योग्य राज्य-क्षेत्र, उसकी जनसंख्या में एक दूसरे की विरोधी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जातियों का सम्मिलित होना, धार्मिक सम्प्रदायों का अपने क्षेत्र के शासन में स्वतंत्र होना, मुसलमानों, तुर्कों तथा मुसलमान-अरबों में फूट होना, सर्वोच्च सत्ता तथा शक्ति का सुल्तान-खलीफा के हाथों में केन्द्रित हो जाना, उत्तराधिकार की श्रंखला में सदैव अनिश्चितता तथा संदेह की स्थिति रहना—ये सब तुर्की साम्राज्य के ढाँचे की गंभीर तथा स्वाभाविक निर्बलताएँ थीं।

अठारहवीं शताब्दी में जब पड़ोसी और दूरस्थ रूस, आस्ट्रिया, फ्रान्स और इंग्लैण्ड जैसी शक्तियाँ ललचायी आँखों से यूरोप के इस रुग्ण व्यक्ति के राज्य की ओर देखने और उसमें विशेष लालसापूर्ण दिलचस्पी लेने लगीं तो उसी समय पतन एवं व्यभिचार की आन्तरिक शक्तियाँ भी तेजी से सिर उठाने लगीं। अरब जगत् जो किसी समय ईरान से लेकर स्पेन तक फैला हुआ था, इस समय तक सिकुड़ कर अपनी वर्तमान सीमाओं में आ गया था। ईरानी राष्ट्रीयता एवं भाषा, एक समय हुआ, जब अपने अस्तित्व की मान्यता करा चुकी थी। सन् १४५३ ई० में तुर्कों के कुस्तुन्तुनिया पर अधिकार करने के पहले ही स्पेन का इस्लामी-शासन लगभग समाप्त हो चुका था। उत्तरी अफ्रीका, मिस्र, अरब की मुख्य-भूमि और द्वितीया के चन्द्रमा के आकार का अरबी नखलिस्तान—इस सम्पूर्ण मिले-जुले क्षेत्र ने, जो अटलांटिक सागर से लेकर फारस की खाड़ी तक फैला हुआ है, आज की भाँति उस समय भी अपनी अरबी भाषा तथा इस्लामी आचरण को बनाये रखा। लेबनान ही केवल एक ऐसा देश था जहाँ शतियों से ईसाई बहुसंख्यक थे। मोरक्को के अतिरिक्त ये समस्त देश उन्नीसवीं शती के प्रारम्भिक काल तक तुर्की-साम्राज्य के अंग बने रहे।

अरब देशों में, सर्वप्रथम अल्जीरिया तुर्की साम्राज्य से अलग कर दिया गया। इस पर सन् १८३० ई० में फ्रान्सीसियों ने अधिकार कर लिया और उसको फ्रान्स का एक अविच्छिन्न अंग घोषित कर दिया। उसके बाद ट्यूनिसिया सन् १८८१ ई० में फ्रान्सीसियों के नियंत्रण में आ गयीं। सन् १९१२ ई० तक दक्षिणी यूरोप की तीन लैटिन शक्तियों—फ्रान्स, स्पेन और इटली—ने मोरक्को से लीबिया तक के सम्पूर्ण क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। सन् १९५९ ई० तक अल्जीरिया को छोड़कर अन्य सभी देशों ने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है। यह क्षेत्र सर्वप्रथम अरब मुस्लिम-जगत से पृथक् होकर पश्चिमी प्रभाव-क्षेत्र में आ गये और चूँकि अपनी भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से ये देश इस्लामी देशों के चारो ओर घेरे के समान स्थित हैं तथा उनकी जनसंख्या में गैर-अरबों की भी बहुत बड़ी संख्या है, इन कारणों ने वहाँ के निवासियों को राष्ट्रीयता के सङ्गठन से छिन्न-भिन्न कर दिया और उन्हें अपना स्वच्छन्द मार्ग अनुसरण करने का अवसर प्रदान किया। अरब राष्ट्रीता का मस्तिष्क तथा केन्द्र सदैव पश्चिमी एशिया और मिस्र में रहा है। भौगोलिक दृष्टि से मिस्र अफ्रीका महाद्वीप का ही एक भाग है, किन्तु ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से उसे पश्चिमी एशिया का अंग ही मानना उचित होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह क्षेत्र, जिसमें पश्चिमी एशिया और मिस्र सम्मिलित हैं, सचमुच या नाममात्र को उस्मानी साम्राज्य के अन्तर्गत प्रथम विश्व-युद्ध तक रहा। विश्व-युद्ध में मिस्र ने, जिस पर सन् १८८२ ई० से ब्रिटिश अधिकार चला आ रहा था, कुस्तुन्तुनिया से अपना अन्तिम सम्बन्ध भी तोड़ लिया। हजरत मुहम्मद साहब के एक वंशज, मक्का के शरीफ हुसैन ने भी इस अवसर से लाभ उठाया और तुर्की साम्राज्य से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया। उसने दूसरे अरबों को भी विद्रोह के लिये उत्तेजित किया और मक्का में अपने नेतृत्व में एक दूसरी खिलाफत की स्थापना करने का स्वप्न देखने लगा। जब मुस्तफा कमाल ने उस्मानी खिलाफत का अन्त कर दिया, उस समय सन् १६२४ ई० में अरब के इस बादशाह ने अपने आप को मुसलमानों का खलीफा घोषित कर दिया।

तुर्की से स्वतंत्र हो कर एक आधुनिक अरब-साम्राज्य स्थापित करने का यह द्वितीय प्रयास था। विगत शती की तृतीय दशाब्दी में मुहम्मद अली जो मिस्र का वायसराय था तथा उस राज-वंश की नींव डालने वाला था जो बाद में १५० वर्ष तक चलता रहा, ने एक इसी प्रकार का यत्न किया था। ये दोनो ही यत्न बिना पूरी तैयारी के असमय में किये गये और इनके पीछे जनता की राजनीतिक चेतना का कोई ठोस आधार नहीं था। इसके अतिरिक्त उनके ये प्रयास निकट- पूर्व में ब्रिटिश तथा दूसरे यूरोपीय देशों के स्वार्थों से भी टकराते थे। इसका यह परिणाम हुआ कि शरीफ-हुसैन को अपने पैतृक राज्य से हाथ धोना पड़ा। नज्द के अत्यधिक परंपरावादी और कट्टर धार्मिक वहाबियों के अत्यन्त कुशल तथा प्रबल नेता इब्न सऊद ने शरीफ हुसैन को निकाल बाहर किया। सन् १६०० ई० से सन् १६२५ ई० के बीच में रेगिस्तान के इस शाहजादे ने अपने लिए एक बड़ा साम्राज्य प्राप्त कर लिया जो फारस की खाड़ी से लेकर लालसागर तक फैला हुआ है। हजरत मुहम्मद साहब के समय के बाद से आज तक इस प्रायद्वीप में इससे बड़े राज्य की स्थापना कभी भी नहीं हो सकी। इस प्रकार सन् १६३२ ई० में सऊदी अरब के राज्य का प्रादुर्भाव हुआ। यमन, जो सऊदी अरब के दक्षिण में उसका एक पड़ोसी देश है, प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान में तुर्कों की दासता से मुक्त हो गया। इसके धार्मिक-शासक इमाम यहिया, जिसने इस देश को स्वतंत्र कराया था, सन् १६४८ ई० में शाही महल के एक षड्यंत्र का शिकार हो गया। वर्तमान अरब में इमाम यहिया का पुत्र इमाम अहमद और बादशाह सऊद यही दो शासक हैं जो पूर्णतया स्वतंत्र हैं। शेष प्रायद्वीप पर देशी शेख और सुल्तान, जो ब्रिटेन के साथ सन्धि द्वारा बँधे हैं, शासन कर रहे हैं। यमन और उससे किसी हद तक कम, सऊदी अरब पश्चिमी विचारों से बिल्कुल पृथक और दूर रहे। आधुनिकीकरण की बढ़ती हुई लहर, जिसने पूरी दुनिया को अपने घेरे में ले लिया है, इन देशों को अछूता रखकर, समुद्री तटों के आगे निकल गयी। विगत बीस वर्षों में सऊदी अरब, कुवैत (Kuwayt) और बहरेन (Bahrayn) में तेल-संग्रह के बड़े-बड़े

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सोतों की खोज हो जाने से इस क्षेत्र का सैनिक तथा कूटनीतिक महत्त्व बहुत बढ़ गया है और यहाँ के शासक अपार सम्पत्ति के स्वामी बन गये हैं।

प्रथम विश्व-युद्ध के परिणामस्वरूप सीरिया और लेबनान फ्रान्सीसियों की संरक्षता (मैनडेट) में आगये। यह संरक्षता द्वितीय विश्व-युद्ध के अन्त तक बनी रही। सन् १६४८ ई० तक फिलिस्तीन ब्रिटेन की संरक्षता में रहा। जार्डन, जिसका राजनीतिक जीवन भी एक ब्रिटिश-संरक्षित क्षेत्र के रूप में आरम्भ हुआ था, में अब अब्दुल्ला का पौत्र—[ईराक के फैसल (Faysal) का बड़ा भाई और हिजाज के हुसैन का पुत्र] युवकोचित शक्ति-सम्पन्न हुसैन शासन कर रहा है। सन् १६४६ ई० में ट्रान्सजोर्डन का अमीर जोर्डन का राजा घोषित हुआ था। "फैसल" (Faysal) सीरिया के तत्काल बने राज्य के सिंहासन पर कुछ महीनों तक बैठा। शीघ्र ही फ्रान्सीसियों ने उसे गद्दी से उतार दिया और फिर सन् १६२१ ई० में अंग्रेजों ने उसको ईराक की गद्दी पर बैठा दिया। ईराक वह देश है जिसने अपने आप को आदेशात्मक शक्ति (Mandatory Power) के नियंत्रण से पूर्ण स्वतंत्र करा लिया। यह सन् १६३० ई० में स्वतंत्र हो गया था। इसी बीच एक सन्धि के द्वारा वह इंग्लैण्ड के साथ बँध गया। इसके ६ वर्ष बाद ऐसी ही एक सन्धि के द्वारा मिस्र को भी इंग्लैण्ड के साथ बाँध दिया गया जिसके फलस्वरूप इंगलैण्ड को इन देशों में विशेषाधिकार प्राप्त थे। जुलाई सन् १६५८ ई० में यहाँ के राजवंश को एक सैनिक विद्रोह ने उलट दिया।

इन समस्त देशों में, मिस्र ने सर्वप्रथम नव-जीवन की तड़प का अनुभव किया। उसको यह प्रेरणा पश्चिम से सन् १७६८ ई० में उस समय मिली जब नेपोलियन ने इस देश पर आक्रमण किया था। फ्रान्सीसी सम्राट् अपने दूसरे साजो-सामान के साथ एक अरबी प्रेस भी लाया था जो उसे वेटिकन की लूट में मिला था। इसने अपने विद्वानों की सहायता से एक प्रकार के साहित्य-निकेतन की स्थापना की। नील की घाटी में यह अपने ढंग का पहला प्रेस था। इस प्रेस का स्थान प्रसिद्ध बलाक प्रिंटिंग इस्टैब्लिशमेण्ट ने ले लिया जो आज भी एक व्यापारी संस्था के रूप में चल रही है।

नेपोलियन के बाद, वर्तमान मिस्र के जनक मोहम्मद अली ने, पूर्व और पश्चिम के बीच अचानक होने वाले सम्बन्धों की सम्भावनाओं का अनुभव कर, तदनुकूल योजना बनायी। उसने छात्र-दलों को शिक्षा के लिये यूरोप भेजा और यूरोपीय, विशेष कर फ्रान्सीसी दलों को, मिस्र के लिये अपने अफसरों तथा विद्वानों को प्रशिक्षित करने के लिए आमंत्रित किया।

जब सन् १८३१ ई० में मिस्र के वाइसराय ने, अरबी भूमि के साम्राज्य के अपने स्वप्न को पूरा करने के उद्देश्य से, सीरिया पर अधिकार करने के लिये अभियान किया तब उसने भूमध्यसागरीय सम्पूर्ण पूर्वी सीमा को यूरोपीय संस्कृति से प्रभावित होने के लिए प्रोत्साहन दिया। प्रोटेस्टेण्ट ईसाई मिशनरियों ने जिनमें अधिकतर अमेरिकन थे, इसी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समय सीरिया में अपना सुदृढ़ स्थान बना लिया। सन् १८३४ ई० में बेरूत में, जो इस समय लेबनान की राजधानी है, अमेरिकन प्रेस की स्थापना हुयी। यह सीरिया का भलीभाँति सुसज्जित प्रथम प्रेस था। तीन साल के बाद स्थानीय प्रोटेस्टैण्ट गिरजाघर की स्थापना हुई। प्रतिबन्ध की अवधि के उपरात जेसूट फिरके के प्रतिनिधि उसी समय लेबनान लौटे थे। सन् १८५३ ई० में बेरूत में उनके कैथोलिक-प्रकाशन की नींव डाली गयी। ये दोनो प्रेस अभी तक अत्यधिक साज-सज्जा के साथ कार्य कर रहे हैं। ये बाइबिल के दो आधुनिक अरबी अनुवाद निकाल चुके हैं। अंग्रेजी और फ्रान्सीसी ग्रन्थ अरबी संस्करणों में बहुत बड़ी संख्या में निकल कर व्यापक हो गये हैं। अमेरिकन मिशनरियों ने सन् १८६६ ई० में सीरिया के प्रोटेस्टैण्ट कालेज की स्थापना की। यह कालेज अब बेरूत का अमेरिकन विश्वविद्यालय बन गया है। आठ वर्ष के पश्चात् शहर के दूसरी ओर सेंट जोजेफ के विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। ये दोनो विश्वविद्यालय आज भी शैक्षिक नेतृत्व की स्थिति को संभाले हुए हैं। इस बीच में असंख्य स्कूल, छापेखाने, समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ और साहित्यिक एवं वैज्ञानिक संस्थाएँ सब ओर और खासकर लेबनान में स्थापित हो चुके हैं।

समुद्र के किनारे के इस पहाड़ी क्षेत्र का, फोनेशिया, रोमन तथा बेजेण्टाइन वालों के शासन-काल के समय से ही पश्चिम की ओर झुकाव रहा है। अपने दो देशी राजकुमारों फखरुद्दीन मानी (Fakhr-Al-Din Al-Mani, १५६०-१६३५) और बशीर अल-शहाबी [Bashir Al-shihabi—१७८८-१८४०] के नेतृत्व में इस क्षेत्र ने उस्मानी राज्य से अर्द्ध-स्वतंत्रता प्राप्त की और इसी समय में इटली, फ्रान्स और ब्रिटिश संस्थाओं से महत्वपूर्ण सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित किये। मुहम्मद अली से बहुत पहले लेबनान के फखरुद्दीन ने यूरोपीय व्यापारियों विशेष कर फ्रैंकों और फ्लोरेण्टाइन के मिस्त्रियों को लेबनान में खंभे ढालने के लिये प्रोत्साहन दिया और टस्कैनी (Tuscany) से कृषि-विशेषज्ञों के दलों को आमंत्रित किया था। तुर्की के सुल्तान-खलीफा ने फखरुद्दीन और बशीर दोनो को देश-निकाला दे दिया और इन दोनो की मृत्यु कुस्तुन्तुनिया में हुई। फखरुद्दीन की तो हत्या कर दी गयी थी।

दुरूज [Druzes] और मैरून [Maronites] नामक कबीलों के बीच तुर्की खलीफा द्वारा भड़काये गये गृह-युद्ध के फलस्वरूप सन् १८६० ई० का प्रसिद्ध कत्लेआम हुआ। इस के बाद लेबनान ने पूर्णसत्तासम्पन्न शासन प्राप्त किया। इस समय यहाँ का शासन-सूत्र एक ईसाई गवर्नर के हाथ में था। और इस शासन की सुरक्षा की जिम्मेदारी महान यूरोपीय शक्तियों ने स्वीकार की थी। इस प्रकार स्वशासित राज्य ने पश्चिमी यूरोप से आने वाले विचारों के प्रवाह तथा उनसे प्रेरणा प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। पहाड़ की अधिकांश जन-संख्या ईसाई थी जो उन विचार-धाराओं को स्वीकार करने के लिए पहले से ही तैयार थी और उनसे प्राप्त प्रेरणा के अनुकूल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कार्य करने के लिए तत्पर थी। उन्नीसवीं शती के मध्य के बाद से लेबनान के बहुत से निवासी, अपने पूर्वजों की भाँति संसार के विभिन्न सभ्य क्षेत्रों में जाकर बसने लगे। अमेरिका के प्रति लेबनान-वासियों में विशेष आकर्षण था। यहाँ से यद्यपि सीरिया तथा लेबनान के आये हुए लोगों ने यहाँ से अपनी मातृभूमि को आधुनिक उदार विचारों को पहुँचाने के लिए नया मार्ग बनाया। शीघ्र ही लेबनान आधुनिकीकरण और कल्याणकारी राज्य की स्थापना की दौड़ में अपने पड़ोसी देशों से बहुत आगे बढ़ गया।

उन्नीसवीं शती के आरंभ में पश्चिम का जो प्रभाव पूर्व पर पड़ने लगा वह पूर्व के आधुनिक इतिहास में बड़ी सम्भावनाओं से युक्त है। इसके आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, और बौद्धिक स्तरों पर एक साथ चलने वाले झगड़े, और वह द्रुत-विकास, जो पुराने समाज को नया रूप देने के लिये तेजी से चल रहे हैं, विकास-क्रम के ही अंग हैं। नये विचारों के अनुरूप अपने को ढालने के मार्ग में अनेक ऐसी गंभीर एवं जटिल समस्याएँ हैं जिनका कोई समाधान अभी बहुत दूर है।

पश्चिम से जिन अगणित विचारों को ग्रहण किया गया उनमें से राष्ट्रीयता और राजनीतिक प्रजातंत्र सबसे अधिक शक्तिशाली उपादान बने। राष्ट्रीयता के वरण ने अरबों में स्वतंत्रता के लिये संघर्ष करने की उत्कट भावना उत्पन्न की और इस तरह अतीत से निस्संदेह सम्बन्ध-विच्छेद की नौबत आगयी।

अरबों में राष्ट्रीय जाग्रति, एक विशुद्ध बौद्धिक आन्दोलन के रूप में आरम्भ हुआ। इस आन्दोलन का नेतृत्व अधिकतर सीरिया के बुद्धि-जीवियों ने, विशेष रूप से उन लेबनानी ईसाइयों ने किया जो बेरूत के अमेरिकन विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर आज मिस्र को ही अपना कार्य-क्षेत्र बनाये थे। इस आन्दोलन का प्रारंभिक उद्देश्य शास्त्रीय अरबी भाषा एवं साहित्य में सर्वसाधारण की अभिरुचि उत्पन्न करना तथा इस्लाम के इतिहास की खोज करना था। शिक्षित लोगों में शीघ्र ही, अरब-साम्राज्य के अतीत-कालीन वैभव, सांस्कृतिक एवं अन्य क्षेत्रों में उनकी महान सफलताओं और विश्व को अरबों की देन के संबंध में चेतना जाग्रत हुयी। अतीत के इस अध्ययन ने आगे बढ़ने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। बौद्धिक चेतना के उपरान्त राजनीतिक चेतना जाग्रत हुयी और इतिहास में प्रथम बार अरब समाज को पुनर्गठित और पुनर्जीवित करने का विचार दृढ़ता के साथ चारों ओर फैलने लगा। इस प्रकार राजनीतिक निष्क्रियता का स्थान राजनीतिक कर्मठता ने ग्रहण कर लिया।

अरब राष्ट्रीयता की व्याख्या अत्यन्त विस्तृत थी। उसका बुनियादी सिद्धान्त यह था कि समस्त अरबी-भाषियों को चाहे वे किसी धर्म के अनुयायी हों, भाषा एवं समान संस्कृति के आधार पर एक सूत्र में संगठित कर लिया जाय। यह प्रयत्न समस्त अरबों को संगठित करने के लिए था न कि समस्त मुसलमानों को! जब यह आन्दोलन आगे बढ़ा तो उसने गंभीर स्थानीय समस्याओं का सामना किया, किन्तु इस प्रकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसका मुख्य मार्ग ही बदल गया। मिस्रियों को जिस कठिनाई का सबसे पहले सामना करना पड़ा वह अंग्रेजों का मिस्र पर आधिपत्य था, जो सन् १८८२ ई० से चला आ रहा था। मिस्रियों की सारी शक्ति और बुद्धि अंग्रेजी शासन से लोहा लेने में खर्च होने लगी। इसी काल में मिस्री राष्ट्रीयता, 'सब अरब एक हैं' (Pan-Arabism) के वर्धमान खेमे से निकल गयी और प्रान्तीय तथा स्थानीय समस्याओं के समाधान में लग गयी। आधुनिक काल में प्रथम बार मिस्रियों में अपनी राष्ट्रीयता का अभिमान जाग्रत हुआ। फलतः 'मिस्र मिस्रियों के लिए है' उनका युद्ध-घोष बन गया।

प्रथम विश्व युद्ध के कारण अरब-पूर्व अनेक टुकड़ों में बँट गया और इसी कारण 'एक-अरब-राष्ट्रीयता' भी और अधिक विभाजनों का शिकार हो गयी। सीरिया में अरब-राष्ट्रीयता को अपनी पूरी शक्ति तुर्कीकरण की नीति के विरुद्ध लगानी पड़ी तथा बाद में फ्रान्सीसी मैन्डेट के लाद दिये जाने के उपरान्त वही शक्ति फ्रान्सीसी साम्राज्य-वाद से टक्कर लेने लगी। इसी प्रकार पैलेस्टाइन में ब्रिटिश मैंडेट और उसी से संयुक्त यहूदीवाद के विरुद्ध संघर्ष ने वहाँ भी स्थानीय ढंग की राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया। लेबनान, जिसका झुकाव आरम्भ में मैन्डेट के अनुकूल था, आगे चल कर उसका उग्र विरोधी बन गया और इस प्रकार लेबनानी राष्ट्रीयता का उदय हुआ। लेबनान और सीरिया से सन् १९४३ ई० से लेकर सन् १९४५ ई० तक के समय में मैन्डेट के अवशिष्ट अधिकारों का भी अन्त हो गया। 'द्वितीया के चन्द्रमा के सदृश' अरब भूखण्ड के दाहिने बाजू में सन् १९२० ई० में एक ईराकी राष्ट्रीयता का जन्म हुआ। इसका जन्म बड़ी हद तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध उत्पन्न प्रतिक्रिया के कारण हुआ। ट्रान्सजोर्डन का छोटा सा क्षेत्र, जो इसके पूर्व कभी भी एक स्वतंत्र इकाई के रूप में नहीं था, सन् १९२१ ई० में अंग्रेजों ने इसे दक्षिणी सीरिया से काट कर, अमीर अब्दुल्ला के अधीन एक नया राज्य स्थापित कर दिया।

इस प्रकार, उस्मानी साम्राज्य के अग ये अरब-खण्ड एक-एक करके, दो विश्व-युद्धों के बीच में, अलग होते गये और पूर्ण स्वतंत्र राष्ट्र अथवा लगभग स्वतंत्र राष्ट्रों का रूप धारण करते गये। लेकिन द्वितीय विश्व-युद्ध और यूहूदीवाद का आतंक, जिसको प्रत्येक स्थान के अरब, गड़बड़ी उत्पन्न करने वाला आन्दोलन मानते थे, इन समस्त भागों को पुनः संगठित करने में सहायक हुआ। सब के समान हितों की रक्षा तथा एकता की उत्कट भावना के फलस्वरूप 'अरब-लीग' की स्थापना हुयी, जिसकी सन्धि पर मार्च, सन् १९४५ ई० में काहिरा में हस्ताक्षर हुए। अरब लीग के संस्थापक-सदस्य मिस्र, ईराक, सऊदी अरब, यमन, लेबनान, सीरिया और जोर्डन थे किन्तु आगे चल कर इसमें लीबिया, ट्यूनिसिया, मोरक्को और सूडान भी सम्मिलित हो गये। इन देशों में जार्डन और लीबिया में वैधानिक राजतन्त्र (Constitutional Monarchies) और उनकी निर्वाचित संसदें (Elected Parliament) हैं। लेबनान और ईराक में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रजातंत्रीय शासन है। सन् १६५२ ई० में मिस्र ने अपने राजतंत्र को समाप्त कर दिया और अपने आप को गणतंत्र घोषित कर दिया। सन् १६५८ ई० में मिस्र ने सीरिया के साथ मिलकर 'संयुक्त अरब गणतंत्र' (United Arab Republic) की स्थापना की।* ये समस्त देश संयुक्त राष्ट्र संघ के नये सदस्य हैं और इनमें अधिकांश देशों के राजनीतिक प्रतिनिधि लन्दन, वाशिंगटन और पेरिस में रहते हैं।

तीसरे एकेश्वरवादी धर्म के प्रवर्तक और पूर्ववर्त्ती दो धर्मों से धार्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत का लाभ उठाने वाले, पश्चिम की भाँति ही, यूनानियों और रोमनों की सांस्कृतिक परम्पराओं में भागीदार, संपूर्ण मध्ययुग में नवजागरण की ज्योति को जगाने वाले, यूरोपीय पुनर्जागरण को महत्वपूर्ण योग प्रदान करने वाले—अरबी भाषा-भाषियों ने, विश्व के अग्रगामी प्रजातंत्रीय राष्ट्रों की पंक्ति में अपना स्थान प्राप्त कर लिया है और निस्सन्देह मानव-प्रगति के महत्वपूर्ण कार्य में उनसे बड़ी-बड़ी आशाएँ की जा रही हैं।

---

* अभी १६६१ के लगभग मध्य में ही सीरिया ने अपने को 'संयुक्त अरब गणतंत्र' से अलग कर लिया है। अब वह एक प्रथक स्वतंत्र राज्य है। इसी प्रकार अरब भाषा-भाषी क्षेत्र में नयी जागृति के फलस्वरूप और भी उथल-पुथल तथा परिवर्तन हुये हैं और होने की संभावना है। विद्यार्थियों के लिये जरूरी है कि समाचार-पत्रों एवं राजनीति के विद्वानों से ताज़ी स्थिति का ज्ञान प्राप्त करते रहें।

हमेशा नये टाइप में

अपने साहित्य को सुन्दर व आकर्षक छपाने के लिये संपर्क स्थापित करें

सदैव नया टाइप, कंपोज़िंग, प्रिंटिंग की अपूर्व सुविधा

वर्णमाला टाइप फाउण्ड्री

रानीकटरा, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२०—प्रदर्शिका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

—:) ❖ (:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामायण कृत्तिवास हिन्दी में

(उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत)

श्री गोस्वामी तुलसीदासजी से कई सौ वर्ष पूर्व बंग की पुनीत भूमि में भक्त-शिरोमणि महासंत कृत्तिवास की मंजुल वाणी से प्रवाहित सलिल मुग्धकारी काव्य 'रामायण-कृत्तिवास' का हिन्दी में सरल दोहा-चौपाई में उत्कृष्ट नूतन रूपांतर हिन्दी-साहित्य के लिए एक अद्भुत नई देन है। कृत्तिवास रामायण में सन्त ने वाल्मीकीय, भागवत, योगवाशिष्ठ, अध्यात्म, आनन्द, महारामायण आदि अनेक रामायणों के आधार पर कुतूहल उत्पन्न करनेवाले नाना कथाप्रसंगों का वर्णन किया है। अनेक नई कथाओं की भरमार है। पाठकों को प्राचीन साहित्य के एक अद्भुत नवीन ग्रन्थ का आनन्द प्राप्त होगा। आ. का.— मूल्य ६), डाक-खर्च १।)

संपूर्ण बंकिम-साहित्य

अनुवादक तथा संपादक—साहित्यमनीषी स्व० पं० रूपनारायण पाण्डेय

आनन्दमठ २)	देवी चौधरानी २)	विषवृक्ष २)
मृणालिनी २)	राधारानी ॥)	चन्द्रशेखर २)
दुर्गेशनंदिनी २)	युगलांगुरीय ॥)	राजमोहन की स्त्री २)
इन्दिरा २)	कमलाकांत का पोथा २)	नवाबनंदिनी ४)
रजनी २)	बंगशार्दूल सीताराम २)	मृण्मयी ३)
लोक-रहस्य २)	कपालकुण्डला २)	राजसिंह २॥)

कृष्णकांत का वसीयतनामा २)

टाम काका की कुटिया—(संक्षिप्त) अफ्रीकी गुलाम-व्यापार की दर्दनाक कहानी। मूल्य १॥)

सम्राट् नीरो—सामन्तवादी युग के रोमन साम्राज्य के अत्याचारों का रोमाञ्चकारी उपन्यास 'को-वाडिस' का हिन्दी रूपान्तर। मूल्य ४॥)

हरिश्चन्द्र—टीका सहित सचित्र पद्य-आख्यान। मू० १)

हमारा समाज—व्यंग्यात्मक नाटक (स्त्री पात्र रहित); मू० ।॥)

सचित्र बाल साहित्य—चण्ट चौकड़ी ।–) डायन राजरानी ।–) महाराज कपालफोड़ ।–) मायावी सपेरा ।–)

रमणी रत्नावली-सचित्र, राज्यश्री ॥=) गार्गी ॥=) गढ़मण्डल की रानी ॥=)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी में 'इस्लामी साहित्य'

तर्जुमा कुरान शरीफ

"विश्व के एक बड़े जन-समुदाय का सर्वमान्य ईश्वरीय धर्मग्रन्थ। आज से १४०० वर्ष पूर्व अरब मरु-स्थल की अपौरुषेय क्रान्ति, तत्कालीन समाज का जीता-जागता चित्र, रूढ़ियों को हटाकर सुधार की ओर प्रगति आदि, सभी मुस्लिमों तथा गैर-मुस्लिमों के पढ़ने-देखने योग्य। मूल्य आठ रुपया मात्र। डाक व्यय अलग।

'अरब' एक संक्षिप्त इतिहास —प्रो० हिट्टी मू० ८)

संक्षिप्त जीवन-चरित्र

हजरत अबूबकर ०.३७ न० पै० हजरत उमर ०.३७ न० पै०
,, उस्मान ०.३७ न० पै० ,, अली ०.३७ न० पै०
पारह अम्म (अरबी मूल देवनागरी अक्षरों में) ०.३७ न० पै०
कुरान पर एक दृष्टि ०.३१ न०पै०

स्वामी रामतीर्थ-साहित्य

१. यथार्थ समाजवाद २)
२. गृहस्थ-धर्म २)
३. व्यावहारिक वेदान्त २)
४. विश्व-धर्म २)
५. राष्ट्रीय धर्म २)
६. सफलता-सोपान २)
७. नक़द धर्म २)
८. विज्ञान-रहस्य २)
९. विश्व-बन्धुत्व २)
१०. स्वामी रामतीर्थ के पत्र २)



श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टेक्निकल-साहित्य (सचित्र)

भारतीय कृषि विज्ञान—चार खण्ड सम्पूर्ण, कृषि संबंधी यन्त्रों, प्रक्रियाओं एवं तालिकाओं के विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन, अगणित चित्रों से युक्त अपूर्व ग्रन्थ। लेखक—श्री चन्द्रनाथ मिश्र। मूल्य ७॥)

वैज्ञानिक पशुपालन व चिकित्सा—(सचित्र) गाय-बैल, भैंस; भेंड़, बकरी, घोड़ा, ऊँट, कुत्ता, हाथी आदि पालतू पशुओं की पालन-विधि, रोगों के निदान और चिकित्सा-सूत्र के साथ आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं एलोपैथिक औषधियों के अनुभूत नुस्खे सरल भाषा में अधिकारी विद्वानों द्वारा, इस नवीन पुस्तक में संग्रह किये गये हैं। मूल्य तीन रुपये मात्र।

हमारा भोजन—उत्तरप्रदेश राज्य द्वारा पुरस्कृत। लेखक—डा० ज्ञानेन्द्र नाथ शुक्ल, मूल्य १॥)

लोहारी-शिक्षक—पचासों चित्रों से युक्त। लेखक—मास्टर बाबूलाल विश्वकर्मा, मूल्य १।)

मिट्टी का शिल्प—कुम्हारी-विद्या पर, बहुसंख्यक चित्रों सहित, नवीन पुस्तक। लेखक—श्री चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु, मूल्य १॥)

बाँस-बेत और पत्तों का काम—श्री राजेश दीक्षित द्वारा कुटीर-उद्योग पर लिखित, यह सचित्र पुस्तक अपूर्व है। मूल्य १।)

कागज के हुनर—(सचित्र), कला-अध्यापक श्री राजकुमार सैगल द्वारा लिखित यह पुस्तक अत्यन्त सरल एवं बेजोड़ है। मूल्य १॥)

सा-रे-ग-म—संगीत-शास्त्र पर अनूठी पुस्तक। मूल्य २॥)

कत्थक-नटवरी-नृत्य—नृत्य एवं भाव-मुद्राओं के विविध चित्रों से युक्त अपूर्व पुस्तक, मूल्य ३॥)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टेक्निकल-साहित्य (सचित्र)

भारतीय कृषि विज्ञान—चार खण्ड सम्पूर्ण, कृषि संबंधी यन्त्रों, प्रक्रियाओं एवं तालिकाओं के विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन, अगणित चित्रों से युक्त अपूर्व ग्रन्थ। लेखक—श्री चन्द्रनाथ मिश्र। मूल्य ७॥)

वैज्ञानिक पशुपालन व चिकित्सा—(सचित्र) गाय-बैल, भैंस; भेंड़, बकरी, घोड़ा, ऊँट, कुत्ता, हाथी आदि पालतू पशुओं की पालन-विधि, रोगों के निदान और चिकित्सा-सूत्र के साथ आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं एलोपैथिक औषधियों के अनुभूत नुस्खे सरल भाषा में अधिकारी विद्वानों द्वारा, इस नवीन पुस्तक में संग्रह किये गये हैं। मूल्य तीन रुपये मात्र।

हमारा भोजन—उत्तरप्रदेश राज्य द्वारा पुरस्कृत। लेखक—डा० ज्ञानेन्द्र नाथ शुक्ल, मूल्य १॥)

लोहारी-शिक्षक—पचासों चित्रों से युक्त। लेखक—मास्टर बाबूलाल विश्वकर्मा, मूल्य १)

मिट्टी का शिल्प—कुम्हारी-विद्या पर, बहुसंख्यक चित्रों सहित, नवीन पुस्तक। लेखक—श्री चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु, मूल्य १॥)

बाँस-बेत और पत्तों का काम—श्री राजेश दीक्षित द्वारा कुटीर-उद्योग पर लिखित, यह सचित्र पुस्तक अपूर्व है। मूल्य १।)

कागज के हुनर—(सचित्र), कला-अध्यापक श्री राजकुमार सैगल द्वारा लिखित यह पुस्तक अत्यन्त सरल एवं बेजोड़ है। मूल्य १॥)

सा-रे-ग-म—संगीत-शास्त्र पर अनूठी पुस्तक। मूल्य २॥)

कत्थक-नटवरी-नृत्य—नृत्य एवं भाव-मुद्राओं के विविध चित्रों से युक्त अपूर्व पुस्तक, मूल्य ३॥)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.